वै.व.5, 2073
Kailashnagar
Surat

श्री आवश्यक सूत्र

Date :

मलयगिरीय टीका अव. ९. क्व द्वार पूर्ण। १०. केषु द्वार — (देखें मूलद्वार गा.137-8 भा.1)
किन द्रव्य या पर्यायों में सामायिक है —

गा.830 सम्यक्त्व, श्रुत और चारित्र सामायिक सर्वगत है किंतु सर्व पर्याय में नहीं। देशविरति की अपेक्षा से दोनों का प्रतिषेध होगा।

★ सर्वगत यानि सर्व द्रव्य में रहा है।
सम्यक्त्व सामायिक सर्वद्रव्य-पर्याय की रुचि रूप होने से वह सर्वगत है।
श्रुतसामायिक सर्वद्रव्य विषयक है तथा चारित्र सामायिक का विषय गा.791 में सर्व द्रव्य बताया है।

★ 'सर्व पर्याय में नहीं' —
सम्यक्त्व के सर्व द्रव्य-पर्याय विषय हैं।
श्रुत के सर्व द्रव्य विषय हैं, सर्व पर्याय नहीं क्योंकि वह अभिलाप्य पर्यायों विषयक है।
चारित्र का विषय 'पढमंमि सव्वजीवा' गा.791 में सर्वद्रव्य और असर्वपर्याय कहे गए हैं।

★ 'देशविरति... प्रतिषेध होगा'। — देशविरति का विषय सर्वद्रव्य भी नहीं है, सर्व पर्याय भी नहीं।

★ प्र. यह सम्यक्त्व का विषय पहले किंद्वार में कहा गया, यहाँ पुन: क्यों कहा?
उ. पहले विषय-विषयी के अभेद से सामायिक को ही द्रव्य और गुणरूप कहा था। अब भेद से सामायिक को ज्ञेयभाव से विषय कहते हैं।

अव. १०. केषु द्वार पूर्ण। ११. कथं द्वार — सामायिक कैसे प्राप्त होती है?
चारों प्र. की सामायिक मनुष्यत्वादि होने पर प्राप्त होती है अतः उसके क्रम की दुर्लभता कहते हैं —

गा.831 मनुष्यत्व, क्षेत्र, जाति, कुल, रूप, आरोग्य, आयु, बुद्धि, श्रवणावग्रह, श्रद्धा, संयम — लोक में दुर्लभ हैं।
क्षेत्र = आर्यक्षेत्र। जाति = माता संबंधी। कुल = पिता संबंधी। रूप = अन्यून अंग।
श्रवणावग्रह = साधुओं का अवग्रह।

Date :

अब. मनुष्यत्व की दुर्लभता के दृष्टांत -

गा.832 चोल्लक, पासे, धान्य, जूआ, रत्न, स्वप्न, चक्र, चर्म, युग, परमाणु - ये 10 दृष्टांत हैं।

1. चोल्लक - ब्रह्मदत्त चक्री के ब्राह्मण मित्र का भोजन।
ब्रह्मदत्त को एक कार्पटिक मित्र था x बहुत आपत्ति और अवस्थाओं में सहायक हुआ x ब्रह्मदत्त राजा बना x 12 वर्ष अभिषेक चला x कार्पटिक को वहाँ प्रवेश भी न मिला x उसने उपाय किया - जूते को ध्वजा में बांधकर ध्वजा वहन करने वालों के साथ चला x राजा देखकर हाथी से उतरकर भेटा x अन्य मत - द्वारपाल की सेवा करते-करते 12 साल बाद राजा देखा x राजा ने पूछा - क्या दूँ ? x ब्राह्मण - पूरे भरत में घर-घर पर चोल्लक दो x राजा - इससे क्या? तुझे ऋद्धि दूँगा x उसने मना किया x पहले दिन राजा के घर जिमा, एक जोड़ी कपड़े और दीनार दी x अनेक नगरों में 32000 राजा, करोड़ों घर का अंत कब होगा ? अर्थात् नहीं होगा।
वह कभी अंत होगा किंतु मनुष्यत्व से भ्रष्ट होकर पुनः मनुष्य जन्म दुर्लभ है।

2. पासा - चाणक्य के पास सोना नहीं था x उसने यंत्र पासे बनाए x अन्यमत - वर से दिए हुए x एक थाल दीनार का भरा x जो मुझे कोई जीते तो थाल ले, मैं जीतूँ तो एक दीनार लूँगा x यंत्रपासे उसकी इच्छानुसार गिरते हैं x से जीतने में कौन समर्थ हो ?

3. धान्य - भरत क्षेत्र में जितना धान्य हो, उसे इकट्ठा करो x उसमें पृथक सरसों छोड़े x Mix किए x एक वृद्धा को सुपड़ा ग्रहण कर बीनती है x वह क्या पृथक भरने के लिए समर्थ है ? x वह देवी के प्रसाद से कर भी सकती है किंतु मानुष्य से भ्रष्ट मानुष्य को प्राप्त नहीं कराता।

4. जूआ - एक राजा x उसका महत्व 108 खंभे वाला x हर खंभे के 108 कोने x राजपुत्र ने राजा को मारकर राज्य लेने का Plan बनाया x राजा को via मंत्री पता चला x उसने पुत्र को बुलाकर कहा - हमारी परंपरा में जो क्रमशः राजा नहीं बनना चाहता, जल्दी चाहता है तो उसे जूआ खेलना पड़ता है x, यदि 108 खंभे के 108 कोने को तू 108 बार लगातार जीते तो तुझे राज्य दूँगा x
देव के प्रभाव से... x

5. रत्न - एक वणिक् x महोत्सव में सभी वणिक् कोई ध्वज लगाते हैं x वह नहीं लगाता x एकदा वह बाहर गया x उसके पुत्रों ने रत्न बेच दिए x वणिक् ने आकर पुत्रों को कहा रत्न वापस लाओ x पुत्र कभी के रत्न वापस नहीं ला सकते x किंतु देव प्रभाव से...

Date :

6. स्वप्न – एक कार्पटिक ने स्वप्न में चंद्र खाया x अन्य कार्पटिकों ने कहा - तुझे चंद्र जैसे पुडले भिक्षा में मिलेंगे x उसे मिला x दूसरे ने भी वैसा ही स्वप्न देखा x वह नहाकर स्वप्नपाठक के पास फल लेकर गया x उसे कहा - राजा बनेगा x 7वें दिन वह राजा बना x कार्पटिक ने सुनकर सोचा - मैं भी गोरस पीकर सोऊँ जिससे पुन: वही स्वप्न देखूँ x वह पुन: वही स्वप्न देख सकता है? ...

7. चक्र - इंद्रपुर नगर x इंद्रदत्त राजा x रानियों के 22 पुत्र x अन्य मत - एक ही रानी के 22 पुत्र x सभी उद्दंड होने से कला नहीं सीखे x एक मंत्रीपुत्री x राजा ने विवाह के बाद उसे मिला नहीं x एकदा देखकर पूछा - यह कौन है? x आपकी रानी है x उसके साथ रहा x गर्भ रहा x मंत्री ने दिन, मुहूर्त, राजा का आलाप वि. पत्र पर लिखकर संभाला x पुत्र हुआ x कलाएँ सीखी x मथुरा x पर्वत राजा x निवृत्ति पुत्री x वह वर ढूँढने इंद्रपुर आए x राधावेध सजाया x 22 पुत्र fail x फिर मंत्रीपुत्री के पुत्र को बुलाया x वह Pass x जैसे वह चक्र भेदना दुष्कर है, वैसे... ।

8. चर्म - एक द्रह 1000 यो. x चर्म से ढंका x एक छिद्र है x एक कछुए ने छिद्र में से मुंह निकाला x शरद्ऋतु का चंद्र परिवार सहित देखकर सोचा - मेरे स्वजनों को भी बताऊँ x पुन: डूबा x पुन: छिद्र दिखता नहीं है x...

गा. 833-5 9. युगदृष्टांत - स्वयंभूरमण समुद्र के एक (पूर्व) किनारे पर युग (धूरा) हो पश्चिम किनारे पर समिला (खीला) हो, तो युग में खीले का प्रवेश जैसे संशयित है वैसे... ।
वह खीला प्रचंड वायु से शायद छिद्र में जाए किंतु मनुष्यत्व तो दुर्लभ है।

10. परमाणु दृष्टांत – एक थंभा x देव ने परमाणु जैसा चूर्ण किया x नाली में डाला x मेरु पर्वत की चूला से फूँका x कोई उन पुद्गलों को इकट्ठा कर सकता है? ...
अथवा
सैंकड़ों थंभों पर महल x काल से जीर्ण हुआ x कोई उन्हीं थंभों से क्या कोई महल बना सकता है? ...

गा. 836 इस प्रकार दुर्लभ मनुष्यपन को प्राप्त कर जो जीव धर्म नहीं करता है, वह मृत्यु समय शोक करता है।
गा. 837-8 पानी के बीच हाथी की, कांटे में फँसे हुए मत्स्य, जाल में फँसे पक्षी की तरह।
गा. 839 वह सैंकड़ों जन्म कर अति दु:ख से मनुष्यत्व प्राप्त करता है। पुण्य करने वाला

Date :

सुखपूर्वक प्राप्त करता है।

गा.८५० तं तह दुल्लह...न सप्पुरिसो॥ जो दुर्लभ और विद्युत की तरह चंचल मनुष्य जन्म को प्राप्त कर प्रमाद करता है, वह कापुरुष है सत्पुरुष नहीं।

अव. जैसे १० दृष्टांतों से यह मनुष्यत्व दुर्लभ है, वैसे आर्यक्षेत्रादि भी दुर्लभ हैं। अब मनुष्य जन्म प्राप्त करने पर भी सामायिक दुर्लभ होने के कारण —

गा.८५१-२ ~~१. आलस्स २. मोह~~ १. आलस २. मोह ३. अवज्ञा ४. स्तंभ ५. क्रोध ६. प्रमाद ७. कृपणता ८. भय ९. शोक १०. अज्ञान ११. व्याक्षेप १२. कुतूहल १३. खेलना - इन कारणों से सुलसुदुर्लभ मनुष्यत्व को प्राप्तकर जीव हितकारी और संसार से उतारने वाली ऐसी श्रुति (श्रवण) को प्राप्त नहीं करता।

2. मोह - गृहकर्तव्यव्याकुलता।
3. अवज्ञा - 'ये क्या जानते हैं' इस प्रकार।
4. स्तंभ - जाति के अभिमान से।
5. क्रोध - कोई साधु देखकर कुपित होता है।
6. प्रमाद - मद्यादि।
7. कृपणता - 'यदि मैं जाऊँगा तो साधुओं को कुछ देना पड़ेगा'।
8. भय - 'साधु तो नरकादि के भय का वर्णन करते हैं'।
11. व्याक्षेप - व्याकुलता
12. कुतूहल - नटादि देखना।
13.

गा.८५३ यान - आवरण - प्रहरण, युद्ध में कुशलत्व, नीति, दक्षत्व, व्यवसाय, शरीर, आरोग्य इन गुणों से युक्त योद्धा जय प्राप्त करता है।

* यह दृष्टांत है → यान - हाथी वि. आवरण - कवचादि, प्रहरण - खड्गादि, कुशलत्व - तज्ज्ञता, नीति - निकलने और घुसने का Plan, दक्षत्व - जल्दी करना, व्यवसाय - शौर्य,, ऐसा योद्धा युद्ध जीतता है।

* दार्ष्टांतिक → यान - महाव्रतादि, आवरण - उत्तम क्षांति, प्रहरण - धर्मध्यान, कौशल - गीतार्थता, नीति - द्रव्यक्षेत्रकालभाव में श्रुतानुसार उचित प्रवृत्ति, दक्षत्व - पडिलेहन - वेयावच्च वि. क्रियाएँ योग्य काल में अहीनाधिक करना, व्यवसाय - १२ प्र. तप, संयम, उपसर्ग-परीषह सहना वि, ऐसा जीव कर्म शत्रु को जीतकर सामायिक प्राप्त करता

Date :

है।

स्व. इन उपायों से सामायिक प्राप्त की जाती है –

गा.844 भ. की प्रतिमादि दिखने पर, स्वयंभूरमण समुद्र में प्रतिमा के आकार वाले मत्स्य और कमलों को देखकर

2. सुनने पर eg. आनंद-कामदेव

आनंद श्रावक – वाणिज्यग्राम नगर x जितशत्रु राजा, x आनंद सेठ x शिवानंदा सेठानी x उत्तर-पूर्व में कोल्लाक संनिवेश x वहाँ आनंद के बहुत मित्र-स्वजन रहते x एकदा भ. महावीर वाणिज्यग्राम नगर में दूतिपलास चैत्य में पधारे x सभी वंदनार्थ निकले x आनंद भी गया x देशना सुनकर देशविरति स्वीकारी x इच्छापरिमाण व्रत में – 4 करोड़ सोना निधान, 4 करोड़ ब्याज, 4 करोड़ शेष व्यवहार में, 400 हल, 400 दास, 400 दासी, 4 गोकुल, 400 दिशायात्रिक वाहन, 400 संवहनिका वाहन, 400 जहाज छोड़कर शेष का यावज्जीव नियम लिया x 14 वर्ष बाद उसने श्रावक की 11 वीं प्रतिमा का स्पर्श किया x 11 वीं प्रतिमा में अवधिज्ञान हुआ x पूर्व-दक्षिण-पश्चिम में 500 यो, उत्तर में लघुहिमवंत तक, ऊर्ध्व सौधर्म कल्प तक, नीचे 84000 वर्ष स्थिति वाले लोलुयक नरकावास तक देखता है x इस प्रकार 20 साल तक श्रावकत्व पालकर आलोचित प्रतिक्रांत मासिक संलेखना से मरकर सौधर्मावतंसक विमान के उत्तर पूर्व में अरुण विमान में 4 प. स्थिति वाला देव बना। महाविदेह में सिद्ध होगा।

कामदेव श्रावक – चंपा नगरी x पूर्णभद्र चैत्य x जितशत्रु राजा x कामदेव सेठ, भद्रा पत्नी x आनंद श्रावक की तरह ही, विशेष – 6-6 करोड़ सोना निधान-ब्याज-शेषव्यवहार में, 600 हल, 600 दास, 600 दासी, 6 गोकुल, 600 दिशायात्रिक वाहन, 600 संवहनिका वाहन, 600 जहाज का परिग्रह रखा है x 12 वर्ष में 11 प्रतिमा स्पर्शी x 11 वीं प्रतिमा में एक देव ने पिशाच-हाथी वि. रूप में उपसर्ग किए x सम्यक् सहन किए x भ. ने समवसरण में प्रशंसा की x अरुणाभ विमान में देव बना।

3. क्रियाकलाप अनुभवने पर – eg. वल्कलचीरी।

चंपानगरी x सुधर्मा स्वामी पधारे x कोणिक आया x जंबू स्वामी को देखकर पूछा – इनका शरीर किस तप के कारण इतना दीप्त-मनोहर है x सुधर्मा स्वामी – तेरे पिता श्रेणिक द्वारा पूछने पर भ. महावीर ने कहा था, वैसा तू सुन –

राजगृह, गुणशील चैत्य में भ. पधारे x श्रेणिक राजा चला x दो पुरुष आगे x एक मुनि को

Date :

देखकर एक पुरुष बोला - यह महात्मा सूर्य की आतापना ले रहे है x दूसरा - ये तो प्रसन्नचंद्र राजा है, बाल पुत्र को राज्य पर बिठाया, मंत्रियों ने राज्य हड़प लिया, इन्हें धर्म कहाँ से? x मुनि ने सुना x मानसिक युद्ध किया x श्रेणिक ने देखा ध्यान में निश्चल मुनि x भ. को जाकर पूछा - अभी मरे तो कहाँ जाएँ? x भ. - 7वीं नरक x श्रेणिक ने संशय से पुन: पूछा x भ. - सर्वार्थसिद्ध विमान x श्रेणिक - यह दो वचन क्यों? भ. - ध्यान के कारण x पूरा वृत्तांत कहा x सिर पर आवरण से मारने के लिए हाथ लगाने से उनका ध्यान पलटा x श्रेणिक - इन्होंने कैसे दीक्षा ली? x भ. -

पोतनपुर x सोमचंद्र राजा, धारिणी रानी x वह राजा के बाल बनाती है x सफेद बाल देखकर कहा - दूत आया x राजा - कहाँ है? x रानी - यह धर्मदूत है x राजा व बाल प्रसन्नचंद्र को राज्य देकर तापस बने x देवी गर्भवती थी x गर्भ बढ़ा x पुत्र जन्मा x रानी विसूचिका रोग से मरी x वल्कल में रहने से वल्कलचीरी नाम पड़ा x धाव माता भैंस के दूध से पालती है x धावमाता भी मरी x प्रसन्नचंद्र राजा ने चर पुरुषों से शोध कराई x राजा ने ऋषि के रूप में वेश्या भेजी x फल-वचन-स्पर्श से लोभना है x ऋषि न होने पर वे वहाँ गई x उसे ललचाती है x ~~उसने~~ तापस के बर्तन ~~पेड़ पर~~ कुटीर में रखने गया x इतने में ही ~~प~~ सोमचंद्र ऋषि आए x पेड़ पर वह चढ़े चर पुरुषों ने वेश्या को इशारा किया x वे भागी x वह अटवी में घूमता हुआ रथिक को देखकर बोला - तात! वंदे, पोतनपुर आश्रम जाना है x रथिक ने रथ में बिठाया x रथिक की पत्नी को वह 'तात' बोलता है x रथिक ने पत्नी को समझाया - वह स्त्रीरहित आश्रम में रहने से अंतर नहीं जानता x उसे मोदक दिए x रास्ते में रथिक चोर से लड़ा x चोर हारा, रथिक को धन दिया x पोतनपुर पहुँचे x रथिक ने उसे धन देकर छोड़ दिया x वह वेश्या के घर पहुँचा x वेश्या ने उसे नहाकर तैयार कर पुत्री से विवाह किया x राजा ने भाई घूम जाने से नगर में शोक रखा था x इधर वेश्या के यहाँ वाद्य बजे तो राजा ने बुलाया x पूछने पर वेश्या - मुझे नैमित्तिक ने कहा था कि इस दिन तू तेरी पुत्री का विवाह करना x अत: विवाह है x राजा ने के चर पुरुषों ~~ने~~ ने पहचाना x राजकन्या के साथ विवाह करवाया x 12 वर्ष बीतने पर वल्कलचीरी को पिता की याद आई x ऋद्धि सहित मिलने गए x ऋषि अंध हो गए थे x रोने से आँखें खुली x दोनों पुत्रों को देखा x वल्कलचीरी तापस के बर्तन लेने ~~वृक्ष पर चढ़ा~~ कुटीर में गया x बर्तन साफ करते हुए 'मैंने ऐसा कहीं किया है' सोचते हुए जातिस्मरण हुआ x आगे ध्यान में बढ़ने पर केवलज्ञान हुआ x कुटीर से बाहर आकर पिता-भाई को धर्म कहा x वल्कलचीरी केवली पिता को लेकर भ. वीर के पास गए x प्रसन्नचंद्र राजा पोतन पुर गया x एकदा भ. पोतनपुर पधारे x प्रसन्नचंद्र ने बालपुत्र को राज्य देकर दीक्षा ली xx

Date :

भ. महावीर श्रेणिक को यह कह रहे थे इतने में देव उतरे x श्रेणिक - ये देव क्यों आ रहे हैं ? x भ. - प्रसन्न चंद्र राजा को केवलज्ञान हुआ xx आगे 'वसुदेव हिंडी' में।

4. कर्म के क्षय होने पर - eg. चंडकौशिक।

5. उपशम होने पर - eg. अंगर्षि।

6. प्रशस्त मन-वचन-काया के योग होने पर।

अब सामायिक प्राप्ति के ही उपाय -

गा. 845-6 1. अणुकंपा - वैद्य, 2. अकामनिर्जरा - मिठ 3. बालतप - इंद्रनाग 4. दान - कृतपुण्य 5. विनय - पुष्पशाल पुत्र 6. विभंग - शिवराजर्षि 7. दृष्ट द्रव्य का संयोग - वियोग - मथुरा के 2 वणिक् 8. अनुभूतव्यसन - दो भाई की गाड़ी नीचे मरी हुई सर्पिणी... 9. अनुभूतोत्सव - आभीर 10. ऋद्धि - दशार्णभद्र राजा 11. सत्कार - इलापुत्र।

1. अनुकंपा में वैद्य दृष्टांत →

द्वारावती x कृष्ण वासुदेव x 2 वैद्य - धन्वंतरी और वैतरणी x धन्वंतरी - अभव्य, साधुओं को सावद्य औषध देता, साधु कहते कि हम ऐसा नहीं कर सकते तो वह 'मैंने साधुओं के लिए वैद्यशास्त्र नहीं पढ़ा है' ऐसा कहता x वैतरणी - भव्य, साधुओं को प्रासुक औषध देता, खुद के पास हो तो खुद देता x

गा. 847 एकदा कृष्ण ने नेमिनाथ भ. को पूछा - बहुत कौए वि. का वध कर ये कहाँ जाएँगे ? x भ. - धन्वंतरी अप्रतिष्ठान नरकावास में, वैतरणी कालंजर पर्वत के पास गंगा नदी और विंध्य के बीच बंदर बनेगा x यूथपति बनेगा x कुछ साधु सार्थ के साथ वहाँ से निकलेंगे x एक साधु को काँटा लगेगा x वह साधु - यहाँ हम सब मरेंगे अतः तुम सब जाओ, मैं भक्त प्रत्याख्यान करता हूँ x तो भी एक साधु साथ में रहता है x काँटा निकलता नहीं है x उन्हें स्थंडिल और छाया वाली जगह ले गए x वह वानर वहाँ पहुँचेगा x ईहापोह से जातिस्मरण ज्ञान x पर्वत से शल्योद्धरणी और संरोहणी औषध लाया x औषध से ठीक किया x फिर जमीन पर पूर्वभव लिखा - x साधु - हमने भी वैतरणी वैद्य सुना है x धर्म कहा x वानर ने भक्त प्रत्याख्यान किया x 3 दिन में सहस्रार गया x x अवधि से पुनः साधु को देखा x वहाँ आया x देव ऋद्धि दिखाई x साधु को गच्छ में छोड़ा x गच्छ वाले साधुओं ने पूछा - यहाँ कैसे आए x उन्हें वृत्तांत कहा xx

Date :

2. अकामनिर्जरा में महावत दृष्टांत → 'नुपूरपंडिता कथा'

वसंतपुर x एक सेठ की वधू नदी में नहाती है x उसे देखकर एक युवक बोला - हे मत्त हाथी की सूँढ जैसे ऊरुवाली! ये नदी, नदी के वृक्ष और ~~हम~~ तेरे पैर में पड़ा हुआ मैं तेरे सुस्नात को पूछते हैं (अर्थात् अच्छी तरह स्नान किया?) x वह स्त्री बोली - नदियों का शुभ हो, नदीवृक्ष चिरंजीवी हो, सुस्नात पूछने वालों का प्रिय करने के लिए मैं प्रयत्न करूँगी x वह उसका घर जानत नहीं है x उसने सोचा - 'अन्नपानैर्हरेद्बालान्, यौवनस्थान् विभूषया। वश्यां स्त्रीमुपचारेण, वृद्धान् कर्कशसेवया॥' x उस स्त्री के साथ आए बालकों को उसने फल देकर Address पूछा x एक संन्यासिनी को भेजा x उस स्त्री ने रोषकर बर्तन मांजते हुए राख वाले हाथ से संन्यासिनी की पीठ पर 5 उंगली छाप दी x और पिछले दरवाजे से निकाल दिया x सं. ने युवक को कहा - वह तेरा नाम भी नहीं चाहती x युवक समझ गया - वद 5 को जाना किंतु घुसना कैसे? वह जानने फिर से भेजा x उस स्त्री ने लज्जा से मारकर अशोकवन के छिद्र से बाहर निकाला x

युवक पहुँच गया x दोनों अशोकवन में सोए x ससुर ने देखा x आकर पायल निकाली x पुत्रवधू ने 'जरूर हो तब सहाय करना' कहकर उसे भेज दिया x आकर पति को बोली - यहाँ गर्मी है, बाहर चलो x वे बाहर गए x थोड़ी देर बाद उठाकर कहा - आपका कुल कैसा है? आपके साथ होने पर ससुर मेरे पैर से पायल ले गए x पति - सुबह देखेंगे x ससुर सुबह बोला x पति गुस्से में - बुड्ढे! तेरी बुद्धि विपरीत हो गई है वि. x ससुर - वह दूसरा था x स्त्री - मैं खुद को शुद्ध करूँगी x नहाकर यक्ष मंदिर गई x वहाँ दोषित व्यक्ति यक्ष के दो पैर में फँस जाता है और शुद्ध निकल जाता है x मंदिर जाते हुए ~~वह~~ युवक ने पागल का नाटक कर उस स्त्री का आलिंगन किया x मंदिर में बोली - मेरे पति और उस पागल सिवाय अन्य पुरुष का मैंने स्पर्श किया हो तो मुझे सजा करना x बोलकर तुरंत निकल गई x यक्ष ने सोचा - इसने तो मुझे भी ठग लिया वि. x लोगों ने कलकल किया - यह शुद्ध है x ससुर की सबने निंदा की x अधृति से उसकी निंद उड़ गई x राजा ने सुना तो उसे अंतःपुर का रक्षक बनाया x

राजा के क्रीड़ागृह के नीचे पट्टहस्ति रहता था x एक रानी उस हाथी के महावत पर आसक्त थी x ~~एक~~ एकदा हाथी ने सूँढ ऊँचीकर उसे लिया x महावत ने 'बहुत देर की' कहकर हाथी की सांकल से मारा x रानी - मैं क्या करूँ? वह रक्षक सोता नहीं है, गुस्सा न करो x ~~वह~~ वृद्ध ने देखा और सोचा - ये रानी भी ऐसी है तो वह पुत्रवधू तो बिचारी ~~कम~~ भद्रिक है x निश्चिंत सो गया x 7वें दिन उठा x राजा के पूछने पर कहा - कोई रानी ऐसी है x राजा ने लकड़ी (?) का हाथी बनवाया x रानियों को कहा - इस पर चढ़कर उल्लंघो x सबने किया x एक रानी - मुझे डर लगता है x राजा ने उसे कमल की नाल मारी तो वह बेहोश हो गई x राजा बोला - मत्त हाथी पर चढ़ने वाली! लकड़ी के हाथी से डरने वाली! कमल की नाल से तू मूर्च्छित हुई, सांकल से नहीं' x कहकर उसकी पीठ देखी x सांकल के निशान दिखे x राजा ने रानी-महावत को हाथी पर चढ़कर पर्वत से कूदने की आज्ञा

Date :

दो x हाथी ने एक पैर उठाया, 2 उठाए, 3 उठाए x लोक-तिर्यंच को क्यों मारते हो? x राजा ने महावत को पूछा- क्या तू हाथी को वापस ला सकता है? x महावत- यदि मुझे अभय दो तो x राजा ने अभय दिया x हाथी को वापस लाया x रानी- महावत को देशनिकाला दिया x दोनों पास के गाँव में शून्य घर में रहे x शून्य घर में एक चोर घुसा x बाहर आरक्षक आए x वे बोले - अभी शून्य घर को घेर लो, सुबह पकड़ लेंगे x अंदर चोर को रानी का स्पर्श हुआ x उसने पूछा- तू कौन है? x चोर हूँ x रानी - तू मेरा पति बन जा, सुबह महावत को चोर कह देंगे x वैसा किया x महावत को पकड़कर शूली से भेद दिया x वह चोर के साथ चली x नदी आई x चोर - तू इस सरकड़ा नामक वनस्पति विशेष) सरत्थंभ के नीचे रह, मैं तेरे वस्त्र और आभूषण पहले ले जाता हूँ x चोर सामने वाले किनारे से भाग गया x रानी- तू तो मेरे अलंकारादि ले जा रहा है x चोर- हे बाला! अपरिचित ऐसे मेरे कारण तूने महावत को छोड़ा, तू अध्रुव के कारण ध्रुव को छोड़ती है जिससे कौन नर तुझ पर विश्वास करे x रानी - क्यों जाता है? x चोर - महावत की तरह कभी मुझे भी मरा देगी x

उधर शूली पर लटका महावत पानी माँगता है x श्रावक ने कहा- तू नवकार बोल, मैं पानी लाता हूँ x महावत नवकार गिनते हुए मर गया x आरक्षकों ने श्रावक को पकड़ा x महावत वाण-व्यंतर बना x अवधि से देखकर तुरंत आया x शिला विकुर्वकर श्रावक को छुड़ाया x फिर झाड़ी के पीछे छुपती नग्न रानी को देखा x देव को घृणा हुई x वह सियार का रूप कर मांस-पेशी मुँह में लेकर आया x तभी नदी में से एक मछली निकलकर बाहर पड़ी x सियार मांस छोड़कर मछली की ओर दौड़ा x मछली पानी में गई और मांस बाज पक्षी ले गया x यह देख रानी बोली - हे सियार मांस छोड़कर मछली को देखता है, दोनों से भ्रष्ट हुआ x सियार - हे पिता का अपयश करने वाली! पेड़ पत्तों से छुपी! पति और जार, दोनों से भ्रष्ट हुई x वह स्तब्ध हुई x देव ने स्वयं का रूप दिखाकर कहा - दिशा ले x रानी - निंदा को दूर करो x देव ने राजा को धिक्कार कर समझाया x राजा ने दीक्षा दिलाई xx

1. बालतप में इंद्रनाग दृष्टांत →

वसंतपुर x सेठ के घर मारी हुई x इंद्रनाग बालक x पानी ढूँढता है x सभी को मृत देखा x घर का दरवाजा लोगों ने काँटों से ढँक दिया x वह कुत्ते द्वारा किए हुए छिद्र से निकलकर कटोरा लेकर भीख माँगता है x लोग उसे देते हैं x एक सार्थ की घोषणा हुई x वह भी निकला x एक दिन कूर मिले x पचे नहीं x दूसरे दिन नहीं खाया x सार्थवाह ने सोचा - यह उपवासी है x दूसरे दिन स्निग्ध दिया x दो दिन नहीं खाया x सबको श्रद्धा हुई x तीसरे दिन पूछा - कल क्यों नहीं आया? x वह चुप रहा x जिससे सबने जाना कि छद्म था x स्निग्ध दिया x दो दिन बाद सब निमंत्रण करने लगे x तो भी नहीं गया x लोगों ने सोचा - एकपिंड वाला है x एकपिंडित नाम पड़ा x सार्थवाह बोला - दूसरे के

Date :

यहाँ मत जाना, मुझसे ही लेना x नगर पहुँचकर सेठ ने घर में ही उसका मठ बनाया x शीर्ष मुंडन किया x भगवा वस्त्र पहने x जिस दिन पारणा हो उस दिन लोक भोजन लाते x किसी एक का लेता है x लोगों को पता नहीं चलता किससे लिया x अतः भेरी बनाई, जिसका भोजन ले, वह बजाता है x एकदा भ. पधारे x साधु गोचरी जाने की अनुज्ञा लेते हैं x भ. ने कहा - अभी अनैषणा है, मुहूर्त ठहरो x इंद्रनाग के पारणे के बाद कहा जाओ x गौतम स्वामी को भ. ने कहा - तू जाकर उसे कह कि हे अनेकपिंडी! तुझे एकपिंडी (भ.) देखने के इच्छते हैं x गौतम स्वामी के कहने पर वह गुस्सा हुआ और कहा - मैं ही एकपिंडी हूँ x शांत होने पर उसने सोचा कि ये साधु झूठ नहीं बोलते अतः विचारने से पता चला कि मेरे पारणे में बहुत लोग पिंड लाते हैं जबकि ये साधु अकृत-अकारित वापरते हैं x उसे जातिस्मरण हुआ x प्रत्येकबुद्ध हुआ x सिद्ध हुआ xx

५. दान में कृतपुण्य दृष्टांत →

एक गोपालन का पुत्र था x उत्सव में आस-पास सबने खीर बनाई x वह लेने लगा x माता भी रोई x सबने थोड़ा-थोड़ा सामान दिया जिससे उसने खीर बनाई x साधु मासक्षमण के पारणे पर आए x उसने खीर बहोराई x माता ने पुनः दी x पुत्र रात में विसूचिका से मरा x देवलोग गया x

राजगृह में धनावह सेठ की भद्रा पत्नी से जन्मा x कृतपुण्य नाम रखा x विवाह बाद माता ने ललित गोष्ठी में भेजा x वेश्या घर गया x 12 वर्ष में घर निर्धन हुआ x माता-पिता मर गए x पत्नी ने आभूषण भेजे x वेश्या की माता समझ गई x वेश्या छोड़ती नहीं है x घर साफ करने के बहाने घर से बाहर किया x घर गया x वेश्या की माता ने 1000 रू. उसकी पत्नी को भिजवाए थे x पत्नी ने वे कृतपुण्य को दिए x कृतपुण्य सार्थ के साथ निकला x गाँव के बाहर ~~एक~~ एक मंदिर के पास खाटले में सोया x एक अन्य वणिक् की माता ने सुना कि उसका पुत्र मर गया तो उसने सोचा मेरा धन राजकुल में न जाए इसलिए कुछ उपाय करूँ x खाटले में सोते कृतपुण्य को उठाकर घर में ले गई x उसे कहा - हे पुत्र! तू कहाँ गया था वि. x 4 पुत्रवधू थी x उन्हें कहा - यह तुम्हारा देवर है x कृतपुण्य वहाँ 12 वर्ष रहा x चारों बहू को 4-4, 5-5 बालक हुए x फिर सासु ने कहा - अब इसे निकालो x चारों ने अनिच्छा से स्वीकारा x उन्होंने कृतपुण्य के लिए रत्न वाले मोदक बनाए x दाम पिलाकर उसी मंदिर के बाहर छोड़ा x

वह सार्थ अनेक जगह घूमकर उसी दिन वहाँ आया था x उसके साथ घर आया x पत्नी ने उसके हाथ से भाते की थैली ली x जब कृतपुण्य 12 वर्ष पहले गया तब वह गर्भवती था x उसका पुत्र 11 साल का हो गया था x वह स्कूल से आया और बोला - मुझे बहुत भूख लगी है, जल्दी कुछ दो जिससे मैं जल्दी वापस आऊँ, नहीं तो उपाध्याय मुझे मारेंगे x माता ने मोदक दिए x वह गया x खाए में रत्न निकला x रत्न पुडले वाले को दिया और कहा - रोज पुडला देना x

कृतपुण्य ने भी जिमते हुए मोदक खाया तो रत्न निकला x पत्नी को कहा - कर के भय से मोदक में रखे थे x रत्नों से पुनः व्यापार किया x

Date :

एकदा सेचनक हाथी को नदी में तंतु (जीवविशेष) ने पकड़ा x अभयकु.- जलकांतमणि से वह छोड़ेगा x भंडार में बहुत मणि होने से देर लगेगी अतः नगर में घोषणा कराई x पुडलेवाले ने रत्न दिया x मणि का प्रकाश पानी पर पड़ा x तंतु हाथी को किनारे पर छोड़कर भाग गया x राजा ने पुडले वाले को पूछा - रत्न कहाँ से लाया ? x आग्रह करने पर बोला - कृतपुण्य के पुत्र ने दिया x राजा ने राजकुमारी परणाई और एक देश दिया x

वह वेश्या भी आई और बोली - तेरे नाम से अभी तक बाल बांध रखे हैं x

कृतपुण्य ने अभय को कहा - मेरी ४पत्नी दूसरी भी है किंतु मैं Address नहीं जानता x अभयकुमार ने उसके जैसी प्रतिमा वाला मंदिर बनवाया x कौमुदी महोत्सव में सभी महिलाओं को पूजा करने कहा x वे ४पत्नी पुत्रों के साथ आई x पुत्र पिता को पहचान कर गोद में बैठ गए x कृतपुण्य ने चारों पत्नी को पहचाना xx

नगर में भ. महावीर स्वामी पधारे x पूर्वभव सुनकर कृतपुण्य ने दीक्षा ली xx

5. विनय में पुष्पशाल पुत्र →

मगध देश x गोब्बर गाँव x पुष्पशाल सेठ x भद्रा पत्नी x पुष्पशालपुत्र x उसने पूछा - धर्म क्या है ? x माता पिता - लोक में दो ही देव हैं - माता और पिता x वह उन्हें देवता की तरह सेवा करता है x एकदिन गाँव का मुखिया घर आया x पिता को उनका विनय करते देख वह भी उनका विनय करने लगा x मुखी उसे विनयवान् समझकर ले गया x उस मुखी के यहाँ भी मुखी आया x ... इस प्रकार वह श्रेणिक की सेवा करने लगा x भ. पधारे x श्रेणिक जाकर उनकी पूजा करता है x पुष्पशाल पुत्र - हे प्रभु ! मुझे आपकी सेवा करना है x भ. - दीक्षा से मेरी सेवा होती है x वह बोध पाया

6. विभंगज्ञान से शिवराजर्षि →

मगध देश x शिव राजा x राज्य में सुख बढ़ता देख सोचा - यह धर्म का फल है, अतः मैं पुनः धर्म करूँ x दान वि. दिए x पुत्र को राज्य देकर x तांबे का पात्र और कड़छी लेकर दिशाप्रोक्षित आश्रम में तापस बना x छट्ठ के पारणे छट्ठ x पारणे में सूखे पीले पत्ते x सूर्य आतापना x विभंगज्ञान हुआ - ७ द्वीप-समुद्र x प्ररूपणा की x भ. पधारे x गौतम स्वामी ने लोक मुख से सुना x भ. को पूछा x शिवराजर्षि ने भ. की बात लोक से सुनी x विभंगज्ञान नष्ट हुआ x भ. के पास जाकर दीक्षा ली x केवली, सिद्ध ।

[भ. पधारे x विभंगज्ञान से साधुओं की क्रिया देखकर अपूर्वकरण x केवली - हरिभद्रीय टीका]

7. संयोग-वियोग में २ वणिक् →

एक वणिक् उत्तर मथुरा से दक्षिण मथुरा गया x एक वणिक् ने वहाँ स्वागत किया x मित्र बने x दक्षिण वणिक् का पुत्र - उत्तर की पुत्री विवाह किया x (बाल्यावस्था में निश्चित किया - टिप्पणक) x दक्षिण वणिक्

निश्चित

Date :

मर गया x पुत्र उसकी जगह आया x स्नानपीठ रचाई x उसके बाहर 4 दिशा में सोने, बाहर चांदी, बाहर तांबे, बाहर मिट्टी के कलश रखे x धीरे-धीरे एक कलश गायब हो गए x वह भोजन करने आया x सोने-चांदी की थाली परोसी x एक-एक कर सर्व अदृश्य हुआ x धन भंडार भी खाली हुआ x निधान भी नष्ट हुए x ~~उसने सोचा~~ उसकी मृत्यपात्री भी अदृश्य हो ~~गई~~ रही थी x उसने पकड़ी x हाथ में रहा भाग बचा, बाकी गई x उसने खुद को अधन्य मानकर दीक्षा ली x थोड़ा पढ़कर मृत्यपात्री का शेष भाग ढूँढने निकला x सब उसके ससुर के घर पहुँच गया था x वह घूमता पहुँचा x भिक्षा लेने के बाद वहीं खड़ा रहा x सार्थवाह - मेरी लकड़ी को क्यों देखते हैं ? x मुनि - मैं तो भाजन देख रहा हूँ, ये सब कहाँ से आए x सेठ - दादा परदादा के हैं x साधु - सच कहो x सेठ - सहज उपस्थित हुए x मुनि ने पात्री का टुकड़ा लगाया x कहा ये सब मेरे थे, वृत्तांत कहा x सेठ ने सोचा ये मेरा जमाई है, कहा - मेरी पुत्री ग्रहण करो x मुनि - यदि मनुष्य कामभोग नहीं छोड़ते तो कामभोग मनुष्य को छोड़ देते हैं x सेठ ने भी वैराग्य से दीक्षा ली xx एक ने संयोग से, एक ने वियोग से सामायिक प्राप्त की।

8. व्यसन में 2 भाई →

2 भाई गाड़ी से जा रहे थे x एक द्विमुखी सर्प रास्ते में था x बड़ा भाई - गाड़ी side में ले x छोटे भाई ने साँप पर गाड़ी चलाई x साँप संज्ञी होने से सुनता है x मर गया x हस्तिनापुर में स्त्री बना x दोनों भाई मरकर उसके पुत्र बने x बड़े पुत्र को प्रेम-स्नेह, छोटा द्वेष x जब छोटा जन्मा तभी सोचा, इसे गर्भ में ही मारूँ x उपाय करने से भी नहीं मरा x जन्म होने पर दासी को दिया कि कहीं छोड़ दे x पिता ने बचाया x बड़े का नाम राजलक्षित, छोटे का गंगादत्त x गंगादत्त को अन्य दासी को सौंपा x माता जब भी उसे देखती है तब लकड़ी-पत्थर मारती है x एकदा इंद्रमहोत्सव पर सेठ उसे घर लाकर पलंग के नीचे छुपाकर जिमाते हैं x वह देखकर उसे Bathroom में बंद कर देती है x सोते हुए पिता निकालते हैं x एक मुनि आए x मुनि को पूछने पर मुनि बोले - पूर्व भव का वैर है x पिता ने उसे दीक्षा दी x छोटे भाई के स्नेह से बड़े ने भी दीक्षा ली x शुद्ध संयम पाला x अंत में छोटे भाई ने निदान किया - इस तप के फल से मैं अगले भव में लोगों को आनंद देने वाला बनूँ x देव बने x वहाँ से च्यवकर दोनों वासुदेव - बलदेव बने xx

9. अनुभूतोत्सव में आभीर →

आभीर साधु के पास धर्म सुनते हैं x साधु ने देव का वर्णन किया x एकदा वे आभीर द्वारावती गए x देखकर सोचा यही वह देवलोक है, जिसका साधु ने वर्णन किया था x द्वारिका में उत्सव देखा x आकर साधु को कहा x साधु ने कहा देवलोक तो इससे अनंत गुणा है x ऐसे विस्मय होने से इन्होंने दीक्षा ली xx

Date :

10. ऋद्धि में दशार्णभद्र राजा →

दशार्णपुर x दशार्णभद्र राजा x 500 रानी x वह सोचता है - मेरे जैसा ऋद्धि - यौवन - वाहन में कोई नहीं है x दशार्णकूट पर्वत पर भ. पधारे x वह अभिमान से सर्व ऋद्धि पूर्वक निकला x शक्र ऐरावण पर चढ़ा x उसके 8 मुख विकुर्वे x 1-1 मुख पर 8-8 दाँत, 1-1 दाँत पर 8-8 सरोवर, 1-1 सरोवर में 8-8 कमल x 1-1 कमल के 8-8 पत्र, 1-1 पत्र पर 32 पात्र से बद्ध नाटक x इस प्रकार वह आया x 3 प्रदक्षिणा दी x हाथी आगे के 2 पैर से दशार्णकूट पर्वत पर रहा x पैर के निशान हुए x 'गजाग्रपद' नाम पड़ा x दशार्णभद्र ने सोचा - मेरे पास ऐसी ऋद्धि नहीं है, इसने धर्म किया है तो मैं भी करूँ x दीक्षा ली।

11. सत्कार में इलापुत्र →

एक ब्राह्मण ने पत्नी सहित दीक्षा ली x शुद्ध चारित्र पाला किंतु पत्नी प्रत्ये प्रीति कम नहीं हुई x ब्राह्मणी स्वयं की जाति का मान रखती है x मरकर देवलोक गए x

इलावर्धन नगर x एक सार्थवाही ने पुत्र की इच्छा से इलावर्धन देवी की पूजा की x ब्राह्मण उसका पुत्र बना x ब्राह्मणी मद के कारण नट की पुत्री बनी x पुत्र का नाम इलापुत्र x दोनों युवान् हुए x एकदा इलापुत्र ने नटी देखी x पूर्वराग से आसक्त हुआ x नट ने कहा - कला सीखो, इनाम जीते तो घर-जमाई बनाऊँगा x सीखा x बेनातट नगर गए x राजा के सामने नाटक किया x राजा भी नटपुत्री को देखता है x ईनाम नहीं देता x राजा - तू पतन (खेल विशेष) कर x

उसने एक बांस खड़ा किया, उस पर तिर्च्छा बांस, उसके दोनों Corner पर खीले x एक छिद्र वाली पादुका पहनी x ~~7 बार आक~~ वह एक हाथ में तलवार, दूसरे में ढाल लेकर चढ़ा, बीच में खड़ा हुआ x 7 बार आकाश में उछलकर स्व खील पादुका के छिद्र में प्रवेश कराई x

राजा नटपुत्री के कारण इनाम नहीं देता, बोला फिर कर x ऐसा 4 बार हुआ x 5वीं बार उसने सोचा - भोगों को धिक्कार है, जिससे यह राजा रानियों से तृप्त नहीं हुआ और नटी को इच्छता है x बांस पर एक सेठ की बहु से गोचरी व्होरते साधु को देख वैराग्य हुआ x केवलज्ञान हुआ x पुनः नटपुत्री, रानी और राजा को भी केवलज्ञान हुआ xx

हरि. टीका {

→ इलापुत्र का दृष्टांत असत्कार में है। अथवा कर लिखा है - सत्कार में देवों द्वारा भ. का सत्कार देखकर मरीचि को सामायिक प्राप्त हुई।

इस गाथा की अक्षरगमनिका में लिखा - सत्कारकाङ्क्षिणोऽप्यलब्धसत्कारत्वात्...।

मलय. टीका

अव. सामायिक प्राप्ति के ही कारण —

Date :

गा.848 अभ्युत्थान, विनय, पराक्रम, साधुसेवना से सम्यग्दर्शन-देशविरति-सर्वविरति की प्राप्ति होती है।

अभ्युत्थान - साधुओं का अभ्युत्थान करे तो विनीत समझकर साधु उसे धर्म कहे।

पराक्रम - कषायजयादि रूप।

अव. R. कथं द्वार पूर्ण। (देखें मूल द्वार गा. 137-8 भा. 1 pg. 160)

~~अव.~~ सम्यक्त्व प्राप्त होने पर जघन्य-उत्कृष्ट से कितने काल तक होता है -

गा.849 S. 1. लब्धि से	उत्कृष्ट	जघन्य
सम्यक्त्व	66 सा. ↑(i)	अंतर्मुहूर्त
श्रुत	"	"
देशविरति	देशोन पूर्वकोटी(ii)	"
सर्वविरति	"	1 समय(iii)

(i) मनुष्य जन्म के 2 या 3 पूर्वकोटी अधिक।

(ii) 8 वर्ष और 7 मास न्यून ऐसे पूर्वकोटी।

(iii) सर्वविरति के परिणाम शुरु होने के 1 समय बाद ही आयु का क्षय संभव है।

प्र. सर्वविरति 1 समय होती है तो देशविरति अंतर्मुहूर्त क्यों?

उ. क्योंकि देशविरति में द्विविध-त्रिविधादि बहुत भांगे होने से, वह विचारने में ही अंतर्मुहूर्त निकल जाता है। (टीप्पणक)

2. उपयोग से - सभी सामायिक अंतर्मुहूर्त (हरिभद्रीय टीका)

3. सर्व जीव की अपेक्षा से सर्वदा।

अव. T. कति द्वार - (वर्तमान में सामायिक के प्रतिपद्यमान और प्रतिपन्न कितने हैं -)

गा.850 सामायिक प्रतिपद्यमान	उत्कृष्ट	जघन्य
सम्यक्त्व	क्षेत्रपल्यो. असंख्यभाग(i)	1 या 2
श्रुत	श्रेणि का असंख्य भाग(ii)	"
देशविरति	क्षेत्रपल्यो. का असंख्यभाग(i)	"
सर्वविरति	~~1000~~ हजारों(iii)	"

Date :

(i) क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग में जितने प्रदेश हैं, उतने जीव सम्यक्त्व और देशविरति सा. के प्रतिपद्यमान विवक्षित समय में उत्कृष्ट से हो सकते हैं।
यहाँ देशविरति के प्रतिपत्ता से सम्यक्त्व के प्रतिपत्ता असंख्यगुण जानना।

(ii) ७ राज प्रमाण आकाशप्रदेश की श्रेणि के असंख्यातवें भाग में जितने प्रदेश हैं, उतने जीव अक्षरात्मक श्रुत के प्रतिपद्यमान संभव हैं।
वे जीव सम्यक्त्वी या मिथ्यात्वी दोनों लेना, इसलिए सामान्य अक्षरात्मक श्रुत लिखा है।

(iii) सहस्रशः से यहाँ सहस्रपृथक्त्व लेना (चूर्णि)।

अव. पूर्वप्रतिपन्न और प्रतिपतित –

गा. 851 ★

पूर्वप्रतिपन्न	उत्कृष्ट(i)	जघन्य
सम्यग्दृष्टि	असंख्य(ii)	असंख्य
देशविरति	"	"
सर्वविरति	संख्य(ii)	संख्य

(i) उत्कृष्ट पद के संख्य और असंख्य जघन्य पद से विशेषाधिक हैं।

(ii) प्रतिपद्यमान जीवों से ये प्रतिपन्न जीव असंख्य गुण।

★ तीनों सामायिक (सम्यक्त्व - देश - सर्वविरति) से प्रतिपतित जीव प्रतिपन्न की अपेक्षा अनंतगुना हैं।
प्रतिपतित जीवों का अल्पबहुत्व →
सर्वविरति $\xrightarrow{\text{असंख्य}\times}$ देशविरति $\xrightarrow{\text{असंख्य}\times}$ सम्यक्त्व प्रतिपतित ।

अव. श्रुत सा. के प्रतिपन्न और प्रतिपतित –

गा. 852 ★ प्रतिपन्न - ७ राज प्रमाण लोक की एक प्रतर के असंख्यातवें भाग में जितने आकाश प्रदेश, उतने जीव श्रुत के प्रतिपन्न।
[अर्थात् सामान्य से श्रुत प्रतिपद्यमान से प्रतिपन्न जीव वर्ग जितने होंगे क्योंकि प्रतिपद्यमान जीव श्रेणि के असंख्यवें भाग प्रमाण, प्रतिपन्न जीव प्रतर = श्रेणि^{2} (Square) के

Date : असंख्यवे भाग में है।]

★ श्रुत प्रतिपतित = सभी भाषालब्धि रहित पृथ्व्यादि, व्यवहारराशि में आकर भाषालब्धि प्राप्तकर पुन: पतित हुए।
श्रुत प्रतिपद्यमान और प्रतिपन्न से अनंतगुना।
सम्यक्त्व से प्रतिपतित जीवों से श्रुत प्रतिपतित जीव अनंतगुना क्योंकि श्रुतप्रतिपतित में मिथ्यादृष्टि, अभव्य भी आ जाते हैं।

अव. 7. कतिद्वार पूर्ण। 8. सांतर द्वार अर्थात् एक बार प्राप्त की हुई सम्यक्त्वादि सा.
गा. 853 जाने के बाद पुन: कितने काल में प्राप्त की जाती है – (देखें मूलद्वार गा. 138 भा.)

एक जीव अपेक्षया	जघन्य	उत्कृष्ट
सम्यक्त्व	अंतर्मुहूर्त	~~अनंत~~ देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त (iii)
श्रुत	" (i)	~~देशोन अर्द्ध~~ अनंत (ii)
देशविरति	"	देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त
सर्वविरति	"	"

(i) कोई द्वीन्द्रियादि श्रुतलब्धिमान् जीव मरकर पृथ्व्यादि में जाए, अंतर्मुहूर्त रहकर पुन: द्वीन्द्रियादि में आए तब अंतर अंतर्मुहूर्त।
(ii) कोई द्वीन्द्रियादि जीव अनंतकाल तक वनस्पति में रहे।
(iii) कोई आशातना बहुल जीव को ही ऐसा काल होता है।
तीर्थंकर, प्रवचन, श्रुत, गणधर, आचार्य, महर्द्धिक की आशातना करने वाला अनंत संसारी होता है।

अव. 8. सांतर द्वार पूर्ण। 9. अविरहित द्वार – (निरंतर कितने काल तक सामायिक होती है–)
गा. 854 ★ सम्यक्त्व-श्रुत-देशविरति के प्रतिपद्यमान जीव निरंतर उत्कृष्ट से आवलिका के असंख्यवे भाग मात्र समय में होते हैं। इससे आगे तीनों सामायिक के प्रतिपद्यमान में अवश्य अंतर होता है।

★ चारित्र में निरंतर प्रतिपत्ति काल 8 समय है।

★ जघन्य से चारों सामायिक का निरंतर प्रतिपत्ति काल 2 समय है।

Date :

अव. अविरहित द्वार के प्रतिपक्ष रूप विरहित द्वार- (प्रतिपद्यमान जीवों का इसकी विरह काल कितना होता है-)

गा.855 ★ सम्यक्त्व-श्रुत का उत्कृष्ट प्रतिपत्ति विरह काल- 7 अहोरात्र
जघन्य " - 1 समय
★ देशविरति का उत्कृष्ट " - 14 अहोरात्र
जघन्य " - 3 समय
★ सर्वविरति का उत्कृष्ट " - 15 अहोरात्र
जघन्य " - 3 समय

7.i) अव. U. अविरहित द्वार पूर्ण / V. भव द्वार (कितने भव तक लगातार प्राप्त हो-) -

गा.856

एक जीव अपेक्षया	उत्कृष्ट	जघन्य
सम्यक्त्व - देशविरति	क्षेत्रपल्यो. का असंख्य वा भाग (i)	1
श्रुत	अनंत	1 (eg. मरुदेवी)
सर्वविरति	8 भव (ii)	1

ii)
f

(i) एक जीव क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग में रहे आकाश प्रदेश जितने भव तक लगातार सम्यक्त्व और देशविरति प्राप्त कर सकता है। यहाँ सम्यक्त्व के असंख्य अधिक जानना।

(ii) 8 भव बाद नियमतः सिद्ध होता है।

अव. V. भव द्वार पूर्ण / X. आकर्ष द्वार — आकर्ष 29. के एक भविक और नानाभविक।

गा.857-8 एक भविक आकर्ष —

	उत्कृष्ट	जघन्य
सम्यक्त्व-श्रुत-देशविरति	सहस्रपृथक्त्व	1
सर्वविरति	शतपृथक्त्व	1

)

नानाभविक आकर्ष -	उत्कृष्ट	जघन्य
सम्यक्त्व-श्रुत-देशविरति	असंख्य सहस्र (i)	
सर्वविरति	सहस्रपृथक्त्व (ii)	

(i) लगातार भव की संख्या = असंख्य (गा. 856 में)

* लोक के 14 भाग Pg. No. 15 पर।
Δ चूर्णि में अर्थान्तर Pg. No. 19 पर।

Date :

एक भव में आकर्ष = सहस्र पृथक्त्व (गा. 857 में)
सभी भव में कुल आकर्ष = असंख्य x सहस्र पृथक्त्व = असंख्य सहस्र।

(ii) कुल भव संख्या = 8 (गा. 856 में)
एक भव में आकर्ष = शतपृथक्त्व (गा. 857 में)
कुल आकर्ष = 8 x शतपृथक्त्व = सहस्र पृथक्त्व।

अव. ५. स्पर्श द्वार - (देखें मूलद्वार गा. 138 भा. 1 Pg. 161) -

गा. 859

एक जीव अपेक्षा	उत्कृष्ट Δ↑	जघन्य
सम्यक्त्व-सर्वविरति	लोक (i)	लोक का असंख्यवां भाग (ii)
श्रुत	↑* 7/14 लोक (iii)	"
देशविरत	5/14 लोक (iv)	"

(i) केवली समुद्घात में।
(ii) स्व शरीर की अपेक्षा।
(iii) कोई श्रुतज्ञानी अनुत्तर में जाए तब।
सम्यग्दृष्टि श्रुतज्ञानी बद्धायु 6ठी नरक तक जा सकते हैं। वहाँ इलिका गति से उत्पन्न होते हुए 5/14 भाग स्पर्शते हैं।
(iv) देशविरत अच्युत देवलोक में उत्पन्न हुए 5/14 लोक स्पर्शता है।
देशविरत जीव परिणाम को नहीं छोड़ता हुए नरक में नहीं जाता। अत: अधो लोक में स्पर्शना नहीं होती।

अव. क्षेत्र स्पर्शना कही। अब कितने जीवों द्वारा सामायिक की स्पर्शना की गई -

गा. 860

सम्यक्त्व-चारित्र	सर्व सिद्ध (i)
श्रुत	व्यवहार राशि गत जीव (ii)
देशविरत	सर्व सिद्ध के असंख्यातवें भाग सिवाय सभी सिद्ध (iii)

(i) क्योंकि उन्हें स्पर्शे बिना कभी सिद्धत्व नहीं होता।
(ii) व्यवहार राशि के जीवों ने अनंत बार द्वीन्द्रियादि बन चुके हैं।
(iii) सभी सिद्ध के असंख्य भाग करो। उसमें से एक भाग प्रमाण सिद्धों ने देशविरति नहीं स्पर्शी।

Date :

* लोक के 14 भाग -

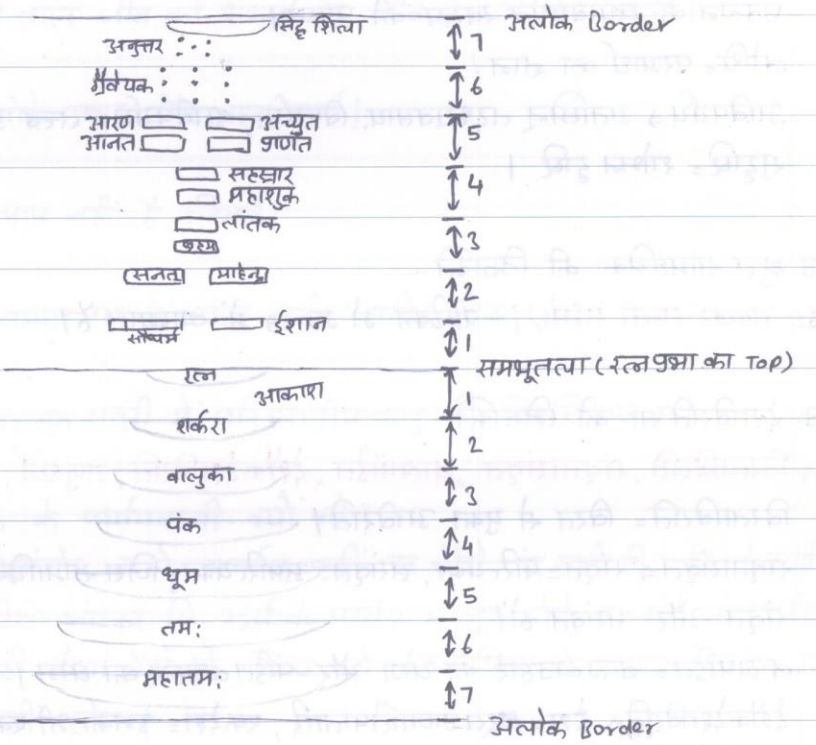

चूर्णि → स्पर्शना - सम्यक्त्व-चारित्र असंख्यात भाग, सर्व लोक (केवली)

" असंख्यात भाग (छाद्मस्थिक समुद्घात)

श्रुत - देशविरति असंख्यात भाग

(एक या नाना जीव अपेक्षया)

अन्य मत में मलयगिरि म. का मत।

मलय.

टीका अव. ७. स्पर्शना द्वार पूर्ण। ८. निरुक्ति द्वार -

निरुक्ति = चारों 4. की सामायिक का क्रिया-कारक-भेद-पर्यायों द्वारा शब्द-अर्थ कहने वाला वचन।

सम्यक्त्वसामायिक की निरुक्ति -

गा. 86। सम्यग्दृष्टि, अमोह, शुद्धि, सद्भाव दर्शन, बोधि, अविपर्यय, सुदृष्टि इत्यादि निरुक्ति है।

सम्यग्दृष्टि = जीवादि अर्थों का प्रशस्त दर्शन।

अमोह = अवितथग्राह। शुद्धि = मिथ्यात्वमल दूर करने से तत्त्वार्थश्रद्धा रूप सम्यग्दर्शन।

Date :

सद्भावदर्शन ⇒ सत् = जिनप्रवचन, तस्य भावः = यथावस्थित स्वरूप, उसका दर्शन = प्राप्ति; प्रवचन के यथावस्थित स्वरूप की प्राप्ति।
बोधि = परमार्थ का ज्ञान।
अविपर्यय ⇒ अतस्मिन् तदध्यवसायः विपर्ययः; अविपर्यय = तत्त्व अध्यवसाय।
सुदृष्टि = शोभन दृष्टि।

अव. श्रुत सामायिक की निरुक्ति –

गा.862 अक्खर सन्नी सम्मं...। – पीठिका में गा.19 में व्याख्यात है।

अव. देशविरति सा. की निरुक्ति –

गा.863 विरताविरति, संवृतासंवृत, बालपंडित, देशैकदेशविरति, अणुधर्म, अगारधर्म।
विरताविरति = विरत से युक्त अविरति।
संवृतासंवृत ⇒ संवृत = परित्यक्त, असंवृत = अपरित्यक्त; जिस सामायिक में सावद्ययोग संवृत और असंवृत हों।
बालपंडित = बालव्यवहार का योग और पंडितव्यवहार का योग।
देशैकदेशविरति ⇒ देश = स्थूल प्राणातिपातादि, एकदेश = उनका भी एक भाग वृक्षच्छेदादि, इन दोनों से विरमण।
अणुधर्म = अल्प धर्म।
अगारधर्म ⇒ न गच्छन्ति इति अगाः वृक्षाः तैः कृतम्, आ राजते इति अगारं-गृहं, तत्र स्थितानां धर्मः अगारधर्मः।

अव. सर्वविरति सा. की निरुक्ति –

गा.864 सामायिक, समयिक, सम्यग्वाद, समास, संक्षेप, अनवद्य, परिज्ञा, प्रत्याख्यान।

1. सामायिक ⇒ सम = राग-द्वेष में मध्यस्थ। आय = जाना। समस्य आयः समायः = मध्यस्थ का जाना यानि मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति। स्वार्थिक इकण् सामायिक।
अर्थात् एकांत से उपशांत गमन।

2. समयिक ⇒ सम्यक् अयः समयः = सम्यग् दया पूर्वक प्रवर्तन (6 जीवकाय में)।
मतु अर्थ में 'इक' प्रत्यय = 6 जीवकाय में सम्यग्दया पूर्वक प्रवर्तन वाला।

3. सम्यग्वाद ⇒ रागादि के त्याग से यथावद् कहना।

Date :

4. समास = अस् धातु फेंकना, आसः = क्षेपः निकालना। सम् शब्द - प्रशंसा में, संसार से बाहर जीव को फेंकना या जीव से कर्म को फेंकना।

5. संक्षेप = थोड़े अक्षर और बहुत अर्थ।

6. अनवद्य = पाप नहीं है जिसमें।

7. परिज्ञा = समस्त पाप के त्याग पूर्वक (परि) ज्ञान (ज्ञा)।

8. प्रत्याख्यान = गुरु साक्षी में परिहरणीय वस्तु की निवृत्ति कहना।

★ 9. सामायिक के पर्यायवाची क्यों कहे?
उ. ताकि संमोह न हो अर्थात् ~~कहीं पर~~ जैसे चंद्र शशी वि. चंद्र के पर्याय और सूर्य सविता भास्कर वि. सूर्य के पर्याय मालूम होने पर कोई भी पर्याय सुनकर संमोह नहीं होता वैसे ही शिष्य को सामायिक के पर्याय मालूम होने पर संमोह नहीं होता।

अव. सर्वविरति के 8 पर्यायों का अनुष्ठान करने वाले 8 महात्मा के दृष्टांत –
गा.865 सामायिक - दमदंत, समयिक - मेतार्य, सम्यग्वाद - कालकाचार्य, समास - चिलातिपुत्र,
(प्रतिद्वार) संक्षेप - आत्रेय, अनवद्य - धर्मरुचि, परिज्ञा - इलापुत्र, प्रत्याख्यान में तेतलिपुत्र।

1. सामायिक में दमदंत मुनि –
भा.151 हस्तिशीर्ष नगर x दमदंत राजा xx हस्तिनापुर में 5 पांडव x उनका परस्पर वैर क्योंकि 5 पांडवों ने दमदंत जब राजगृह में जरासंघ के पास गया था तब उसका राज्य लूटा और जलाया था x दमदंत ने आकर हस्तिनापुर को घेरा x 5 पांडव बाहर नहीं निकले x दमदंत के बार-बार उकसाने पर भी नहीं आए x वह स्वनगर गया x एकदा दीक्षा ली x एकलविहारी हुए x हस्तिनापुर पहुँचे x प्रतिमा में रहे x यात्रा के लिए निकले 5 पांडवों ने वंदन किए x फिर दुर्योधन ने बीजोरे का फल मारा x पीछे सेना ने पत्थर का ढेर किया x वापस आते हुए ~~दुर्योधन ने~~ युधिष्ठिर ने पूछा - यहाँ तो साधु थे x कहा - दुर्योधन ने पत्थर का ढेर किया x उसने बाहर निकाला x तैल से मालिश कर खमाया x उन मुनि को पांडव और दुर्योधन पर समभाव था xx।

Date :

अब मुनि कैसे होते हैं, वह कहते हैं -

गा.866 वंदन किए जाने पर उत्कर्ष को प्राप्त नहीं होते, हीलना किए जाने पर क्रोध से जलते नहीं। धीर ऐसे मुनि शांत-प्रशांत चित्त से राग-द्वेष का घात कर विचरते हैं।

गा.867 यदि वे सुमन वाले हो, भाव से पापमन वाले न हो, स्वजन और जन में सम हो, मान-अपमान में सम हो तो ही समण कहे जाते हैं।

★ 'समण' के 2 अर्थ - श्रमण और समन।
समन = मन सहित।

★ सुमन = धर्मध्यानादि से अच्छे मन वाले हो।

★ पापमन = निदान में प्रवृत्त मन।

गा.868 उन मुनि को कोई द्वेष्य या प्रिय नहीं होता इसलिए वे सर्व जीवों में समन होते हैं।

अब 2. मेतार्य मुनि का दृष्टांत (देखें प्रतिद्वार गा.865 Pg. No. 21)

गा.869-70 जो क्रौंच पक्षी का अपराध होने पर भी जीवदया से स्वयं के जीवन की उपेक्षा करते हुए क्रौंच का नाम नहीं बोले, उन मेतार्य ऋषि को मैं नमस्कार करता हूँ।

गा.870 सिर बाँधने से जिनकी दोनों आँखे निकल गई और जो मेरु पर्वत की तरह संयम से चलित नहीं हुए, उन मेतार्य ऋषि को मैं नमस्कार करता हूँ।

साकेत नगर x चंद्रावतंसक राजा x 2 रानी सुदर्शना और प्रियदर्शना x सुदर्शना के 2 पुत्र - सागरचंद्र और मुणिचंद्र x प्रियदर्शना के 2 पुत्र - गुणचंद्र और बालचंद्र x सागरचंद्र युवराज था x मुनिचंद्र को उज्जयिनी दी x
एकदा माह मास में राजा ने प्रतिमा स्वीकारी x दीपक जलने तक का आगार रखा x दासी ने पुनः पुनः तेल डाला कि स्वामी को अंधेरे में तकलीफ न हो x राजा सुबह होने तक मर गया x सागरचंद्र राजा बना x
एकदा प्रियदर्शना को कहा - तू राज्य ले, मैं दीक्षा लूँगा x उसने मना किया क्योंकि वह सोचती है - मेरा पुत्र तो छोटा है, उसे राजा बनाने पर राज्य चला जाएगा अतः इसे ही

Date :

राजा रहने दो x एकदा सागरचंद्र को राज्यलक्ष्मी से शोभता देख सोचा- अब इसे मारूँ x

सागरचंद्र को भूख लगने पर रसोईए को Message भेजा कि मेरे महल में ही भोजन भेज दो x दासी मोदक ले जाती है x रास्ते में शिवदर्शना ने उसके हाथ से मोदक लिया x उसने स्वयं के हाथ पहले ही विष भ्रावित किए थे x हाथ से मोदक विष भ्रावित कर भेज दिया x दासी राजा के पास पहुँची x उस समय शिवदर्शना के दोनों पुत्र राजा के पास थे x मोदक के दो टुकड़े कर दोनों को दिया x दोनों को चक्कर आने लगे x वैद्य बुलाया x स्वस्थ हुए x फिर शिवदर्शना को पूछा, धिक्कारा और कहा- मैं राज्य दे रहा था, तब मना किया, यदि मैं मर जाता तो परलोक का भाता लिए बिना ही संसार में भटकता x दीक्षा ली x

एकदा उज्जयिनी से दो साधु आए x सागरचंद्र मुनि ने पूछा-वहाँ सब निरुपसर्ग है ? x साधु-राजपुत्र और पुरोहित पुत्र साधुओं को परेशान करते हैं x सागरचंद्र मुनि उज्जैनी गए x वहाँ सांभोगिक साधु थे, उन्होंने गोचरी की विनंती की x सागर.मुनि- मैं आत्मलब्धिक हूँ, मुझे स्थापना कुल बताओ x एक बाल साधु उनके साथ आए x बाल साधु ने पुरोहित का घर बताया x सागर.मुनि-बड़ी आवाज से धर्मलाभ कहकर घुसे x तभी हाहाकार करती स्त्रियाँ बाहर आई x राजपुत्र और पुरोहितपुत्र ने दरवाजा बंद कर कहा- मुनि! नाचो x वे पात्रे नीचे रखकर नाचे किंतु उन्हें वाजिंत्र बजाना नहीं आता x मुनि-चलो युद्ध करें x युद्ध किया x मुनि ने मर्मस्थान पर मारा, संधि उतार दी और दरवाजा खोलकर बाहर उद्यान में गए x राजा ने तलाश कराई x उपाश्रय में रहे साधु बोले- एक साधु बाहर से आया है किंतु अभी वह कहाँ है, हम नहीं जानते x ढूँढते हुए उद्यान में देखा x राजा आया, खमाया x यदि दीक्षा ले तो छोड़ूँ x स्वीकारने पर हाथ से पकड़कर ऐसे हिलाया कि सभी सांधे स्थिर हुए x दीक्षा दी x राजपुत्र ने 'मेरे काका हैं' ऐसा जानकर बराबर दीक्षा पाली x पुरोहित पुत्र दुर्गंछा करता है कि इसने कपट से दीक्षा दी x दोनों देवलोक गए x संकेत करते हैं कि जो पहले च्यवे उसे संबोध देना xx

पुरोहित पुत्र दुर्गंछा से चंडालत्व के गर्भ में जन्मा x उस चंडालत्व की एक सेठानी से मैत्री थी x सेठानी ने उसे कहा था तेरा सब मांस मैं खरीदूँगी, अन्यत्र मत जाना x दोनों पड़ोसी बन गए x सेठानी निंदू (मृतपुत्र को जन्म देने वाली) थी x चंडालत्व ने एकांत में पुत्र बदला x मेतार्य नाम किया x देव द्वारा संबोध देने पर भी नहीं मानता x 8 सेठ की पुत्री से विवाह किया x विवाह के दिन देव चंडाल में घुस कर रोने लगा - यदि पुत्री जीती तो मैं भी विवाह करता x चंडालत्व ने सही बात की x चंडाल ने गुस्से में शिबिका में से मेतार्य को नीचे गिराया x देव ने कहा- अब मान जा x मेतार्य - निंदा को दूर करो तो कुछ काल बाद दीक्षा

Date :

लूँगा x एक बकरा दिया जो रत्न देता था x पिता को रत्न का थाल भरकर दिया और कहा-राजा की पुत्री लाओ ? x पिता थाल लेकर राजा के पास गया x राजा- क्या चाहिए ? x पिता- आपकी बेटी x राजा निकाल देता है x ऐसे रोज राजा रत्न लेता है x अभय ने एक दिन पूछा-रत्न कहाँ से लाता है ? x पिता- बकरे से x अभय- बकरे को यहाँ ला x लेकर गए x वहाँ दुर्गंध छोड़ता है x अभय ने सोचा- यह देव का प्रभाव है x अतः परीक्षा करने कहा- वैभार गिरि पर रथ का मार्ग बना x देव से बनवाया x सोने का महल बनवाया फिर अभय बोला- यहाँ समुद्र लाकर उसमें न्हाकर शुद्ध हो तो तुझे राजकन्या दूँगी x मेतार्य ने किया x राजकन्या परणाई x 12 वर्ष भोग भोगे x देव पुनः आया x मेतार्य की पत्नियों ने 12 वर्ष मांगे तो मेतार्य रुका x सबने दीक्षा ली x

मेतार्य मुनि 9 पूर्व पढ़े x एकलविहारी प्रतिमा स्वीकारकर राजगृही में विचरे x सोनी के घर गए x राजा के 108 जौ पूजा के लिए बना रहा था x नौकरों को आज्ञा की किंतु भिक्षा नहीं आई x सोनी स्वयं अंदर गया x जौ क्रौंच पक्षी चुग गया x राजा की पूजा का Time हो रहा था अतः उसने सोचा- जिसने लिए होंगे उसके 8 टुकड़े करूँगा x मुनि को पूछा x वे मौन रहे x सिर पर चमड़ा बांधा, जिससे आँखें निकलकर जमीन पर गिरी x उसी समय लकड़ी को फाड़ते हुए क्रौंच पक्षी के गले में खील घुस गई x उसने जौ वमे x लोग बोले- हे पापी! ये रहे तेरे जौ x मेतार्य मुनि सिद्ध हुए x

लोगों से बात राजा को पहुँची x राजा ने सोनी को मारने का आदेश दिया x सोनी और उसकी पत्नी ने दरवाजा बंदकर दीक्षा ली x सैनिक पकड़ने आए तो धर्मलाभ कहा x राजा ने छोड़ दिया और दीक्षा छोड़ने का मना किया।

अव. 3. सम्यग्वाद में कालकाचार्य दृष्टांत – (देखें प्रतिद्वार गा. 865)

गा. 87। तुरुमिणी नगरी x जितशत्रु राजा x भद्रा ब्राह्मणी का पुत्र दत्त x दत्त के मामा आर्य कालक ने दीक्षा ली x दत्त द्यूत और मद्य का व्यसनी था x धीरे-धीरे वह प्रधान दंडिकराजा बना x फिर राजपुत्र*[1] को भेदकर मुख्य राजा बना x बहुत यज्ञ करवाए x एकदा मामा दिखे तो पूछा- यज्ञों का क्या फल है ? x कालकाचार्य- क्या तू धर्म पूछता है तो धर्म कहता हूँ x दत्त ने पुनः वही पूछा x कालका.- तू अधर्म पूछता है तो अधर्म कहूँ x पुनः वही पूछा x कालका.- अशुभकर्म का उदय पूछता है तो वह कहता हूँ x पुनः वही पूछा x कालका.- यज्ञों का फल नरक है x दत्त- इसमें प्रमाण क्या ? x आचार्य- आज से 7वें दिन तू कुत्तों की कुंभी में पकाया जाएगा x दत्त- इसका भी प्रमाण क्या ? x आ.- 7वें दिन तेरे मुँह में विष्ठा पड़ेगी x दत्त गुस्से में बोला- आप कैसे मरोगे ? x आ.- मैं बहुत काल दीक्षा पालकर देवलोक जाऊँगा x दत्त ने सैनिकों को कहा- इसे पकड़ लो x सैनिक पकड़ने में डरे और बोले- आप ही आगे रहो, जिससे हम उसे पकड़े x राजा गुप्तवास में रहता है x दिनभूल

Date :

गया x 7वें दिन राजमार्ग साफ़ कराकर मनुष्यों का कड़क पहरा लगाता है x एक मंदिर का पूजारी फूल लेकर मंदिर जा रहा था x रास्ते में संज्ञा से आकुल होने पर वहीं संज्ञा व्युत्सर्जन कर फूल से ढाँक देता है x राजा उस दिन निकला कि जाकर उस साधु को मारता हूँ x उस रास्ते पर एक घोड़े की खुरी से पुष्प के साथ संज्ञा उछलकर उसके मुँह में गई x वह समझ गया कि मैं आज मरूँगा x वह पीछे आने लगा x तब अन्य सामंत राजा समझे कि मृत्यु का रहस्य खुल गया लगता है x अत: महल में घुसने के पहले ही उसे पकड़ा, नया राजा बनाया x नए राजा ने उसे कुत्ते की कुंभी में डालकर दरवाजा बंद किया x कुंभी के नीचे आग जलाई x आग से जलते कुत्तों ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए x।

[दत्त ने मौत की सजा देने के लिए कुत्ते की कुंभी बनाई थी जिसमें जिंदा कुत्ते थे। अपराधी को अंदर डालकर नीचे से जलाते। गर्मी से कुत्ते उसके टुकड़े कर देते]

टीप्पणक

* → यहाँ 'राजपुत्र' के स्थान पर ~~मूल~~ टीका में 'कुलपुत्र' शब्द लिखा है। कुलपुत्र का अर्थ यहाँ परंपरा से आए हुए सामंत राजा-मंत्री वि. लेना। उन्हें मारकर दत्त स्वयं राजा बना।

मलयगीरीय टीका अव.

५. समास में चिलातीपुत्र दृष्टांत →

एक ब्राह्मण स्वयं को पंडित मानता हुआ जिनशासन की निंदा करता है x बाद में हारने पर शर्त अनुसार उसने दीक्षा ली x बाद में देवता द्वारा प्रतिबोध कराने पर जैन धर्म उसे रुचा किंतु दुर्गंच्छा नहीं छोड़ी x उसके स्वजन भी शांत हुए किंतु पत्नी नहीं छोड़ती है x उसने कामण-टुमण किए x वह मर गया x देव बना x उसके शोक में पत्नी ने दीक्षा ली x अनालोचित मरकर देवी बनी x च्यवकर राजगृही में धन सार्थवाह के 5 पुत्र पर पुत्री बनी x ब्राह्मण का जीव सार्थवाह की चिलाती नामक दासी का पुत्र बना x पुत्री का सुसमा नाम रखा x चिलातीपुत्र सुसमा की देखरेख ~~करता है x~~ के लिए रखा किंतु वह कुचेष्टा करता है x उसे निकाल दिया x वह सिंहगुफा नामक चोरपल्ली में चोर का सरदार, क्रूर बना x एकदा चोरों को कहा- धन सार्थवाह को लूटना है, धन तुम्हारा, सुसमा मेरी x अवस्वापिनी निद्रा देकर नगर में घुसे x उसने धन सेठ का तिरस्कार किया और सुसमा तथा धन लेकर भागे x धन सेठ ने सैनिकों को बुलाकर कहा- तुम चोर पकड़ो, धन तुम्हारा, पुत्री मेरी x सैनिक पीछे दौड़े x एकदम पास में पहुँचे तो चोर धन छोड़कर भाग गए x सैनिक धन लेकर वापस आ गए x धन सेठ पुत्रों के साथ चिलातीपुत्र के पीछे पड़ा x एकदम पास में पहुँचे तो वह सुसमा का सिर लेकर भाग गया x धन सेठ वि. वापस आ गए x भूख लगने पर सुसमा के धड़ का मांस खाया x नगर में

* देखो ~~चूर्णि और~~ टिप्पणक Pg. 28 पर।

Date :

जाकर पुनः भोग भोगने लगे x चिलात ने एक साधु को देखा x कहा- संक्षेप में धर्म कहो नहीं तेरा भी सिर उड़ा दूँगा x साधु - उपशम विवेक संवर x एकांत में गया x सोचा - क्रोधादि का उपशम, विवेक धन - स्वजन का करना चाहिए, इंद्रिय - मन का संवर करना चाहिए x अतः सुसमा का सिर, तलवार छोड़ दी x फिर ध्यान किया x खून की गंध से कीड़ियाँ खाने लगी x चलनी जैसा किया x 3 अहोरात्र में देवलोक गए xx। *↑

इसी अर्थ को गाथा में कहते हैं -

गा.872 जो उपशम-विवेक-संवर रूप 3 पद से सम्यक्त्व को प्राप्त हुए और संयम में आरूढ़ हुए ऐसे चिलातिपुत्र को मैं नमस्कार करता हूँ।

गा.873 खून की गंध से जिसके शरीर में पैरों से कीड़ियाँ चढ़ी ~~उस~~ और मस्तक को खाती है, ऐसे दुष्करकारक को मैं नमस्कार करता हूँ।

गा.874 धीर ऐसे चिलातीपुत्र चींटियों द्वारा खाए ~~जाए~~ जाते हुए चलनी जैसे कराए, तो भी उन्होंने उत्तमार्थ को प्राप्त किया।

गा.875 2½ अहोरात्र में चिलातीपुत्र रम्य और अप्सरा गण से व्याप्त देवेंद्र की तरह देवलोक को प्राप्त हुए।

अव. 5. संक्षेप द्वार में आत्रेय दृष्टांत - (देखें प्रतिद्वार गा. 865)

गा.876 4 वात्स ऋषि ने 1-1 लाख श्लोक के ग्रंथ बनाए x जितशत्रु राजा के पास गए, सुनने को कहा x राजा - कितना प्रमाण है? x ऋषि - 4 लाख श्लोक x राजा - इतने Time में मेरे राज्य का कार्य बिगड़ेगा अतः कम करो x ऐसे कम करते हुए 1-1 श्लोक रहा x तब भी राजा नहीं माना तो 1 श्लोक किया -

जीर्णे भोजनमात्रेयः, कपिलः प्राणिनां दया। बृहस्पतिरविश्वासः, पाञ्चालः स्त्रीषु मार्दवम्॥

पचने पर भोजन करो, प्राणी की दया करो, किसी पर विश्वास मत करो, स्त्री पर नम्रता रखो।

इस प्रकार सामायिक भी 14 पूर्व का संक्षेप है।

अव. 6. अनवद्य द्वार में धर्मरुचि दृष्टांत -

गा.877 वसंतपुर x जितशत्रु राजा, धारिणी देवी x धर्मरुचि पुत्र x राजा वृद्ध होने पर पुत्र को राज्य देकर दीक्षा की इच्छा करता है x पुत्र ने माता को पूछा - पिता राज्य क्यों छोड़ते हैं? x माता - राज्य से संसार बढ़ता है x धर्मरुचि भी राजा के साथ तापस बना x अमावास्या के पहले वहाँ घोषणा करते हैं कि कल अमावस है अतः पुष्प-फल का संग्रह करो x धर्मरुचि ने सोचा - यदि रोज अनाकुट्टी हो तो सुंदर x एकदा वहाँ से साधु निकले x

Date :

उसने पूछा - क्या आपको अनाकुट्टी नहीं है, जिससे आप अरबी में जाते हो x साधु - हमें तो यावज्जीव अनाकुट्टी है x वह विचारने लगा x जातिस्मरण हुआ x प्रत्येकबुद्ध हुआ xx।

अव. 7. परिज्ञा द्वार में इत्वापुत्र दृष्टांत -

गा.878 ज्ञपरिज्ञा से जीव और अजीवों को जानकर, जो सावद्ययोग को प्रत्याख्यान परिज्ञा से जानता है, वह इत्वापुत्र।

→ दृष्टांत Pg. No. 13 पर आ चुका है।

अव. 8. प्रत्याख्यान द्वार में तेतलिपुत्र दृष्टांत -

गा.879 तेतलिपुर x कनकरथ राजा, पद्मावती रानी x राजा भोगलोलुपता से पुत्रों को अंग छेद देता है x तेतलिपुत्र मंत्री x उसने पुष्पकार सोनी (कलाद = सोनी लिप्पणके) की पुत्री पोट्टिला महल की छत पर देखकर मांगी x मित्ती x मंत्री और रानी परस्पर बात करते हैं कि एक पुत्र की रक्षा करो जिससे भिक्षा के आधार भाजन की तरह, वह तेरा और मेरा आधार होगा x पोट्टिला और रानी ने एक साथ प्रसूति की x पोट्टिला की पुत्री रानी को दी, रानी का पुत्र पोट्टिला को x कनकध्वज नाम रखा, कलाएँ सीखी x एकदा पोट्टिला तेतलिपुत्र को अनिष्ट हुई x उसने साध्वी को पूछा - कुछ ऐसा है जिससे मैं विप्रिय होऊँ x साध्वी - ऐसा कहना हमें कल्पता नहीं है, धर्म कहा x दीक्षा के लिए तेतलिपुत्र को पूछा x मंत्री - यदि बोध देगी तो x उसने स्वीकार कर दीक्षा ली x देवलोक गई x राजा मरा x रहस्य खुला x कनकध्वज को राजा बनाया x रानी ने उसे कहा - तेतलिपुत्र के साथ अच्छी तरह रहना, उसके प्रभाव से तू मरा राजा बना है x देव मंत्री को बोध देता है x बोध नहीं पाया x उसने सबको पराङ्मुख किया x जब राजा के पास गया तो राजा पराङ्मुख रहता है x डरा हुआ घर आया x परिजन विपरीत हुए x डरकर तालपुट विष खाया तो भी न मरा x गले पर तलवार चलाई, तो भी गला नहीं कटा x फाँसी लगाई तो रस्सी टूटी x पत्थर गले में बांधकर अथाग पानी में गया तो वह भी सूख गया x घास में आग लगाकर घुसा तो भी नहीं जला x जंगल में भागा x पीछे हाथी पड़ा, ऊपर से बाण बरसे, आस पास अंधेरे में कुछ दिखता नहीं है x डरकर सोचा - पोट्टिला बचाएगी अतः आवाज लगाई - हे पोट्टिला! मैं कहाँ जाऊँ? वि. ज्ञाताधर्मकथा में से जानना x देव - दीक्षा ही शरण रूप है, जैसे रोगी को औषध वि. ज्ञाताधर्म कथा में से जानना x वह बोध पाया x कहा - राजा को शांत करो x देव ने सब शांत किया x खमाकर

(→ऋषिभाषित से जानना - चूर्णि)

Date :

दीक्षा ली xx

चूर्णिकार ऐसा कहते हैं→ देव आकाशवाणी करता है – दीक्षा ही शरणरूप है वि. x

सुनकर उसे जातिस्मरण हुआ x पूर्वभव –

जंबूद्वीप, महाविदेह, पुष्कलावती विजय, पुंडरिकिणी नगरी x महापद्मराजा x दीक्षा ली x 14 पूर्व पढ़े x मासिक संलेखना से काल कर महाशुक्र कल्प में देव बना x वहाँ से मैं यहाँ आया x

फिर स्वयं प्रमदवन उद्यान में अशोकवृक्ष नीचे बैठा x विचारते हुए 14 पूर्व उपस्थित हुए x केवलज्ञान हुआ x देवों ने महिमा की x कनकध्वज राजा सपरिवार आकर खमाते हैं x देशना दी xx

इस प्रकार उसने प्रत्याख्यान किया xx। प्रतिद्वार गा. 865 पूर्ण।

टीप्पणक → * ये चिलातीपुत्र काल कर सहस्रार देवलोक में गए, ऐसा चूर्णि-कार कहते हैं। प्रस्तुत उपलब्ध चूर्णि में भी यही उल्लेख है। (Pg. No. 26 पर देखें *)

चूर्णि Δ मलयगिरि म. ने लिखा है, यह चूर्णिकार का मत है। ~~इन~~ उपलब्ध आवश्यक चूर्णि में भी यही मत है।

मलयगिरीय टीका 2. निरुक्ति द्वार पूर्ण हुआ (देखें मूलद्वार गा. 137-8 भा. 1)। इसके साथ ही उपोद्घात निर्युक्ति भी पूर्ण हुई। अब सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति कहने का अवसर है (देखें अनुयोगद्वार Chart, Pg. No. 111 भा. 1 में)। किंतु सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति का अवसर होने पर भी नहीं कहते हैं क्योंकि अभी सूत्र ही नहीं है तो निर्युक्ति किसकी कहें। अतः सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति को सूत्रानुगम में कहेंगे।

प्र. तो सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति का यहाँ उपन्यास क्यों किया?

उ. क्योंकि वह भी सामान्य से निर्युक्ति है।

अव. अब सूत्रानुगम का अवसर है (देखें अनुयोगद्वार Chart, Pg. 111 भा. 1)। अतः सूत्र कहना चाहिए। सूत्र के लक्षण पहले कहे जाते हैं –

गा. 880 अल्पग्रंथ और महान् अर्थ वाला, 32 दोष रहित तथा 8 गुणों से युक्त सूत्र होता है।

Date :

अव. सूत्र के 32 दोष –

गा. 881 1. अलीक 2. उपघात जनक 3. निरर्थक 4. अपार्थक 5. छल 6. दुहिल 7. निस्सार 8. अधिक 9. न्यून 10. पुनरुक्त 11. व्याहत 12. अयुक्त

गा. 882 13. क्रमभिन्न 14. वचन भिन्न 15. विभक्ति भिन्न 16. लिंगभिन्न 17. अनभिहित 18. अपद 19. स्वभावहीन 20. व्यवहित 21. काल 22. यति 23. अलंकार 24. समयविरुद्ध 25. वचनमात्र 26. अर्थापत्ति 27. असमास

गा. 883 28. उपमा 29. रूपक 30. अनिर्देश 31. पदार्थ 32. संधि, ये सूत्र के 32 दोष हैं।

1. अलीक = 29. अभूत का उद्भावन – प्रधान जगत् का कारण है।
भूत का निह्नव – नास्ति आत्मा।

2. उपघात जनक = जीवहिंसा वाला eg. वेद में कही हिंसा धर्म है।

3. निरर्थक – वर्णों के क्रम निर्देश की तरह या आर् भात् एस् आदि आदेश की तरह अथवा डित्थादि की तरह।
आर् भात् एस् वि. आदेशों में वर्णों के क्रम का निर्देशमात्र है, कोई अभिधेय अर्थ नहीं है। (टिप्पणक)

4. अपार्थक = पूर्वापर असंबद्ध eg. 10 दाड़िम, 6 पुड़ले, कुंड, बकरे का चमड़ा, मांसपिंड, है कीड़ी। उत्तर दिशा में जल्दी कर, स्पर्शनिक के पिता, प्रतिशीन वि.।

5. छल = अर्थ के विकल्प की उपपत्ति से वचन का विघात करना, वाक्छलादि
eg. नवकंबल देवदत्त आदि। ~~स्पष्टता~~
[यहाँ आदि शब्द से अर्थच्छल लेना। वाक्छल और अर्थच्छल, दोनों में एक ही उदाहरण विवक्षा से हो सकता है।
नवः कम्बलः यस्य स नवकम्बलो देवदत्तः = नए कंबल वाला देवदत्त
नव कम्बलाः " " " " = नौ " " " "
इस प्रकार यहाँ वचन और अर्थ की छलना है। अन्य उदाहरण वाक्छल और अर्थच्छल के क्रम से स्वयं बुद्धि से विचारना। टिप्पणक]

6. दुहित्व = द्रोह करने के स्वभाव वाला eg. इस पूरे जगत् को मारकर जिसकी बुद्धि

Date :

लेपाय नहीं, वह कीचड़ से आकाश की तरह पाप से नहीं जुड़ता।
अथवा
दुहित = कलुष, जिससे पुण्य-पाप में सम बुद्धि हो eg. जितना दिखता है, उतना ही लोक है, हे भद्र! जिसे बहुश्रुत कहते हैं, उस वृक्षपर को देख (1)।

7. निस्सार = सार रहित eg. वेदवचन।

8. अधिक = जिसमें अधिक वर्णादि हों।
अथवा

9. ~~न्यून = वर्णादि से न्यून~~। हेतु-उदाहरण जिसमें अधिक हो eg. अनित्यः शब्दः कृतकत्वप्रयत्नानन्तरीयकत्वाभ्यां घटपटवत् ।

10. न्यून = वर्णादि से न्यून या हेतु-उदाहरण से न्यून eg. अनित्यः शब्दः घटवत् अनित्यः शब्दः कृतकत्वात् ।

10. पुनरुक्त = शब्द और अर्थ को पुनः कहना (अनुवाद सिवाय)।
eg. इंद्र इंद्र, ~~देवदत्तः दिवा न भुङ्क्ते, रात्रौ भुङ्क्ते~~ (शब्द पुनरुक्त)
इंद्र शक्र, देवदत्तः दिवा न भुङ्क्ते, रात्रौ भुङ्क्ते (अर्थ पुनरुक्त)

11. व्याहत = जहाँ पूर्व से पर का व्याघात हो eg. कर्म और फल है किंतु कर्म का कर्ता नहीं है।

12. अयुक्त = युक्ति रहित eg. उन हाथियों के मद बिंदुओं से हाथी-अश्व-रथ को बहाने वाली घोर नदी निकली।

13. क्रमभिन्न = जहाँ यथासंख्य अनुदेश न किया जाए eg. स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुः-श्रोत्राणामर्थाः स्पर्शरूपशब्दगन्धरसाः ।

14. वचनभिन्न = जिसमें वचन का व्यत्यय हो eg. वृक्षावेतौ पुष्पिताः।

15. ~~विभक्तिव्यत्यय~~ विभक्तिभिन्न eg. एष वृक्षम् ।

Date :

16. लिंगभिन्न eg. अयं स्त्री ।

17. अनभिहित eg. वैशेषिक को 7वां पदार्थ या दशवां द्रव्य, सांख्य को प्रधान-पुरुष से अधिक, बौद्धों के लिए 4सत्य से अधिक ।

18. अपद = काव्य में जिस छंद का अधिकार हो उसकी जगह अन्य छंद करना

20. व्यवहित = प्रकृत विषय को छोड़कर अप्रकृत को विस्तार से कहकर पुन: प्रकृत कहना ।

19. स्वभावहीन eg. शीत: अग्नि: ।

21. काल eg. 'रामो वनं प्राविशद्' की जगह 'प्रविशति' कहना ।

22. यति दोष = विरामस्थान पर रुकने की जगह अस्थान में रुकना

23. छवि = अलंकार से शून्य होना ।

24. समयविरुद्ध = सिद्धांत से विरुद्ध eg. सांख्य को असत् कार्य, वैशेषिक को सत् कार्य ।

25. वचनमात्र = हेतु रहित eg. विवक्षित भूप्रदेश में कोई कहे यह लोकमध्य है ।

26. अर्थापत्ति = जहाँ अनिष्ट अर्थापत्ति निकले eg. 'ब्राह्मण को मारना नहीं चाहिए' ऐसा कहने पर 'ब्राह्मण सिवाय मारना चाहिए' ऐसी अनिष्ट अर्थापत्ति ।

27. असमास = समास का व्यत्यय या समास होने पर भी समास नहीं करना eg. 'राजपुरुष' तत्पुरुष की जगह विशेषण या बहुव्रीहि समास करना या समास नहीं करना ।

28. उपमा = अयोग्य उपमा देना eg. समुद्रोपम बिंदु, मेरुसम सरसव ।

Date :

29. रूपक = स्वरूप के अवयवों का व्यत्यय eg. पर्वत में पर्वत के अवयव न कहकर समुद्र के अवयव कहना।

30. निर्देश = उद्देश्य पदों की एकवाक्यता न होना eg. 'देवदत्त चावल पकाता है' में पकाता शब्द न कहना।

31. पदार्थ = वस्तु के पर्यायवाचक पदार्थ को अलग मानना eg. नैयायिक द्रव्य के पर्याय रूप सत्तादि को भिन्न पदार्थ मानता है।

32. संधि = प्राप्ति होने पर संधि न करना या संधि जहाँ नहीं करना है, वहाँ करना।

अव. गा.880 में कहे अनुसार सूत्र के 8 गुण -

गा.885 1. निर्दोष 2. सारवत् 3. हेतुयुक्त 4. अलंकृत 5. उपनीत 6. सोपचार 7. मित 8. मधुर।

2. सारवत् = बहुत पर्याय वाला eg. सामायिक की बहुत पर्याय की तरह।
3. हेतुयुक्त = अन्वय व्यतिरेक युक्त।
4. अलंकृत = उपमादि से युक्त
5. उपनीत = जिसमें उपनय कराया हो।
6. सोपचार = जिसमें ग्राम्य भाषा न हो। (ग्राम्य ≠, अग्राम्य)
7. ~~अ~~मित = वर्णादि की नियत संख्या वाला।
8. मधुर = श्रवण में मनोहर।

अव. अथवा ये 8 गुण -

गा.886 1. अल्पाक्षर 2. असंदिग्ध 3. सारवत् 4. विश्वतो-मुख 5. अस्तोभक 6. अनवद्य, सर्वज्ञ भाषित ऐसा सूत्र होता है।

2. असंदिग्ध = संदेह रहित eg. सैन्धव शब्द लवण-पर-घोटकादि अनेक अर्थ वाला होने से संदिग्ध है।
3. सारवत् = अनेकार्थ कहने वाला।
4. विश्वतोमुख = अनेकमुख वाला क्योंकि प्रत्येक सूत्र में 4 अनुयोग का कथन है।
5. अस्तोभक ⇒ स्तोभक यानि च, वा, वै, हा, हि वि. अव्यय, उनसे रहित।
6. अनवद्य = अहिंसा का प्रतिपादक।

Date :

★ सूत्र के लक्षण कहे। अब सूत्र कहना चाहिए। यहाँ से सूत्रानुगम द्वार, सूत्रालापक न्यास निक्षेप द्वार और सूत्रस्पर्शक निर्युक्ति, ये 3 द्वार साथ में चलेंगे। (देखें भा.1 में Pg. No. 111 पर अनुयोग द्वार Chart। उस Chart के विवेचन में Pg. No. 117 पर लिखा है - सूत्रालापक निष्पन्न द्वार सूत्रानुगम द्वार में कहेंगे। तथा इसी भा. 3 में Pg. No. 28 पर लिखा है - सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति को सूत्रानुगम में कहेंगे।)
इन तीन द्वारों के विषय विभाग -
सूत्रानुगम में सूत्र का पदच्छेद कहेंगे।
सूत्रालापक निष्पन्न निक्षेप द्वार में नामादि निक्षेप कहेंगे।
सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति में पदार्थ-विग्रह-विचार-प्रत्यवस्थानादि कहेंगे।

इसके बाद चौथा अनुयोग द्वार 'नय' (देखें अनुयोग द्वार Chart भा.1 Pg. 111) बाकी है। वह भी इन 3 द्वार के साथ ही चलेगा। प्रत्यवस्थानादि नैगम-वि. नय के विषय हैं। अतः नय उनमें ही अन्तर्भाव होंगे।

प्र. यदि ऐसा क्रम है तो निक्षेप द्वार में उत्क्रम से सूत्रालापक न्यास क्यों कहा? [अर्थात् (अनुयोग द्वार Chart में) पहले सूत्रानुगम द्वार होना चाहिए, फिर सूत्रालापक निक्षेप होना चाहिए किंतु सूत्रालापक द्वार पहले क्यों रखा?]
उ. क्योंकि वह भी सामान्य से तो निक्षेप ही है। इसलिए प्रतिपत्ति का लाघव होगा।

अव. अब सूत्रानुगम में सूत्र कहना चाहिए। वह सूत्र ऽ नमस्कार पूर्वक होता है क्योंकि वह सभी श्रुतस्कंधों के अंतर्गत आता है। यह सूत्र की आदि में कहना चाहिए क्योंकि यही सूत्र की शुरुआत (आदि) है।

प्र. मंगल होने से यह सूत्र की आदि में कहते हैं। क्योंकि मंगल 3 प्र. - (i) आदि-नंदी कही गई (ii) मध्य - 'तित्थयर भयवंत' वि. (गा. 80 भा.1) कही गई (iii) अवसान मंगल यह नमस्कार है।
उ. ग्रंथ समाप्ति न होने से अवसानत्व यहाँ नहीं है।
यह आदि या मध्य मंगल भी नहीं है क्योंकि वे तो किए गए हैं। यदि पुनः करोगे तो अनवस्था होगी। अब दूसरे की बुद्धि की मंदता दिखाने से क्या?

Date :

यह सज्जनों का न्याय नहीं है। अतः हम तो गुरु के वचन से धारे हुए तत्त्वार्थ को ही कहते हैं।

प्रथम नमस्कार का व्याख्यान कर फिर सूत्र कहेंगे। अतः 'नमस्कार निर्युक्ति' की द्वार गाथा —

गा.887 (द्वार गा.) A. उत्पत्ति B. निक्षेप C. पद D. पदार्थ E. प्ररूपणा F. वस्तु G. आक्षेप H. प्रसिद्धि I. क्रम J. प्रयोजन K. फल, इन द्वारों से नमस्कार विचारना।

A. उत्पाद – नमस्कार का उत्पाद नयानुसार कहेंगे।
B. निक्षेप = न्यास करेंगे।
C. पद = पद्यतेऽनेन इति।
पद 5 प्र.– 1. नामिक eg. अश्व आदि।
2. नैपातिक eg. च वा ह..
3. औपसर्गिक eg. प्र परा..
4. आख्यातिक eg. पठति भुङ्क्ते..
5. मिश्र eg. संयत...।
D. पदार्थ = पद का अर्थ।
E. प्ररूपणा = प्रकर्ष से रूपण करना, किमादि अनुयोग द्वारों से निरूपण।
F. वस्तु = वसन्ति अस्मिन् गुणाः। नमस्कार का अर्थ कहेंगे।
G. आक्षेप = आशंका करना।
H. प्रसिद्धि = आशंका का परिहार।
I. क्रम = अरिहंतादि विषयों का क्रम।
J. प्रयोजन = अरिहंतादि के क्रम का कारण। अथवा नमस्कार का मोक्ष रूप प्रयोजन। (परंपर फल)
K. फल = स्वर्गादि अनंतर फल।
★ अन्य मत में – प्रयोजन = अनंतरफल। फल = परंपर फल॥

अव. A. उत्पत्ति द्वार –
गा.888 नमस्कार उत्पन्न और अनुत्पन्न है। यहाँ नय हैं। प्रथम नैगम के मत में अनुत्पन्न है। शेष को उत्पन्न है। यदि कैसे? तीन प्र. के स्वामित्व से।

Date :

★ उत्पन्नानुत्पन्न ⇒ उत्पन्नश्चासौ अनुत्पन्नश्च इति 'मयूरव्यंसकादयः' सूत्र से विशेषण समास। कृताकृतं, भुक्तमभुक्तम् की तरह। इस प्रकार के समास स्याद्वादी को ही युक्त लगते हैं, एकांतवादी को नहीं क्योंकि वे एक जगह पर एक काल में परस्पर विरुद्ध धर्म नहीं स्वीकारते।
['क्तेन नञ्‌विशिष्टेनानञ्' पा. 2-1-60 सूत्र से पाणिनि व्याकरण में इस प्रकार के समास का निषेध है – हरिभद्रीय वृत्ति]

★ स्याद्वादी भी परस्पर विरुद्ध धर्म कैसे स्वीकारते हैं? इसके जवाब में कहा – 'एत्थ नया' यहाँ नय हैं।

★ नय नैगमादि 7 हैं। नैगम 2प्र. – देशग्राही सर्वग्राही। सर्वग्राही नैगम सामान्य मात्र का अवलंबी होने से और सामान्य उत्पाद-व्यय रहित होने से नमस्कार अनुत्पन्न है। शेष सभी नयों से नमस्कार उत्पन्न है।

प्र. संग्रह नय सामान्य ग्राही है अतः ऐसा क्यों कहा कि शेष सभी विशेष-ग्राही हैं?
उ. संग्रह की विवक्षा सर्वग्राही नैगम में ही कर दी है।

★ प्र. यदि नमस्कार उत्पन्न है तो किससे उत्पन्न है?
उ. 3प्र. के स्वामित्व से (गा. 889 में)

★ प्र. ऐसे भी ~~पर~~ परस्पर विरुद्ध धर्म एकसाथ रहने में दोष तो है ही?
उ. नहीं, क्योंकि सभी वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है। वहाँ सत्त्वादि सामान्य धर्मों से अनुत्पाद और आनुपूर्वी वि. विशेषधर्मों से उत्पाद होने से दोष नहीं है।
(अर्थात् इस प्रकार एक ही जगह एकसाथ दोनों धर्म रहते हैं।)

अव. तीन प्रकार का स्वामित्व बताते हैं –

गा.889 समुत्थान, वाचना, लब्धि ये 3 कारण प्रथम 3 नय मानते हैं। ऋजुसूत्र प्रथम

Date :

सिवाय २ कारण और शेष नय लब्धि को मानते हैं।

★ समुत्थान = सम्यक् प्रशस्त उत्थान। ऐसा उत्थान (a) अन्य का नहीं सुना जाने से (b) उसका आधार होने से और (c) नजदीक होने से शरीर यहाँ लेना। क्योंकि वह होने पर ही भाव संभव है।

★ वाचना = सुना, जानना। वह भी नमस्कार का कारण है।

★ लब्धि = तदावरण कर्म का क्षयोपशम।

★ प्रथम नय त्रिक यानि अशुद्ध नैगम-संग्रह-व्यवहार तीनों को कारण मानते हैं

Q. नैगम-संग्रह कैसे त्रिविध कारण मानते हैं क्योंकि वे तो सामान्य ग्राही है? (अर्थात् वे तो एक ही में समावेश कर एक कारण मानेंगे)

A. इसलिए यहाँ नय त्रिक में अशुद्ध नैगम-अशुद्ध संग्रह और व्यवहार नय लिए हैं। शुद्ध संग्रह नहीं।

★ ऋजुसूत्र नय समुत्थान को छोड़कर शेष दो कारण मानता है क्योंकि समुत्थान व्यभिचारी है। समुत्थान होने पर भी वाचना और लब्धि से शून्य को नमस्कार असंभव है।

★ शेष नय लब्धि को ही कारण मानते हैं क्योंकि वाचना भी व्यभिचारी है। वाचना होने पर भी भारेकर्मी या अभव्य को नमस्कार नहीं होता। लब्धि होने पर अवश्य नमस्कार होता है।

भव. A. उत्पत्ति द्वार पूर्ण। B. निक्षेप द्वार –
इशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्य और भाव नमस्कार कहते हैं –

गा. 890 (पूर्वार्ध) निन्हवादि को द्रव्य और सम्यग्दृष्टि को भावोपयुक्त नमस्कार है।

★ निन्हवादि को द्रव्य नमस्कार होता है या द्रव्य के लिए मंत्रदेवता की आराधना में जो नमस्कार वह द्रव्य नमस्कार। आदि शब्द से दिगंबर और आजीवक।

Date :

★ द्रव्य नमस्कार का दृष्टांत -
वसंतपुर × जितशत्रु राजा × धारणी देवी × एकदा उसने द्रमक देखा × देवी ने दया से कहा कि राजा नदी जैसे होते हैं, भरे हुए को ही भरते हैं [अर्थात् जैसे नदियाँ जल से भरे हुए समुद्र को ही जल से भरती हैं वैसे राजा भी ऐश्वर्य युक्त सामंतादि को द्रव्य देते हैं, ऐसे रंक को नहीं - इस प्रकार उपालंभ दिया - टीप्पणक] × राजा ने बुलाया × उसे खुजली रोग था × कालांतर में उसे राज्य दिया × एकदा उसने भोजिकों को देवी की पूजा करते देख सोचा - मैं किसकी पूजा करूँ ? × सोचकर राजा का मंदिर बनवाया × राजा-रानी की प्रतिमा बनवाई × प्रतिमा प्रवेश पर राजा और देवी को बुलाया × तुष्ट होकर राजा ने सभी जगह अग्रेसर बनाया × एकदा अंत:पुर में उसे रखकर राजा दंडयात्रा के लिए गया × रानियाँ उसे निमंत्रण करती हैं, वह मना करता है × रानी खाना बंद करती है × धीरे-धीरे अंदर गया और अकार्य किया × राजा आया × जानकर उसे मरा दिया × ×
राजा = तीर्थंकर, अंत:पुर = ६काय अथवा शंकादि प्रमाद, द्रमक = साधु, खुजली = मिथ्यात्व, मृत्यु पंड = संसार में गिरना।
यदि अंत:पुर = ६काय लें तो श्रेणिकादि को भी द्रव्य नमस्कार होगा इसलिए शंकादि प्रमाद लिया।

[राजा ने अंत:पुर की रक्षा उसे सौंपी किंतु उसने नहीं की इसलिए उसने जो राजा को नमस्कार किया वह द्रव्य नमस्कार हुआ। ऐसे ही तीर्थंकर की आज्ञा ६काय की रक्षा करने की है, वह नहीं करने से श्रेणिकादि क्षायिक सम्यक्त्वी को भी द्रव्य नमस्कार होगा अत: यहाँ शंकादि प्रमाद लेना।]

★ भाव नमस्कार = जो शब्द-क्रियादि सम्यग्दृष्टि मन-वचन-काया से उपयुक्त होकर करता है वह भाव नमस्कार।

★ नैगम-संग्रह-व्यवहार-ऋजुसूत्र नय सभी निक्षेप इच्छते हैं। शब्द-समभिरूढ-एवंभूत केवल भाव निक्षेप मानते हैं।
अन्य मत - नैगम सभी निक्षेप, ① संग्रह-व्यवहार स्थापना सिवाय ३, ② ऋजुसूत्र स्थापना-द्रव्य सिवाय २, ③ शब्दादि भाव निक्षेप मानते हैं।
④ यह मत अयोग्य है क्योंकि नैगम सामान्य और विशेषग्राही निर्विवाद रूप से स्थापना को इच्छते हैं तो सामान्यग्राही संग्रह और विशेषग्राही नैगम

Date :

व्यवहार स्थापना को क्यों नहीं इच्छते।

(6) ऋजुसूत्र स्थापना-द्रव्य सिवाय 2 निक्षेप, यह भी युक्त नहीं है क्योंकि स्थापना यानि द्रव्य का आकारविशेष है और ऋजुसूत्र द्रव्य को अवश्य इच्छता है, केवल पृथक्त्व को नहीं। अतीत-अनागत-परकीय द्रव्य को नहीं मानने अवस्तु मानने से यह सिद्ध होता है कि वह द्रव्य को मानता है। eg. वह पिंडादि अवस्था में सुवर्णादि द्रव्य को मानता है क्योंकि वह भविष्य में कुंडलादि पर्याय के हेतु हैं तो साक्षात् साकार द्रव्य को क्यों नहीं मानेगा?

अब. B. निक्षेप द्वार पूर्ण। C. पद द्वार (देखें द्वार गा. 887 Pg. 34) – और D. पदार्थ द्वार –

गा. 890 (उत्तरार्द्ध) नैपातिक पद है। द्रव्य-भाव का संकोच पदार्थ है।

★ निपतति अर्हदादिपदपर्यन्तेषु इति निपातः अर्हदादि पद के पर्यन्तों में गिरने वाला।
निपाते भवं नैपातिकं "अध्यात्मादि होने से = निपात में होने वाला।
अथवा निपात एव नैपातिकं = स्वार्थिक इकण् 'विनयादिभ्यः'।
'नमः' नैपातिक पद है।
[निपातादागतं अथवा
निपातेन निर्वृत्तं नैपातिकं – हरिभद्रीय वृत्ति]

★ नम् धातु, औणादिक अस् प्रत्यय नमः
द्रव्य संकोच = हाथ-पैर वि. अवयव का संकोच।
भाव संकोच = विशुद्ध मन का व्यापार।

★ कोई कहे कि 'नमो अरिहंताणं' 'नमोऽर्हद्भ्यः' यहाँ द्रव्य-भाव की चतुर्भंगी-

द्रव्य	भाव संकोच	eg.
✓	×	पालक
×	✓	अनुत्तरवासी देव
✓	✓	शांब
×	×	शून्य भंग।

यहाँ भावसंकोच प्रधान है, द्रव्यसंकोच यदि भाव में कारण बनता हो तो प्रधान है (भाव संकोच की शुद्धि में कारण हो तो प्रधान – हरिभद्रीय वृत्ति)

Date :

अव. | c.D. पद-पदार्थ द्वार पूर्ण। e. प्ररूपणा द्वार – (देखें द्वार गा. 887)

गा. 891 | प्ररूपणा २ प्र. – (I) छ पद वाली और (II) ~~न~~ 9 पद वाली [च शब्द = (III) 5 पद वाली]।

(द्वार गा.) | 6 पद – a. किं b. कस्य ~~c. (कस्मिन्)~~ ~~d.~~ c. केन d. क्व e. कियच्चिरं f. कतिविधं।

अव. | a. किं द्वार – b. कस्य द्वार –

गा. 892 | नमस्कार में परिणत जीव नमस्कार है। पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा बहुत जीवों को, प्रतिपद्यमान की अपेक्षा एक या बहुत जीवों को होता है।

★ किं शब्द – क्षेप, प्रश्न, नपुंसक और व्याकरण अर्थों में आता है। यहाँ 'प्रश्न' अर्थ में है। यह शब्द प्राकृत में अलिंग होने सबके साथ जोड़ दिया जाता है eg. किं सामायिकं? को नमस्कार?।

★ अशुद्ध नैगमादि के मत से कहते हैं – नमस्कार जीव है, अजीव नहीं। वह जीव संग्रह नय की अपेक्षा से अविशिष्ट स्कंध रूप नहीं है, नोस्कंध है।

★ ~~संग्रह नय वाले ऐसा मानते हैं – वह सब आत्मा ही है~~

★ संग्रह नय मत (सांख्य) – 'सबको स्कंध मानते हैं। स्कंध सर्वास्तिकायमय है।' जीव उसका एक देश है अतः स्कंध नहीं है। यदि जीव को स्कंध माने तो अनेक स्कंध की आपत्ति आएगी। वह अस्कंध भी नहीं है क्योंकि स्कंध का अंतर्वर्ति है। अनभिलाप्य भी नहीं है क्योंकि वस्तु विशेष है। इसलिए वह नोस्कंध है।

इसी प्रकार सांख्य प्रत्येक वस्तु को ग्राम मानते हैं, वह नोग्राम है।

ग्राम = 14 भूत का समुदाय

★ नैगमादि अशुद्ध नय के मत से अनुपयुक्त जीव या नमस्कार के ज्ञान की लब्धि से युक्त जीव या नमस्कार के योग्य जीव भी नमस्कार है।

शब्दादि शुद्ध नय के मत से नमस्कार में परिणत जीव ही नमस्कार है।

★ संग्रह नय से जाति की अपेक्षा एक ही नमस्कार है।

व्यवहार नय से व्यक्ति भेद से बहुत नमस्कार है।

ऋजुसूत्रादि नय से स्वकीय-वर्तमान मात्र एक ही नमस्कार है। उपयुक्त ऐसे

Date :

प्रत्येक जीव का एक नमस्कार है।
नैगम का क्रमशः देशग्राही-सर्वग्राही होने से संग्रह-व्यवहार में अंतर्भाव करना।

→ किं हार पूर्ण। कस्य हार –

★ व्यवहार नय से प्रतिपन्न अनेक जीव।
प्रतिपद्यमान एक अथवा अनेक जीव।

★ संग्रह नय से प्रतिपन्न-प्रतिपद्यमान एक ही जीव।
शेष व्यवहारादि नय से प्रतिपन्न अनेक।
प्रतिपद्यमान एक या अनेक।
यहाँ ऋजुसूत्रादि नय अशुद्ध जानना क्योंकि अनेक स्वीकारे हैं। अन्यथा यदि शुद्ध होते तो परकीय नहीं मानने से अनेक जीव नहीं स्वीकारता।

★ नमस्कार की क्रिया सकर्मक है। तो संशय - यह नमस्कार कर्ता का है या नमस्कार्य ऐसे पूज्य का? उ. यहाँ नयों से विचार है।

→ नैगम-व्यवहार नय से नमस्कार्य का नमस्कार है, कर्ता का नहीं क्योंकि कर्ता को नमस्कार के उपभोग का अभाव होता है। eg. भिक्षा का दाता भिक्षा का उपभोग नहीं करता किंतु भिक्षु करता है इसलिए भिक्षा भिक्षु की है। ऐसे ही नमस्कार भी नमस्कार्य का है।
नमस्कार्य वस्तु 2प्र. - जीव रूप जिनादि, अजीव रूप प्रतिमादि। जीव-अजीव पदों से 8 भांगे –

जीव	अजीव	eg.
।	×	जिन
×	।	प्रतिमा
अनेक	×	बहुत साधुओं को।
×	अनेक	बहुत प्रतिमाओं को।
।	।	एक साधु और एक प्रतिमा को।
।	अनेक	एक साधु और अनेक प्रतिमा को।
अनेक	।	अनेक साधु और एक प्रतिमा।
अनेक	अनेक	अनेक साधु और प्रतिमा।

Date :

→ संग्रह नय सामान्यग्राही होने से 'यह स्व, यह पर, यह जीव, यह अजीव' ऐसे विशेषण से निरपेक्ष है। नमस्कार मात्र एक स्वामी (नमस्कार्य) का है, उसके जीव-अजीवादि भेद नहीं करते। अथवा

मात्र अभेद मानने से मात्र नमस्कार क्रिया जीव करता है, इतना ही मानता है। नमस्कार के स्वामित्व की विचारणा वह नहीं करता। अथवा

कोई अशुद्ध संग्रह नमस्कार को संबंधी मानता हुआ। जीव का मानता है।

→ ऋजुसूत्र नय से नमस्कार ज्ञान-क्रिया-शब्द रूप होने से और ज्ञान-क्रिया-शब्द का कर्ता से अभेद होने से कर्ता ही नमस्कार का स्वामी है, नमस्कार्य पूज्य नहीं।

→ शब्दादि नय से नमस्कार मात्र ज्ञान है, शब्द और क्रिया नहीं क्योंकि शब्द-क्रिया में व्यभिचार है। शब्द-क्रिया से रहित होने पर भी नमस्कार के उपयोग मात्र से ही इष्टफल सिद्धि होती है तथा उपयोग न होने पर शब्द-क्रिया से फल नहीं मिलता। अत: उपयुक्त कर्ता का ही नमस्कार है।

प्र. पहले तो सर्व नय के अभिप्राय से कहा था कि जीव नमस्कार है। यहाँ अलग क्यों कहा?

उ. नमस्कार सर्व नय से जीव ही है क्योंकि नमस्कार क्रिया का जीव से अन्य कोई कर्ता नहीं होता। जीवकर्तृक नमस्कार भी अनुपयोग द्वार से किसका नहीं होता, इस प्रकार यहाँ स्वामित्व की विचारणा कर रहे हैं।

अव. a. b. किं-कस्य द्वार पूर्ण। c. d. केन-क्व द्वार- (देखें द्वार गा. ८९।)

गा. ८९। ज्ञानावरणीय और दर्शन मोहनीय के क्षयोपशम से नमस्कार होता है। जीव-अजीव के ८ भांगों में सर्वत्र नमस्कार होता है।

★ ज्ञानावरणीय से मति-श्रुत ज्ञानावरण लेना क्योंकि नमस्कार मति-श्रुत ज्ञान के अंतर्गत है। ज्ञान दर्शन बिना नहीं होता इसलिए दर्शनमोह का क्षयोपशम भी साधन है।

उस आवरण के २ प्र. के स्पर्द्धक हैं-

(क) सर्वोपघाति = स्व आवार्य गुण को जो पूरा ढँके।

(ख) देशोपघाति = स्व आवार्य गुण के देश को ढँके।

इनमें सभी सर्वघाती स्पर्द्धकों का नाश होने पर और देशघाती के अनंतभाग

Date :

प्रत्येक समय क्षय होने पर विशुद्ध होते परिणामवाला जीव नमस्कार का प्रथम 'न' अक्षर प्राप्त करता है। इस प्रकार 1-1 वर्ण की प्राप्ति से समस्त नवकार प्राप्त होता है।

→ केन द्वार पूर्ण। कस्मिन् द्वार –

* सप्तमी विभक्ति अधिकरण में है। अधिकरण ५९.-
(क) व्यापक eg. तिलेषु तैलम्। (ख) औपश्लेषिक eg. कटे आस्ते।
(ग) सामीप्यक eg. गङ्गायां घोषः। (घ) वैषयिक eg. रूपे चक्षुः।
4 में से पहला अभ्यंतर है, शेष बाह्य हैं।

यहाँ नयों से विचार है।
→ नैगम-व्यवहार नय बाह्य अधिकरण को इच्छते हैं। नमस्कार जीव है, वह नमस्कार वाला जीव जब हाथी पर होता है तब पहला भांगा; जब कट पर हो तब दूसरा भांगा; जब बहुत पुरुषों में हो तब तीसरा भांगा ... इस प्रकार Pg. 40 पर लिखे 8 भांगे।

प्र. नैगम-व्यवहार पूज्य का नमस्कार मानते हैं। तो वह पूज्य ही आधार क्यों नहीं होता, जिससे अलग आधार मानना पड़े।
उ. जो जिसका संबंधी है, वही उसका आधार हो ऐसा जरूरी नहीं है क्योंकि अन्य प्रकार भी देखा जाता है, जैसे – देवदत्त का धान्य खेत में है। इसी प्रकार यहाँ भी अलग आधार है रूप अष्टभांगी है।

→ संग्रह नय में परसंग्रह स्व-पर-जीव-अजीव विशेषण रहित आधार में नमस्कार मानता है। अपर संग्रह, नमस्कार जीव का धर्म होने से जीव आधार में मानता है। अथवा संग्रह नय, 'अन्य अन्य में रहता है' ऐसा व्यधिकरण मूल से ही नहीं मानता है अतः उसे अधिकरण की विचारणा नहीं है।

→ ऋजुसूत्र नय ने नमस्कार को ज्ञान-शब्द-क्रिया माना है। वे जीव से अलग न होने से जीव में ही मानते हैं।

प्र. ऋजुसूत्र तो अन्य आधार भी मानता है eg. 'आकाशे वसति' (अनुयोग द्वार)।

Date :

यहाँ मात्र जीव क्यों कहा?
उ वह द्रव्य की विवक्षा में, गुण विवक्षा में नहीं।

→ शब्दादि तो ज्ञान रूप ही नमस्कार मानते हैं अतः जीव ही आधार मानते हैं।

चूर्णि → ~~तीन शब्द नयों से एक या अनेक जीव प्रतिपद्यमान के आश्रय से~~
अव. c.d. केन-कस्मिन् द्वार पूर्ण। e.5. कियच्चिरं-कतिविध द्वार-
गा. 894 उपयोग के आश्रय से अंतर्मुहूर्त, लब्धि से जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट 66सा.।
अरिहंतादि 5प. का नमस्कार है।

★ सम्यक्त्व का काल ही नमस्कार का काल है।
उपर्युक्त काल (गाथा में) एक जीव की अपेक्षा है, अनेक जीवों की अपेक्षा सर्वकाल।

★ अरिहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-साधु 5प. का नमस्कार है। इस अर्थान्तर से तत्त्ववृत्ति द्वारा 'नमः' पद का संबंध कहा। (स्पष्टता टीप्पणक में)

टीप्पणक → नमस्कार का 5प. के प्रतिपादन से (अनेन) 'नमः' पद का अर्हदादि अर्थांतर के साथ आदि में संबंध को ~~कहा~~। परमार्थ से कहा। अर्थात् 'नमः' यह नैपातिक पद है। इसके स्वरूप से 5प. नहीं होते। इसलिए एक स्वरूप वाले नमः शब्द के 5प. के प्रतिपादन करते हैं तो सामर्थ्य से ही यहाँ यह निश्चय होता है कि स्वयं (नमस्कार के कर्ता) से भिन्न ऐसे अर्हदादि रूप अन्य अर्थों के संबंध से ही इसका 5प्रकारपन है।
[संक्षेप में, 5पदों में 5बार नमो लिखने का संबंध यहाँ कहा।]

मलयगिरीय टीका अव. e5. कियच्चिरं-कतिविध द्वार पूर्ण (देखें द्वार गा. 891)। इसके साथ ही I. षट्पद प्ररूपणा पूर्ण हुई। II. नवपद प्ररूपणा-

गा. 895 (प्रतिद्वारगाथा) A. सत्पदप्ररूपणा B. द्रव्यप्रमाण C. क्षेत्र D. स्पर्शना E. काल F. अंतर G. भाग H. भाव I. अल्पबहुत्व

अव. A. सत्पदप्ररूपणा द्वार-

Date :

गा.896-7 a. गति b. इंद्रिय c. काय d. योग e. वेद f. कषाय g. लेश्या h. सम्यक्त्व i. ज्ञान j. दर्शन k. संयत l. उपयोग m. आहार n. भाषक o. परित्त p. पर्याप्त q. सूक्ष्म r. संज्ञी s. भव t. चरम। इन 20 द्वारों में सत्पद ऐसे नमस्कार की पूर्व प्रतिपन्न और प्रतिपद्यमान के आश्रय से मार्गणा करना।

* जिस प्रकार पीठिका में मतिज्ञान की प्ररूपणा थी, वैसे ही यहाँ जानना क्योंकि नमस्कार और मतिज्ञान के स्वामी एक/अभिन्न होने से दोनों की वक्तव्यता एक ही है। (देखें भा. 1 में निर्युक्ति गा. 14-15 Pg. No. 47-53)

अव. A. सत्पद प्ररूपणा पूर्ण। B.C.D. द्रव्यप्रमाण-क्षेत्र-स्पर्शना द्वार *↓

गा.898 पल्योपम के असंख्यात भाग जितने पूर्वप्रतिपन्न जीव हैं। क्षेत्रलोक के 7/14 भाग में नमस्कार है। स्पर्शना भी इतनी ही है।

* B.C. द्रव्यप्रमाण-क्षेत्र द्वार मतिज्ञान अनुसार (देखें भा. 1 Pg. 53)

* D. स्पर्शना द्वार में स्पर्शना क्षेत्र जितनी ही होती है। ~~विशेष की स्पर्शना पर्यंत में रहे प्रदेशों की भी होती है~~।

प्र. स्पर्शना क्षेत्र के समान ही है तो अलग द्वार क्यों कहा?

उ. स्पर्शना पर्यंतवर्ती प्रदेशों की भी होती है इसलिए अलग कहा।

(eg. 1 परमाणु का क्षेत्र = 1 प्रदेश
" की स्पर्शना = 7 प्रदेश — चूर्णि)

टीप्पणक * हरिभद्रसूरि म. ने यहाँ अवतरणिका में 'अनुक्तद्वार त्रयम्' लिखा है। यहाँ प्रश्न होता है कि ये सभी द्वार मतिज्ञान के वर्णन में पीठिका में कहे गए हैं तो यहाँ 'अनुक्त' क्यों लिखा? उत्तर में मलधारि हेमचंद्रसूरिजी लिखते हैं-

उ. पीठिका में निर्युक्तिकार ने 'गइ इंदिए...' आदि द्वारा सत्पद प्ररूपणा विस्तार से कही थी अतः यहाँ विस्तार नहीं किया। द्रव्यप्रमाणादि द्वार वृत्तिकार (हरिभद्रसूरि म.) ने वहीं कहे थे किंतु निर्युक्तिकार ने वहाँ साक्षात् नहीं कहे थे इसलिए निर्युक्तिकार यहाँ सभी द्वार साक्षात् कहेंगे।

मलयगिरीय टीका अव. B.C.D. द्वार पूर्ण। E. काल द्वार -

गा.899 (पूर्वार्ध) एकजीव के आश्रय से पूर्वोक्त काल जानना। अनेकजीव के आश्रय से सर्वकाल।

* पूर्वोक्त यानि जैसे षट्पद प्ररूपणा में कहा, वैसा जानना। (Pg. 43)

Date :

अव. F. अंतर द्वार — H. भाव द्वार —

गा.899 (उत्तरार्द्ध) गा.900 एक जीव के आश्रय से जघन्य अंतर अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्त। अनेक जीवों के आश्रय से अंतर नहीं है। क्षयोपशम भाव में नमस्कार होता है।

★ नमस्कार क्षयोपशम भाव में प्रचुरता से कहा है। कोई अन्य आचार्य - क्षायिक और औपशमिक भी कहते हैं eg. क्षायिक-श्रेणिकादि, औपशमिक - उपशमश्रेणि में रहे जीव को।

★ यहाँ पहले G. भाग द्वार आना चाहिए किंतु सूत्रगति विचित्र होने से दोष नहीं है।

अव. G. भाग द्वार —

गा.901 (पूर्वार्द्ध) जीवों का अनंतवां भाग पूर्वप्रतिपन्न है। शेष जीव अनंतगुना है।

★ I. अल्पबहुत्व द्वार पीठिका में मतिज्ञान समान जानना। (देखें भा. 1 Pg. No. 55)

अव. II. नवपद प्ररूपणा पूर्ण (देखें द्वार गा. 891)। प्रतिद्वार गा. 895 पूर्ण। अब (III) 5 पद प्ररूपणा के पहले मूल द्वार गा. 887 का F. वस्तु द्वार कहते हैं —

गा.901 (उत्तरार्द्ध) अरिहंतादि 5 वस्तु है। उनका हेतु यह है।

★ वस्तु = दलिक = द्रव्य = योग्य।
नमस्कार के योग्य अरिहंतादि 5 हैं।

★ उनके नमस्कार के योग्यत्व का हेतु गा. 903 में कहेंगे।

अव. अब च शब्द से सूचित (III) 5 पद प्ररूपणा कहते हैं — (देखें द्वार गा. 891 Pg. 39)

गा.902 (पूर्वार्द्ध) आरोपना, भजना, पृच्छा, दापना, निर्यापना।

★ आरोपण = 'क्या जीव ही नमस्कार है कि नमस्कार ही जीव है?' ऐसे अवधारण पूर्वक पूछना आरोपणा कहा जाता है।

★ भजना = व्यभिचार पूर्वक प्रत्यवस्थान अर्थात् उत्तर देना। जीव ही नमस्कार

Date :

है, ~~अन नमस्कार~~ ऐसा यहाँ उत्तरपद का अवधारण है।
जोजो नमस्कार है, वह जीव है - उत्तरपद अवधारण।
जोजो जीव है, वह नमस्कार है या अनमस्कार भी - एकपदव्यभिचार।
व्यभिचार होने से इसे भजना कहते हैं।

★ भजना करने पर शिष्य कहता है - यदि सभी जीव नमस्कार नहीं है तो जीव कैसा है, नमस्कार या अनमस्कार। = पृच्छा

★ दापना = पृच्छा का उत्तर, नमस्कार में परिणत जीव ही नमस्कार है, अपरिणत नहीं।

★ निर्यापना = निगमन, नमस्कार भी जीवपरिणाम है, अजीव नहीं।

प्र. दापना-निर्यापना में क्या अंतर है? उ. दापना में प्रश्न का जवाब है, निर्यापना में उसका निगमन है।

अव. ५प्र. की प्ररूपणा (-पशब्द से-) -

गा.७०२ (उत्तरार्द्ध) नमस्कार, अनमस्कार अथवा नोआदि से युक्त ~~नमस्कार~~ अथवा ५प्र. की प्ररूपणा जानना।

★ प्ररूपणा के ५प्र. प्रकृति, अकार, नोकार और उभय निषेध से जानना. - नमस्कार, अनमस्कार, नोनमस्कार, नोअनमस्कार।
(उभय निषेध यानि 'नो और अ' दोनों शब्द निषेधवाचक लेना)
मूल में नोआदि युक्त ~~'नमस्कार~~ लेना अर्थात् पूर्व में कहे हुए नमस्कार और अनमस्कार नो पूर्वक लेना - नोनमस्कार और नोअनमस्कार।

★ नमस्कार = नमस्कार में परिणत जीव।
अनमस्कार = अपरिणत जीव या नमस्कार की लब्धि से शून्य जीव।
नोनमस्कार = नमस्कार का देश या अनमस्कार क्योंकि नोशब्द देश-निषेध दोनों अर्थ में आता है।
नोअनमस्कार = अनमस्कार का देश या नमस्कार।

★ शब्दादि ३ नय प्रदेशरहित अखंड वस्तु मानते हैं अतः उनके मत से 2 ही भांगे

Date :

है – नमस्कार और अनमस्कार ।
नैगमादि ५नय से चारों भांगे क्योंकि वे वस्तु के देश-प्रदेश भी मानते हैं।

★ उपर्युक्त ६प्र. की प्ररूपणा और ५प्र. की प्ररूपणा मिलाने से ११प्र. की प्ररूपणा भी बन जाती है। (द्वार गा. ८१ पूर्ण)

अव. गा.९०१ में कहे गए अरिहंतादि पंच के नमस्कार के योग्य पन का हेतु

गा.९०३ ५प्र. के नमस्कार क्रमशः इन हेतु से होते हैं – १. मार्ग २. अविपनाश ३. आचार ४. विनयता ५. सहायता ।

★ अरिहंत के नमस्कार में हेतु मार्ग – मोक्षमार्ग अरिहंतों ने बताया है। उस मार्ग से ही मुक्ति होती है। मुक्ति के हेतु होने से वे नमस्कार के योग्य हैं।

★२. सिद्ध नमस्कार में हेतु अविप्रणाश – उन्हें शाश्वत जानकर ही जीव संसार से विमुख होकर मोक्ष के लिए प्रवृत्ति करते हैं।

★३. आचार्य नमस्कार में हेतु आचार – इन आचार पालन करते हुए और आचार बताने वाले आचार्य को प्राप्त कर जीव आचार जानने और पालन करने के लिए प्रयत्न करते हैं।

★४. उपाध्याय नमस्कार में हेतु विनयता – जीव इन स्वयं विनीत को प्राप्त कर कर्म का विनयन करने में समर्थ विनयवंत होते हैं।

★५. साधु नमस्कार में हेतु सहायता – ये साधु सिद्धि वधू के संगम में एकनिष्ठ साधुओं को सिद्धिप्राप्ति की क्रिया में सहायक करते हैं।

अव. विस्तार से अरिहंतों के गुण बताते हैं – 'अरिहंत'

गा.९०४ (प्रतिद्वार गा.) वे १. अटवी में देशकत्व २. समुद्र में निर्यामक और ३. छकाय की रक्षा के लिए महागोप कहे जाते हैं।

अव. इन ३ गुणों को विस्तार से कहेंगे। १. अटवी में देशक –

Date :

गा.९०५-६ देशक के उपदेश से सप्रत्यपाय अटवी को उल्लंघकर यथेष्ट नगर पहुँचते हैं। वैसे ही जीव जिनोपदिष्ट मार्ग से ही भवाटवी को लांघकर निवृत्तिपुर पहुँचते हैं। अटवी में देशकत्व ऐसा जानना। अरिहंतों का

★ सप्रत्यपाय = व्याघ्रादि के प्रत्यपाय से भरपूर।

★ देशक = निपुणमार्गज्ञ।

★ जिनोपदिष्ट मार्ग से ही जीव निवृत्ति पाते हैं, अन्य के उपदिष्ट मार्ग से नहीं क्योंकि अन्यों को सर्वज्ञत्व न होने से सम्यगमार्ग का ज्ञान असंभव है।

★ दृष्टांत → अटवी २प्र. द्रव्य, भाव।

द्रव्याटवी → वसंतपुर x धन सार्थवाह x नगर में जाने की इच्छावाले धन ने घोषणा कराई x बहुत तटिक-कार्पटिकादि संन्यासी इकट्ठे हुए x सबको वह मार्ग के गुण बताता है कि - एक सीधा रास्ता, एक वक्र x वक्र से सुखपूर्वक जाते हैं किंतु बहुत काल लगता है x सीधे रास्ते से जल्दी पहुँचते हैं किंतु कष्टपूर्वक x वह अतीव विषम और संकरा है x शुरुआत में ही भयंकर सिंह और बाघ है x दोनों पैर में लगाकर end तक साथ आते हैं x वृक्ष बहुत मनोहर हैं किंतु छाया में विश्राम नहीं करना चाहिए क्योंकि वह छाया मारणाप्रिय है x अन्य सूखे पेड़ हैं, उनके नीचे मुहूर्त ही विश्राम करना x मनोहर रूप और मधुर वचन वाले बहुत पुरुष बुलाते हैं, उनके वचन नहीं सुनना, सार्थ को क्षण भी मत छोड़ो, अकेले को भय उत्पन्न करते हैं x थोड़ी दावाग्नि अप्रमत्तता से बुझाना, नहीं बुझाई तो जला देगी x दुर्गम पर्वत उपयोग से लांघना, उपयोग न होने पर मरोगे x फिर बड़ी और बहुत उलझनों वाली बांस की झाड़ी जल्दी लांघना नहीं तो बहुत नुकसान होगा x आगे छोटा गड्ढा है, वहाँ मनोरथ ब्राह्मण रहता है, वह कहेगा इसे थोड़ा भरो किंतु भरना मत क्योंकि भरने से वह गड्ढा और बड़ा होता है x रास्ते में दिव्य किंपाक फल ५प्र. के हैं, वे नहीं खाना x २२ पिशाच मार्ग में बार-बार उपद्रव करते हैं किंतु उन पर ध्यान मत देना x मार्ग में भोजन-पान कहीं है, कहीं नहीं है, विरस और दुर्लभ है x कहीं भी रुकना नहीं, लगातार चलना है x रात में २प्रहर ही सोना x इस प्रकार जल्दी शिवपुर पहुँचते हैं x कुछ लोग ऋजुमार्ग से निकले, कुछ वक्र से x सार्थवाह ने शुभ दिन प्रयाण किया x जाते हुए रास्ता बराबर किया x लिखता है - इतना चले, इतना बाकी x जो निर्देशानुसार चले, वे जल्दी पहुँचे x जो नहीं चले, वे नगर नहीं पहुँचे xx

Date :

भाव अटवी → सार्थवाह = अरिहंत, घोषणा = धर्मकथा, तटिकादि साधु = जीव, अटवी = संसार, ऋजु = साधु मार्ग, वक्र = श्रावकमार्ग, प्राप्य पुर = मोक्ष, बाघ - सिंह = रागद्वेष, मनोहरवृक्षछाया = स्त्री वि. संसक्त वसति, सूखे वृक्ष = अनवद्यवसति, मार्ग में पुरुष = पार्श्वस्थादि अकल्याणमित्र, सार्थ = साधु, दावाग्नि = ५ कषाय, फल = विषय, पिशाच = 22 परीषह, भक्तपान = एषणीय, अप्रयाण = निरुद्यम, 2 प्रहर स्वाध्याय (रात में) वि.।

गा.907-8 सभी नगर को प्राप्त करने वाले सार्थवाह को नमस्कार करते हैं, वैसे मोक्षकांक्षी भी अरिहंत को नमस्कार करे।

गा.909 मिथ्यात्व - अज्ञान से मोहित है पंथ जिसमें ऐसी भवाटवी में जिन्होंने देशकत्व किया, उन अरिहंतों को नमस्कार करूँ।

गा.910 सम्यग्दर्शन से देखा हुआ और ज्ञान से यथावस्थित जाना हुआ ऐसा निर्वाण का मार्ग जिनेंद्रों द्वारा चरण - करण से सेवित है।

★ चरणसित्तरि - वय समणधम्म संजम वेयावच्चं बंभगुत्तीओ।
नाणाइतियं तव कोहनिग्गहाइ चरणमेयं॥
करणसित्तरि - पिंडविसोही समिई भावण पडिमा य इंदियनिरोहो।
पडिलेहण गुत्तीओ अभिग्गहा चेव करणं तु॥

गा.911 सिद्धि वसति को प्राप्त (उपगत) वे निर्वाणसुख, शाश्वत, अव्याबाध ऐसे अजरामर स्थान को प्राप्त हैं।

★ कोई कहे कि एकेंद्रिय भी सिद्धशिला में जाते हैं, उसके व्यवच्छेद के लिए कहते हैं - सिद्धि वसति को उपगत यानि कर्म के नाश से सामीप्य से सिद्ध के पास हैं।

★ कोई दर्शन ऐसा मानते हैं कि जीव मोक्ष के बाद सुख-दुःख रहित वहीं पर रहता है। उनके व्यवच्छेद के लिए कहते हैं - 'निर्वाणसुख को प्राप्त'। निर्वाण यानि अर्थात् अतिशय सुख को प्राप्त।

★ कोई दर्शन ऐसा मानते हैं कि आत्मा मोक्ष के बाद स्वदर्शन के परिभवादि कारण से पुनः यहाँ आती है। उनके व्यवच्छेद के लिए कहा - वे शाश्वत स्थान को प्राप्त हैं।

अव. 2. समुद्र में निर्यामक (देखें प्रतिद्वार गा.904) -

Date :

गा.९१२ जिस प्रकार समुद्र के निर्यामक पार ले जाते हैं, वैसे जिनेंद्र भवसमुद्र के पार ले जाते हैं इसलिए वे योग्य हैं।

★ निर्यामक २प्र. – द्रव्य, भाव।

द्रव्य निर्यामक → घोषणा वि. पूर्ववत् समझना x यहाँ १६प्र. के वात/वायु समझना

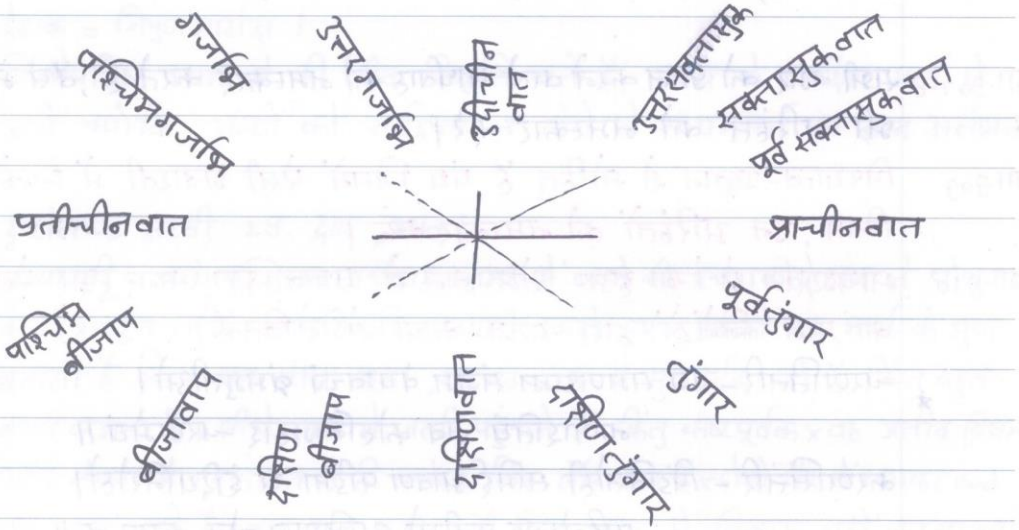

[इन १६प्र. की वायु में जो वायु अनुकूल होती है उसे गर्जभ संज्ञा दी जाती है, जो प्रतिकूल है उसे कालिक संज्ञा दी जाती है।
ये दिशाएँ प्रज्ञापकदिश् जानना अर्थात् जिस दिशा में प्रज्ञापक का मुख हो, उसे पूर्व जानना। – टिप्पणक]

कालिकवात से रहित और अनुकूल गर्जभवात वाले समुद्र में निपुणनिर्यामक से युक्त और छिद्ररहित पोत ईप्सित नगर को पहुँचते हैं।

अत. भाव निर्यामक –

गा.९१३ मिथ्यात्व रूप कालिकावात से रहित, सम्यक्त्वरूप गर्जभ प्रवाह वाले भव समुद्र से पोत सिद्धि वसति रूप पत्तन में एकसमय में पहुँच जाते हैं।

गा.९१४ ★ अमूढ ज्ञान-वाली मति रूप खलासी (चालक) वाले, ३दंड से विरत और निर्यामक में रत्न समान ऐसे अरिहंतों को विनय से झुका हुआ मैं त्रिविध (मन-वचन-काया) वंदन करता हूँ।

Date :

अव. 3. छः काय की रक्षा से महागोप – (देखें प्रतिद्वार गा. 904)

गा.915 जैसे गोप गायों का पालन करते हैं और अर्थात् साँप-जंगली पशु वि. से दुर्ग स्थानों से रक्षण करते हैं और प्रचुर घास और पानी वाले वनों में पहुँचाते हैं।

गा.916 वैसे ही जिन जीवनिकाय रूप गायों का मरणादिभय से रक्षण करते हैं और निर्वाण रूप वन तक पहुँचाते हैं, इसलिए वे महागोप हैं।

गा.917 अत: ~~प्रथम~~ उपकारिपन से और लोग में उत्तम होने से जिनेंद्र यहाँ सभी भव्य जीव लोक के नमस्कार योग्य हैं।

★ इस प्रकार अरिहंतों के नमस्कार की योग्यता में 5 गुण कहे – उपदेशकत्व, निर्यामकत्व, महागोप, उपकारित्व, लोक में उत्तमता।

अव. अन्य प्रकार से अरिहंत की योग्यता के गुण कहते हैं –

गा.918 राग-द्वेष-कषाय, पाँचों इंद्रिय, परीषह और उपसर्ग को नमाते हुए, झुकाने से वे नमस्कार के योग्य हैं।

★ 'राग'

→ रज्यतेऽनेन इति रागः = जिसके द्वारा राग किया जाए।

रज्यतेऽस्मिन् " = जिसमें राग हो।

रञ्जनं रागः = राग करना।

↑ → 4 निक्षेप –↑ 1. ~~2.~~ 2. नामस्थापना सुगम। 3. द्रव्य – आगम, ज्ञशरीर, भव्यशरीर सुगम। तद्व्यतिरिक्त द्रव्य राग – 2 प्र. (a) कर्मद्रव्य राग (b) नोकर्मद्रव्य राग

(a) कर्मद्रव्य राग – 4 प्र. –

(a1) रागवेदनीय पुद्गल योग्य – राग वेदनीय कर्म के योग्य पुद्गल।

(a2) बध्यमान – बंध परिणाम को प्राप्त।

(a3) बद्ध – जिनका बंध परिणाम निवृत्त हो चुका है तथा जीव द्वारा आत्मसात किए हुए।

(a4) उदीरणावलिकाप्रविष्ट।

(b) नोकर्मद्रव्य राग – कर्म राग का एक देश या कर्म द्रव्य राग से अन्य –

(ii) देख चूर्णि पृ. 101

Date :

कर्मद्रव्य राग से अन्य 2प्र.-(b₁) प्रायोगिक- कुसुंभरागादि
(b₂) वैस्रसिक - संध्या का राग।

4. भाव राग - आगम से ज्ञाता+उपयुक्त।
(ii)↑ नोआगम से राग वेदनीय कर्म के उदय से उत्पन्न परिणाम।
वह परिणाम 2प्र.- प्रशस्त, अप्रशस्त। प्रशस्त- अरिहंतादि विषयक।
अप्रशस्त 3प्र.- दृष्टिराग - स्व दर्शन का राग।
स्नेहराग - विषयादि निमित्त से रहित अविनीत पुत्रादि में होने वाला
विषयराग - शब्दादि विषय में होने वाला।

→ राग का उदाहरण → क्षितिप्रतिष्ठित नगर x 2 भाई - अर्हन्नक, अर्हन्मित्र x बड़े भाई की पत्नी अर्हन्मित्र में अनुरक्त x वह मना करता है x वह उपसर्ग करती है x अर्हन्मित्र - तू मेरे भाई को नहीं देखती है? x उसने सोचा - पति से यह डरता है इसलिए पति को मार डाला x वह बोली - क्या अब भी नहीं इच्छता? x अर्हन्मित्र ने सोचा - इस दुष्टशीला ने भाई को मार दिया x निर्वेद से दीक्षा ली x वह आर्तध्यान से मरकर कुत्ती बनी x साधु उस गाँव में पहुँचे x वह पीछे पड़ी x रात्रि में भागे x मरकर अटवी में बंदरी बनी x साधु विहार में वहाँ से निकले x गले पर लग गई x भागे x मरकर वह यक्षिणी बनी x अवधि से देखा x साधु के छिद्र ढूंढे किंतु वे अप्रमत्त थे x अन्य समान वय वाले साधु हँसते हैं - कि यह धन्य है जो कुत्ते और बंदरी को प्रिय है x

एकदा मुनि गड्ढा पार करते हैं x गड्ढे में ~~पानी था~~ एक कदम जितना पानी था (?) x उन्होंने पैर लंबा किया x देवी ने पैर तोड़ दिया x 'मैं पानी में न पडूँ' इसलिए उन्होंने मिच्छामि दुक्कडं दिए x वे गिरे x सम्यग्दृष्टि देव ने उसे भगाया x पैर जुड़ गया और ठीक हो गया x

अन्य प्रत - वे अन्य गाँव में भिक्षा गए x देवी ने उन्हें तालाब में नहाते हुए दिखाया x लोगों ने गुरु को कहा x शाम को प्रतिक्रमण में गुरु - आर्य! सम्यक् आलोचना कर x मुनि ने सुबह मुखपत्ति पडिलेहन से लेकर देवसी प्रतिक्रमण तक उपयोग देकर कहा - मुझे याद नहीं है x गुरु - अनुपस्थित दोष का प्रायश्चित्त नहीं देते x तब शांत हुई देवी - मैंने यह किया है, वह श्राविका बनी x यह अप्रशस्त स्नेह राग है।

→ इस प्रकार के राग को झुकाते हुए - यहाँ वर्तमान कृदन्त होने पर भी क्रियाकाल और निष्ठाकाल का अभेद होने से 'राग को दूर करने वाले' अरिहंत ही लेना।

Date :

→ प्र. प्रशस्त राग को नष्ट करना अयुक्त है।
उ. नहीं, क्योंकि वह बंधात्मक है।

प्र. तो 'राग प्रशस्त है' ऐसा कहना विरुद्ध है।
उ. यह दोष नहीं है क्योंकि सरागसंयतों को कूएँ खोदने के उदाहरण से राग प्रशस्त होता है।
[कूपखनन दृष्टांत - प्यास लगने पर कूआ खोदता है × कूआ खोदने से शरीर पर कीचड़ लगता है × पानी निकलने पर प्यास भी बुझती है और कीचड़ भी साफ होता है - ऐसे ही सरागसंयमी प्रशस्त राग से शुभ परिणाम उत्पन्न कर राग को भी नष्ट करते हैं]

★ 'द्वेष' अथवा 'दोष' ('दोस' शब्द के 2 पर्याय)
→ दुष्यतेऽनेन, अस्मिन्, अस्मात् वा इति दोषः।
दूषणं दोषः।
द्विष्यतेऽनेन अस्मिन् अस्मात् वा इति द्वेषः। द्वेषणं वा द्वेषः।

→ निक्षेप राग की तरह जानना

द्वेष

नाम स्थापना द्रव्य भाव

आगम नोआगम प्रशस्त अप्रशस्त
स्वशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त ↓ ↓
कर्मद्रव्य नोकर्मद्रव्य अज्ञानादि सम्यक्त्वादि
योग्य दुष्टव्रणादि विषयक विषयक,
बध्यमान
बद्ध
उदीर्ण

→ अप्रशस्त द्वेष का उदाहरण → नंद नाविक गंगा नदी में लोगों को उतारता है × धर्मरुचि मुनि उसकी नाव से उतरे × लोगों ने मूल्य दिया × मुनि को रोका × भिक्षा वेला निकल गई तो भी नहीं छोड़ा × गर्म बालु रेती और प्यास से पीड़ाते मुनि गुस्सा हुए × वे दृष्टि विष लब्धि वाले थे × इससे जलकर

Date :

मराx एक सभा में छिपकली बना x मुनि गोचरी लेकर वापरने उसी सभा में पहुँचे x छिपकली उनपर कचरा गिराती है x अन्य-अन्य जगह भी ऐसा ही किया x कहीं भी गोचरी वापरने की जगह नहीं मिली x मुनि ने उसे देखकर सोचा-यह वही नंद नाविक है x जला दिया x

गंगा जहाँ समुद्र में मिलती है, वह जगह हरसाल बदलती है x पूर्व की नदी को मृतगंगा कहते हैं x

वह मृतगंगा के किनारे हंस बना x मुनि माघ मास में सार्थ के साथ सुबह निकले x हंस पंख में पानी भरकर उन पर डालता है x वहाँ भी मारा x

अंजनक पर्वत पर सिंह बना x मुनि सार्थ के साथ वहाँ से निकले x सिंह खड़ा हुआ x लोग भाग गए x मुनि ने जलाया x

वाणारसी में बटुक हुआ x भिक्षा में घूमते मुनि पर धूल डाली x जलाया x

वहीं राजा हुआ x जातिस्मरण हुआ x सोचा-यदि मुनि अब मुझे मारेंगे तो बहुत ऋद्धि से चूक जाऊँगा x समस्या की घोषणा की-जो पूरी करेगा उसे आधा राज्य दूँगा-

गंगाए नाविओ नंदो, सभाए घरकोइलो। हंसो मयगंगातीराए, सीहो अंजणपव्वए।

वाणारसीए बडुओ, राया ~~तत्थेव~~ तत्थेव आगतो।... ।

इसे लोग बोलते हैं x उद्यान में मुनि ने पूर्ण की 'एएसिं घायगो ~~सो~~ जो उ, सोवि इत्थेव आगतो।' x माली ने राजा को सुनाया x राजा मूर्च्छित हुआ x मराता हुआ माली ने मुनि को बताया x राजा ने जाकर वंदन किए x श्रावक हुआ x साधु ने आलोचना की।

→ यहाँ राग-द्वेष की क्रोधादि की अपेक्षा नयों से पर्यालोचना की जाती है। नैगम का संग्रह-व्यवहार में अंतर्भाव करना।

संग्रह नय अप्रीति की समानता से क्रोध मान को द्वेष और माया लोभ को प्रीति की समानता से राग मानता है।

व्यवहार नय क्रोध मान-माया को द्वेष मानता है क्योंकि माया भी पर के उपघात के लिए प्रयोग की जाने से अप्रीति रूप समानता में ही अंतर्भावित है। लोभ तो न्याय के ग्रहण से मूर्च्छात्मक होने से राग है।

ऋजुसूत्र नय क्रोध को अप्रीति रूप होने से द्वेष मानता है। मान-माया-लोभ को कभी राग, कभी द्वेष मानता है। जब मान अहंकार-उपयोगात्मक होता है तब स्वयं में बहुमान से प्रीति रूप होने के कारण वह राग है, जब वही मान परगुण द्वेष रूप होता है तब अप्रीति रूप होने से द्वेष होता है। ऐसे ही माया-लोभ भी परोपघात के लिए व्यापृत होने पर द्वेष, स्वशरीर-धनादि में मूर्च्छा रूप उपयोग के काल में राग होते हैं।

Date :

(iii) शब्दादि नय लोभ को राग और क्रोध को द्वेष मानता है। मान-माया जब स्वगुण के उपकार के उपयोग रूप हो तब लोभ हैं और लोभ होने से राग है, जब परोपघात के उपयोग रूप हो तब क्रोध हैं और क्रोध होने से द्वेष हैं।

★ 'कषाय'

→ शब्दार्थ पहले कह चुके हैं।

→ 8 निक्षेप - 1. नाम 2. स्थापना 3. द्रव्य 4. समुत्पत्ति 5. प्रत्यय 6. आदेश 7. रस 8. भाव।

1.2. नाम-स्थापना सुगम।

3. द्रव्य - नोआगम - तद्व्यतिरिक्त 2प्र. कर्मद्रव्य (योग्य - बध्यमान-बद्ध-उदीर्ण), नोकर्मद्रव्य (सर्ज-वनस्पतिविशेष, इसका स्वाद कषाय होने से द्रव्यकषाय)

4. उत्पत्ति कषाय - जिस बाह्य द्रव्य से कषाय उत्पन्न हो, वह उत्पत्ति कषाय।

5. प्रत्यय कषाय - आंतरकारण कर्मपुद्गल रूप।

6. आदेश कषाय - नाटक से भ्रकुटि वि. चढ़ाना। क्योंकि कषाय बिना इस आकार 'यह गुस्सा करता है' ऐसा लोग व्यपदेश करते हैं।

7. रसकषाय - हल्दी वि. का रस।

8. भाव कषाय - क्रोधादि 4प्र.।

(iv) 'क्रोध कषाय'

→ द्रव्य क्रोध - व्यतिरिक्त - (नोकर्मद्रव्य) (क्रोध यानि थैला) चर्मकार का थैला, धोबी का थैला वि.

भाव क्रोध - 4प्र. जलरेणुपुढवीपव्वयराईसरिसो चउव्विहो कोहो।

→ क्रोध में उदाहरण → वसंतपुर नगर में एक बालक के वंश का नाश हुआ× सार्थ के साथ चलता हुआ वह अलग होकर तापस पल्ली में पहुँचा× अग्निक नाम× तापस का नाम जम× जम के पास बड़ा होने से जमदग्निक नाम हुआ× घोर तप से प्रसिद्ध हुआ×

दो देव थे× एक वैश्वानर श्राद्ध था, दूसरा धन्वंतरी तापस भक्त था× दोनों मुनि और तापस की परीक्षा करने आए× श्राद्ध देव - जो हमारे में सबसे अंतिम है और तापसों में जो प्रधान है, उसकी परीक्षा करें×

मिथिला नगर× पद्मरथ राजा अभिनव श्राद्ध था× वसुपूज्य आचार्य के पास दीक्षा लेने चला× रास्ते में देवों ने प्रतिकूल और अनुकूल बहुत उपसर्ग किए किंतु वह अधिक स्थिर हुआ× (अन्य मत - वे देव सिद्धपुत्र का रूप बनाकर गए× उसे बहुत समझाया किंतु वह चलित नहीं

[सिद्धपुत्र = चोटी रखने वाला, पत्नी वाला गृहस्थ विशेष]

Date :

हुआ)

जमदग्नि के पास गए x पक्षी बनकर उसकी दाढ़ी में घोंसला बनाया x पक्षी - है भद्रा! मैं हिमवंत पर्वत पर जाऊँ x वह पक्षिणी आज्ञा नहीं देती कि तापस नहीं आएगा x पक्षी शपथ करता है - यदि मैं न आऊँ तो मुझे गौहत्या का पाप लगे x पक्षिणी - इससे मुझे विश्वास नहीं है, यदि तू वापस न आए तो इस ऋषि के पाप तुझे लगे तो तू जा x मैं गौ घातक से भी ज्यादा पापी हूँ' ऐसा सुनकर जमदग्नि गुस्सा हुआ x दोनों को पकड़ा x पक्षी - तू पुत्र रहित होने से पापी है x जमदग्नि ने सोचा - सही बात है x उसे विवाह की इच्छा हुई अतः चलित हुआ x वह देव भी श्राद्ध हुआ xx

जमदग्नि आतापना पूर्णकर मृगकोष्ठ नगर गया x जितशत्रु राजा खड़ा हुआ और पूछा - क्या दूँ? x जमदग्नि - पुत्री दो x राजा को 100 पुत्री थी x राजा - तुम्हें जो इच्छे, वह तुमारी x अंतःपुर में गया x सब कन्याओं ने धूँका और कहा - यहाँ आते हुए लज्जा नहीं आती x उसने सबको कुब्जा बनाया x एक कन्या धूल में खेल रही थी x उसे कहा - ले, ये फल चाहिए x कन्या ने फल लेने हाथ आगे किया x वह हाथ पकड़कर चल दिया x सब कन्या ने कहा - हमें सुंदर बनाओ x पुनः सुरूप बनाया x वहाँ कन्याकुब्ज नगर बना x

कन्या को आश्रम ले गया x गाय-भैंस परिवार दिया x बड़ी हुई x यौवन आने पर विवाह किया x ऋतुसमय में कहा - मैं एक गुटिका बनाता हूँ जिससे तेरा पुत्र ब्राह्मणों में प्रधान होगा x वह बोली - एक गुटिका मेरी बहन के लिए भी बनाना जो हस्तिनापुर में अनंतवीर्य की पत्नी है, उसके लिए क्षत्रिय गुटिका बनाना x उसने बनाई x पत्नी ने सोचा - मैं तो जंगल में हिरनी बन गई किंतु मेरा पुत्र नष्ट न हो इसलिए क्षत्रिय गुटिका खाई x बहन को ब्राह्मण गुटिका भेजी x दोनों को पुत्र हुए x तापसी का पुत्र राम, क्षत्रियाणी का कृतवीर्य x राम बड़ा हुआ x वहाँ एक विद्याधर आया x रोगी था x राम की सेवा से ठीक हुआ x राम को परशु विद्या दी x शस्त्रन में साथी x

(अन्य मत - जमदग्नि को परंपरागत परशु विद्या थी, वह उसने सीखी)

राम की माता रेणुका एकदा बहन के यहाँ गई x अनंतवीर्य राजा के साथ अकार्य करने से पुत्र उत्पन्न हुआ x पुत्र सहित जमदग्नि उसे आश्रम लाया x राम ने क्रोध से पुत्रसहित माता को मारा x वहीं उसने धनुःशास्त्र सीखा x उसकी बहन ने राजा को कहा x वह आकर आश्रम को नष्ट कर गाएँ लेकर भाग गया x राम को पता चलने पर परशु से अनंतवीर्य को मारा x कृतवीर्य राजा बना x तारा उसकी रानी थी x उसे पिता का मरण पता चला x इसने जमदग्नि को मारा x राम ने ज्वलंत ऐसे परशु से कृतवीर्य को मारा और स्वयं राजा बना x भय से डरकर भागती हुई तारा तापसाश्रम पहुँची x उसका गर्भ मुख से बाहर गिरा x उसका 'सुभूम' नाम रखा x राम का परशु जहाँ क्षत्रिय होते हैं, वहाँ जलता है x एकदा वह आश्रम के पास से निकला तब परशु जलने लगा x तापस बोले हम ही क्षत्रिय हैं अतः तापस समझकर छोड़ दिया x ऐसे क्रोध से राम ने 7 बार पृथ्वी क्षत्रिय रहित करी x क्षत्रियों की दाढ़ से थाली भरता xx।

Date :

'मान कषाय'

→ द्रव्य मान – व्यतिरिक्त – नोकर्मद्रव्य में स्तब्ध वस्तु।

भाव मान – ५१. तिणिसलयाकट्ठ ट्ठियसेलत्थंभोवमो माणो।

→ मान का दृष्टांत → सुभूम बढ़ा हुआ x विद्याधर से परिगृहीत हुआ अर्थात् मेघनाद नामक विद्याधर उसकी रक्षा के लिए वहीं रहता था x उसकी पुत्री 'पद्मश्री' स्त्री रत्न बनने वाली थी x एकदा विद्याधर ने विषादि से उसकी परीक्षा की x

राम ने नैमित्तिक को पूछा – मेरा विनाश किससे होगा? x उसने कहा – जो इस सिंहासन पर बैठेगा x और खीर बनी हुई इन दाढ़ा को पिएगा x उसने दानशाला खोली x सबसे आगे सिंहासन रखा और दाढ़ा उसके आगे रखी x

सुभूम ने माता को पूछा – इतना ही लोक है या अन्य भी है? x माता ने सब कहा x वह अभिमान से हस्तिनापुर गया x सभा में घुसा x 'सिंहासन पर बैठा' देवी रोकर भाग गई x दाढ़ा खीर बन गई x ब्राह्मण उसे मारने लगे x मेघनाद विद्याधर उनके शस्त्रों को उन पर ही फेंकता है x वह विश्वस्त होकर खाता है x राम को कहा x तैयार होकर आया x परशु फेंका x परशु बुझ गया x सुभूम दाढ़ा का थाल लेकर खड़ा हुआ x वही थाल चक्र रत्न बन गया x उससे राम का सिर छेदा x मान से सुभूम ने २१ बार पृथ्वी ब्राह्मण रहित करी x गर्भ भी मारे x x।

'माया कषाय'

→ द्रव्य – व्यतिरिक्त x – नोकर्मद्रव्य निधान रूप द्रव्य।

भाव माया – ५१. – 'मायाऽवलेहि गोमुत्ति मेंढसिंग घणवंसिमूल समा'।

→ माया का दृष्टांत → पंडरार्या ने भक्त प्रत्याख्यान किया x ३ बार लोगों को स्वयं की पूजा के लिए मंत्र से बुलाया x आचार्य ने ३ बार आलोचना कराई x ४थी बार वह बोली – ये पूर्वाभ्यास से आते हैं x ऐसे माया शल्य के दोष से वह किल्बिषिका बनी x x।

अथवा सर्वांगसुंदरी का उदाहरण

वसंतपुर x जितशत्रु राजा x धनपति – धनावह २ भाई सेठ x धनश्री उनकी बहन x वह छोटी उम्र में विधवा हुई और परलोक में प्रयत्न करने लगी x धर्मघोषसूरि के पास प्रतिबुद्ध हुई x भाई स्नेह से दीक्षा की अनुज्ञा नहीं देते x वह अधिकव्रत करती है x भाभी उसे बहुत बोलती है x उसने सोचा – भाभी से क्या? भाई के मन में मेरे लिए क्या है, वह जानना चाहिए x धर्मचर्चा के अंत में पति सुने इस प्रकार एक भाभी को कहा – साड़ी की रक्षा करना x पति ने सोचा – यह दुराचारी है, भ. ने असती पोषण का मना किया है, मुझे इसे निकाल देना चाहिए x पलंग पर बैठती उसे रोका और कहा – मेरे घर से बाहर जा x भाभी – मैंने

(i) देखें हारप्रदायवृत्त Pg.67 पर।

Date : ______

क्या किया x वह कुछ सुनता नहीं है x जमीन पर रहकर दुःख से रात बीताई x सुबह उदासमुख से निकली x धनश्री के पूछने पर कहा x धनश्री ने भाई को पूछा x भाई- यह दुष्टशीला है x धनश्री- कैसे जाना? x भाई- आपकी देशना में ही सुना x धनश्री- मैंने तो सामान्य से कहा कि मैथुन बहुत दोष वाला है x पति ने मिच्छामि दुक्कडं दिया x धनश्री ने सोचा - ये भाई तो मेरे कहने से काले को सफेद मान लेगा x दूसरे भाई की भी ऐसी परीक्षा की x विशेष भाभी को कहा- हाथ की रक्षा करना x शेष पूरी समान x इस माया से अभ्याख्यान दोष से तीव्र कर्म बंधा x आलोचना किए बिना दीक्षा ली x भाई- भाभी ने भी दीक्षा ली x देवलोक गए x

पहले 2 भाई च्यवकर साकेत पुर में अशोकदत्त के पुत्र समुद्रदत्त-सागरदत्त बने x धनश्री गजपुर में शंख सेठ की सर्वांगसुंदरी पुत्री x दोनों भाभी कौशलपुर में नंदन सेठ की श्रीमती-कांतिमती पुत्री x यौवन को प्राप्त हुए x एकदा अशोकदत्त गजपुर गये हुए ने सर्वांगसुंदरी को देखकर माँग की x समुद्रदत्त के साथ विवाह हुआ x समुद्रदत्त उसे लेने गजपुर गया x उसका स्वागत किया x वासघर सजाया x तभी सर्वांगसुंदरी का प्रथम माया से बांधा कर्म उदय में आया x वासघर में प्रवेश करते समुद्रदत्त को दैवी पुरुष छाया दिखी x दुष्टशीला जानकर उसे बुलाया नहीं x आर्तध्यान से पूरी रात जमीन पर रही x सुबह समुद्रदत्त स्वजनों को पूछे बिना एक ब्राह्मण को कहकर गया x नंदन सेठ की श्रीमती के साथ विवाह किया x सागरदत्त का विवाह कांतिमती से हुआ x यह संदेश शंख को मिले x परस्पर व्यवहार बंद हुआ x सर्वांग- सुंदरी ने दीक्षा ली x

विचरती हुई साकेत पहुँची x पूर्वभव की भाभी धर्मरुचि वाली थी (शांत), उनके पति नहीं थे x उसे दूसरा कर्म उदय में आया x पारणे पर भिक्षा के लिए गई x श्रीमती वासघर में हार परो रही थी x वह हार छोड़कर भिक्षा के लिए अंदर गई x चित्र में लगा मोर सजीव होकर हार निगल गया x आश्चर्य देखकर भिक्षा लेकर निकल गई x श्रीमती ने परिजनों को पूछा x अंत में उन पर कलंक आया x साध्वी जी ने प्रवर्तिनी को मोर की बात कही x प्रवर्तिनी- 'कर्म की गति विचित्र होती है' x उग्र तप किया x दोनों पति पत्नियों की हँसी उड़ाते हैं कि तुम्हारे धर्म में साध्वीजी भी चोरी करते हैं x दोनों पत्नी धर्म से चलित नहीं हुई x श्रीमती पति के साथ वासघर में थी तभी मोर सजीव होकर हार वमता है x दोनों पति-पत्नी संवेग प्राप्त कर क्षमा माँगने गए x इधर सर्वांगसुंदरी को

N(i) केवलज्ञान हुआ x उन्होंने कारण पूछने पर पूर्वभव कहा x दोनों ने दीक्षा ली xx।

~~अपवक लोते का दृष्टांत~~

'लोभ कषाय'

→ लोभ - द्रव्य लोभ - व्यतिरिक्त - नोकर्मद्रव्य - खदान की मिट्टी ...

भाव लोभ 49. 'लोहो हलिद्द खंजन कद्दम किमिराग सारित्थो।'

→ लोभ का दृष्टांत- पाटलिपुत्र x नंद वणिक x जिनदत्त श्रावक x जितशत्रु राजा x वह तालाब खोदाता

Date :

है x कर्मकरों ने सोनामुहरे देखी किंतु कार से पहचाना नहीं x 'हमें दारु के पैसे मिलेंगे' ऐसा सोचकर 2 मुहर लेकर जिनदत्त के पास गए x उसने नहीं ली x नंद ने पहचानकर ली और कहा - ज्यादा हो तो भी ले आना x एकदा अत्यंत आग्रह से एक प्रसंग में गया x नंद के पुत्रों ने मना किया x एक कंदोई के यहाँ गए, मना किया x 'अब इसका कोई मूल्य नहीं' ऐसा समझकर कोने में फेंक दी x राजपुरुषों ने देखकर पहचानी, आदमियों को पकड़ा x राजा को खबर पड़ी x
नंद ने घर आकर पुत्रों को पूछा - तूने खरीदी या नहीं ? x पुत्र - हम कोई पागल नहीं है x अति लोलुपता से नंद ने सोचा - मेरे पैर के कारण ही मुझे जाना पड़ा इसलिए पैर कुल्हाड़ी से काट दिए x स्वजन रोते है x राजपुरुषों ने श्रावक और नंद को पकड़ा x श्रावक ने कहा - मेरे परिग्रह में अधिक होने से और गलत मान होने से मैंने नहीं ली x उसे कोशाध्यक्ष बनाया x नंद को कुलसहित शूली पर चढ़ाया x x ।

★ **'इन्द्रिय'**

→ 'इदु ऐश्वर्ये' - इन्दनाद् इन्द्रः सर्वोपलब्धिसर्वोपभोगरूपपरमैश्वर्ययोगाज्जीवः, तस्य लिङ्गं तेन सृष्टं वा इन्द्रियम्

→ द्रव्येंद्रिय - निर्वृत्ति = संस्थान (बाह्य - अभ्यंतर)
उपकरण = ~~अथ~~ निर्वृत्ति इंद्रिय की शक्ति विशेष ।

बाह्य निर्वृत्ति कान वि. । यह नियत आकार वाली नहीं है । जैसे - मनुष्य को कान आँख के पास होते हैं और ऊपर eyebrow होती हैं, घोड़े को कान आँख के ऊपर तीक्ष्ण अग्र भाग पर होते हैं ।
अभ्यंतर निर्वृत्ति सभी जंतुओं की समान होती है ।
स्पर्शेंद्रिय में प्रायः निर्वृत्ति इंद्रिय में बाह्य - अभ्यंतर भेद नहीं होता ।
उपकरण इंद्रिय अभ्यंतर और बाह्य निर्वृत्ति की शक्ति । शक्ति - शक्तिमान् का कथंचित् अभेद होने से उपकरण द्रव्येंद्रिय निर्वृत्ति से अलग नहीं है । कथंचित् भेद होने से अंतरनिर्वृत्ति होने पर भी द्रव्यादि द्वारा उपकरण इंद्रिय का विघात संभव, जैसे - अंतर निर्वृत्ति होने पर भी अतिकठोर आवाज से उपकरण रूप शक्ति का घात होने पर भी जीव शब्द नहीं जान ~~सक~~ सकता ।

भावेंद्रिय - लब्धि = तदावरण कर्म का क्षयोपशम
उपयोग = स्वविषय में आत्मा का लब्ध्यनुसार व्यापार ।
सभी संसारी जीवों का एक काल में एक ही इंद्रिय से उपयोग होता है, अतः

Date :

उपयोग की अपेक्षा से सभी संसारी जीव एकेंद्रिय हैं।
लब्धि सभी संसारी जीवों को प्रायः पाँचों इंद्रियों की होने से सभी संसारी जीव लब्धि की अपेक्षा से पंचेंद्रिय हैं।
अतः उपयोग या लब्धि रूप भावेंद्रिय से एकेंद्रियादि भेद का व्यपदेश संभव नहीं है।
किंतु निर्वृत्ति रूप द्रव्येंद्रिय की अपेक्षा से यह भेद संभव है।

→ इन इंद्रियों का क्रम ⇒
लब्धि → निर्वृत्ति → उपकरण → उपयोग।
पहले इंद्रियावरण क्षयोपशम रूप लब्धि होती है। फिर बाह्य-अभ्यंतर भेद से भिन्न कर्म के विपाकोदय अनुसार निर्वृत्ति इंद्रिय होती है। फिर शक्ति रूप उपकरणेंद्रिय बनती है। फिर इंद्रिय के अर्थ का उपयोग होता है।

→ 5 इंद्रिय- ~~श्रोत्र~~, स्पर्श, रस, घ्राण, चक्षु।

'श्रोत्रेन्द्रिय'
वसंतपुर x पुष्पशाल गांधर्विक x अच्छे स्वर वाला किंतु विरूप x उसने नगर के लोगों का दिल जीता x उस नगर में सार्थवाह देशयात्रा पर गया x उसकी भद्रा पत्नी x उसकी दासियाँ रास्ते में गीत सुनने से (late) हुई x डाँटने पर बोली - हमें मत डाँटो, जो हमने सुना उससे तो पशु भी मोहित हो जाते हैं तो हमारे जैसे सकर्ण की क्या बात? x भद्रा के पूछने पर कारण कहा x भद्रा ने सोचा- मैं उसे कैसे देखूँ? x एकदा नगर में देवी की यात्रा हुई x उसमें सभी नगरजन गए x भद्रा भी गई x लोग देवी को नमनकर वापस आए x सुबह का समय था x पुष्पशाल थका हुआ आंगन में ही सोया था x भद्रा दासी के साथ गई x प्रदक्षिणा देते हुए दासी ने बताया कि यह है x वह संघात होकर गई x विरूप और दाँत बाहर निकले हुए देखकर बोली - इसके रूप से ही पता चलता है कि यह कैसा गाता होगा, उसके मुख पर थूँका x वह उठा x साथियों ने बात की तो गुस्सा हुआ x सुबह भद्रा के घर के पास आकर गाना शुरू किया x जिसका पति बाहर गया हो, वह स्त्री कैसे संदेश पूछती है, सोचती है, पत्र लिखती है, पति आकर घर में प्रवेश करता है, पूरा सदृश वर्णन गीत में किया x भद्रा सचमुच पति को आया समझकर लेने गई और छत पर से नीचे गिरी, मर गई x
इस प्रकार श्रोत्रेंद्रिय दुःख के लिए है।

'चक्षुरिन्द्रिय'
मथुरा x जितशत्रु, धारिणी रानी x रानी श्रद्धालु वाली x भंडीरवण चैत्य की यात्रा में राजा सपरिवार गया x

Date :

पालकी में बैठी रानी का पर्दे से बाहर निकला हुआ पैर एक युवक ने देखा x सोचा- पैर इतना सुंदर है तो वह अप्सरा होगी x आसक्त हुआ x जाना कि रानी है x उसके महल के पास दुकान खोली और सस्ते में अच्छे सुगंधी द्रव्य रानी की दासियों को देने लगा x दासी रोज जाने लगी x एक दिन युवक ने पूछा - यह गंध पुटिका कौन खोलता है? x दासी- हमारी स्वामिनी x एक पुटिका में भूर्जपत्र पर लेख लिखकर छोड़ा-

काले प्रसुप्तस्य जनार्दनस्य, मेघान्धकारासु च शर्वरीषु।

मिथ्या न जल्पामि विशालनेत्रे! ते प्रत्यया ये प्रथमाक्षरेषु॥

रानी ने भोगों को धिक्कारते हुए पुन: लेख लिखा-

नेह लोके सुखं किञ्चिच्छादितस्याहंसा भृशम्।

मितं च जीवितं नृणां तेन धर्मे मतिं कुरु।

पुटिका में डालकर दासी को कहा यह गंध सुंदर नहीं है x दासी वापस देकर आई x युवक ने पुटिका खोली x लेख पढ़कर खिन्न हुआ x सोचा- इस देश में नहीं रहना x कपड़े फाड़कर निकल गया (मूल्यवान् वस्त्र पहनकर जाऊँगा तो भय रहेगा अत: जीर्णवस्त्र के टुकड़े कर पहने टिप्पणक) x अन्यराज्य में सिट्टपुत्रों के पास पहुँचा x

वहाँ नीति का वर्णन चल रहा था x उसमें एक श्लोक आया-

नशक्यं त्वरमाणेन प्राप्तुमर्थान् सुदुर्लभान्। भार्या वा रूपसंपन्नां शत्रूणां वा पराजयम्॥

इसमें उदाहरण-

वसंतपुर x जिनदत्त सार्थवाहपुत्र, श्रमणश्राद्ध x चंपा में धन सार्थवाह x 2 आश्चर्य उसके पास- मोतियों का हार, हारप्रभा पुत्री x जिनदत्त के बहुत बार मांगने पर भी न दिए x वह ब्राह्मण वेश कर चंपा में गया x वहाँ दुर्भिक्ष था x वहाँ एक पंडित था x वह पढ़ने पहुँचा x पंडित बोला- तेरे भोजन की व्यवस्था तू कर ले x दुर्भिक्ष में धन सेठ संन्यासियों को दान देता था x जिनदत्त ने उसे कहा- जब तक मैं पढ़ूँ तब तक मुझे भोजन देना x धन सेठ ने पुत्री को उसे रोज भोजन देने के लिए कहा x जिनदत्त फलादि से उसे आकर्षता है किंतु वह नहीं लेती x वह नीति को जानता हुआ जल्दी किए बिना अवसर-अवसर पर आकर्षता है x संन्यासी इसकी निंदा करते हैं x कुछ काल में आकृष्ट हुई वह बोली- हम भाग जाएँ x वह बोला- यह योग्य नहीं है, तू पागल बन जा और वैद्यों पर भी गुस्सा करना x उसने ऐसा किया x वैद्यों ने हाथ ऊँचे किए x पिता अधृति को पाये x ब्राह्मण (जिनदत्त)- मेरे पास परंपरागत विद्या है किंतु दुष्कर है x ब्रह्मचारी चाहिए यदि कोई भी रीति से अब्रह्म लेंगे तो काम नहीं होगा x धन- संन्यासी हैं, उन्हें लाता हूँ x 4 संन्यासी, 4 शब्दवेधी दिशापाल बनाए x उनका मांडला बनाया x दिशापालों को कहा- यदि सियाल का शब्द सुनाए तो बींधना x संन्यासी को कहा- फूट् बोलने पर सियाल का शब्द करना x कन्या को कहा- तू पागल ही रहना x सबने वैसा किया, 4 संन्यासी मर गए, पुत्री ठीक नहीं हुई x ब्राह्मण- मैंने पहले ही कहा था कि यदि कोई भी रीति से अब्रह्म होंगे तो

(V) देखें चूर्णि पृ.-1।

Date :

कार्य सिद्ध नहीं होगा x धन-ब्रह्मचारी कैसे होते हैं? x ब्रा.- 9 बाड़ कही x धन ने परिव्राजक ढूँढे किंतु वे ऐसे नहीं होते x मुनि ऐसे होते हैं x उसने मुनि को कहा x मुनि- हमें ऐसा कल्पता नहीं हैं x धन ने ब्रा. को कहा x ब्रा.- मुनि के तो नाम से ही काम हो जाएगा x पदिशा में मुनि के नाम लिखे x सियाल का शब्द नहीं हुआ x पुत्री ठीक हुई x धन भी श्रमणश्राद्ध बना x धर्मोपकारी मानकर पुत्री और हार उसे दिया x

(V)

श्रेष्ठिपुत्र ने सोचा मैं भी मेरे देश में जाकर कुछ उपाय करूँ x वहाँ विद्यासिद्ध चंडाल रक्षक थे x उसने उनकी सेवा की x चंडालों के काम पूछने पर कहा देवी को मिलाओ x चंडाल ने सोचा - मैं रानी पर कलंक लगाएँ जिससे राजा उसे छोड़े x उन्होंने मारी बिकुर्वी x लोग मरने लगे x राजा के कहने पर बोले - आपके महल में ही मारी है x रानी के महल में मनुष्य के हाथ-पैर विकुर्वे जिन्हें देखकर राजा ने मारने का हुक्म दिया x मध्यरात्री में रानी को स्वयं के वहाँ ले जाकर चंडाल मारते थे तभी पूर्वसंकेतित युवक आकर छुड़ाता है x धन वि. उन्हें देता है x रानी को लेकर अन्य देश जाता है x रानी भी उस पर अनुरक्त हुई x

एकदा वह नाटक देखने जाता है x रानी उसे जाने नहीं देती तो वह हँसता है x रानी के बहुत आग्रह से हँसने का कारण कहा x वैराग्य से रानी ने दीक्षा ली x वह आर्तध्यान से उसी दिन मरकर नरक में गया xx।

इस प्रकार चक्षु इंद्रिय दुःख के लिए है।

'घ्राणेन्द्रिय'

एक कुमार गंधप्रिय था x वह हमेशा नाव से खेलता है x सौतेली माँ ने उसे मारने एक विष वाली पेटी नदी में छोड़ी x उसने खेलते हुए पेटी ली x खोली तो एक के अंदर एक पेटी निकली x अंत में एक पेटी में सुगंध थी x सूँघकर मर गया xx।

'रसनेन्द्रिय'

सोदास राजा, मांसप्रिय x एकदा अमारी की घोषणा हुई x पूर्वसंचित मांस बिल्ली ले गई x कसाई के यहाँ भी मांस नहीं था x रसोईए ने बालक को मारकर मांस पकाया x राजा को अच्छा लगा x उसने रसोईए को आदमी दिए और कहा रोज बालक का मांस बनाना x नगर के लोगों को पता चला x उसे शराब पीलाकर जंगल में छोड़ा x हाथी लेकर रोज मनुष्यों को मारता है (अन्य मत- एकांत में मारता है) x एकदा वहाँ से सार्थ निकला x वह सोया होने से खबर नहीं पड़ी x साधु प्रतिक्रमण करने पीछे रहे x वह उनके पीछे दौड़ा किंतु तप से आक्रमण नहीं कर सका x संविग्न हुआ, धर्मकथा, दीक्षा ली x (अन्य मत- वह बोला - ठहरो x साधु- हम ठहरे हैं, तू ठहर x वह सोचने लगा, आचार्य अवधिज्ञानी थे)

कितने जीवों को ऐसा होता है अर्थात् रसलोलुप कितने जीवों को ऐसे आचार्य मिलते हैं, सबको नहीं मिलते। अतः रसनेन्द्रिय दुःख के लिए होती है।

'स्पर्शेन्द्रिय'

वसंतपुर x जितशत्रु, सुकुमालिका रानी x उसका स्पर्श अत्यंत सुकोमल था x वह राज्य की चिंता नहीं करता, नित्य अंतःपुर में ही रहता है x मंत्रियों ने रानी के साथ राजा को नगर के बाहर किया और पुत्र को राज्य दिया x वे दोनों अटवी में चले x रानी को प्यास लगी x पानी नहीं मिला तो रानी की आँख पर पट्टी बांधकर स्वयं का खून उसे पिलाया x ज्यादा खून में मूल डाले जिससे थीजे नहीं x उसे भूख लगी तो जांघ का मांस खिलाया और संरोहनी औषध से ठीक किया x एक देश में पहुँचे x.

आभूषण छुपा लिए x राजा ने व्यापार चालू किया x वहाँ एक लंगड़ा सड़क साफ करता है x रानी - मैं घर अकेली रहती हूँ अतः किसी को लाओ x राजा ने लंगड़े को रखा x लंगड़े ने श्रृंगार रस के गीत-काव्य से रानी को आकर्षित किया x रानी ने उसके साथ अकार्य किया x पति के छिद्र ढूंढती है x छिद्र न मिलने पर घूमने गए राजा को विश्वास में लेकर बहुत दारू पिलाकर गंगा नदी में डाल दिया x सुकुमालिका मादक द्रव्य खाकर लंगड़े को कंधे पर लेकर घर-घर घूमती है x कोई पूछे तो 'माता-पिता ने ऐसा ही पति दिया' कहती है x राजा एक नगर के बाहर नदी किनारे पहुँचा x एक वृक्ष के नीचे सोया x उस वृक्ष की छाया उस पर से हटती नहीं है x नगर का राजा पुत्र बिना मरा, घोड़े वि. ने जितशत्रु को राजा बनाया x रानी और लंगड़ा वहाँ पहुँचे x राजा को समाचार मिले x उन्हें बुलाया, पूछा x वह बोली - माता पिता ने ऐसा ही पति दिया x राजा बोला - भुजा से खून पिया, जांघ का मांस खाया, गंगा में पति को डाला, हे पतिव्रता! बहुत अच्छा है। x देश निकाल किया।

इस प्रकार स्पर्शेन्द्रिय दोनों को, विशेष से सुकुमालिका को दुःख के लिए हुई xx।

ऐसी इंद्रियों को झुकाने वाले नमस्कार के योग्य हैं।

★ 'परीषह'

→ मार्गाच्यवन के लिए 2 परीषह - दर्शन और प्रज्ञा
निर्जरा के लिए शेष 20 परीषह

→ 1. क्षुधा - शक्ति होते हुए एषणा का उल्लंघन नहीं करना, यात्रामात्र में उद्यत रहना, दीन नहीं बनना।

(i) हरिभद्रीय वृत्ति पर टीप्पणक Pg. No. 69 पर 70
(ii)

Date :

2. पिपासा - दीनता रहित ठंडे पानी की इच्छा नहीं करना, कल्प्य पानी की गवेषणा करना।
3. शीत - ठंडी होने पर भी वस्त्र रहित होने पर भी मुनि अकल्प्य वस्त्र ग्रहण न करे, अग्नि भी जलाए नहीं।
4. उष्ण - गर्मी की निंदा न करे, छाया को याद न करे, स्नान - शरीर सिंचन - पंखे को न इच्छे।
5. दंशमशक - मच्छरों द्वारा काटने पर भी त्रास या द्वेष न करे, उनका वारण न करे, 'सभी को आहार प्रिय होता है' ऐसा जानकर उपेक्षा करे।
6. नाग्न्य - नग्नता से बिल्कुल होकर अच्छे या खराब कपड़े न इच्छे।
7. अरति - चलते हुए, बैठे हुए या खड़े हुए अरति न करे। नित्य स्वस्थ चित्त वाला, धर्म में रत रहे।
8. स्त्री - संग रूपी कीचड़ अत्यंत दुःख से साफ होता है, स्त्रियाँ मोक्षमार्ग में बाधक हैं, विचारने से भी वे धर्म के नाश के लिए होती हैं। अतः उनका विचार भी न करे।
9. चर्या - ग्रामादि अनियत रहने वाले, अनियत ~~विहार~~ स्थान करने वाले, विविध अभिग्रह से युक्त ~~एक~~ अकेले भी मुनि चर्या (विहार) करे।
10. निषद्या - स्त्र्यादि वर्जित श्मशानादि निषद्या, इष्ट-अनिष्ट उपसर्गों को डरे बिना निःस्पृह मुनि सहन करे। (i) (ii)↑
11. शय्या - शुभाशुभ शय्याओं में सुख होने पर आसक्ति न करे, दुःख होने पर सहन करे।
12. आक्रोश - आक्रोश करने वाले पर मुनि समता से आक्रोश न करे। उपकारिपन की अपेक्षा रखे, द्वेष की नहीं।
(ii) 13. वध - समता को जानने वाले मुनि किसी द्वारा हनन होने पर जीव के अनाश और क्षमा के योग से सहन करे, गुण प्राप्ति होने से और क्रोध से पुनः मारे नहीं।
14. याचना - यति दूसरे द्वारा दिए हुए से ही जीने वाले होने से उन्हें अयाचित कुछ नहीं होता। अतः याचना के दुःख को सहन करे, अगारिपन की इच्छा न करे।
15. अलाभ - दूसरे का या दूसरे के लिए किए हुए अन्नादि ग्रहण करे। लब्ध होने पर मद न करे अथवा अलाभ से स्व-पर की निंदा न करे।
16. रोग - रोग होने पर उद्वेग न करे, चिकित्सा की इच्छा न करे, अदीन होकर सहन करे।
17. तृणस्पर्श - अल्प या पतले कपड़े होने पर तृणादि के स्पर्श से कभी-कभी होने वाले दुःख को सहन करे और उन्हें कोमल न इच्छे।
18. मल - गर्मी में पसीने से मल-कीचड़-रज से लिप्त मुनि उद्वेग न करे, स्नान न इच्छे, सहन करे और उद्वर्तन (निकाले) न करे।
19. सत्कार - उत्थान, पूजा, दान की स्पृहा न करे। प्राप्त होने पर मूर्च्छा न करे, प्राप्त न पुरस्कार होने पर दीन न बने।

Date :

(iii) 20. ~~ज्ञान~~ प्रज्ञा - वस्तु नहीं जानता जिज्ञासु मोह न पामे। ज्ञानियों के ज्ञान को देखकर, वह उसी प्रकार है, अन्य प्रकार नहीं ऐसा माने।

21. अज्ञान - 'मैं विरत हूँ, तपस्वी हूँ, सूक्ष्म तो भी छद्मस्थ होने से मुझे धर्मादि द्रव्य साक्षात् नहीं दिखते' क्रमकाल को जानने वाला ऐसा न विचारे।

22. अदर्शन - जीवाजीव, धर्माधर्म, परलोक वि. परोक्ष होने से मृषा है, ऐसा कदाग्रह से नहीं विचारे।

→ ज्ञानावरणकर्म - प्रज्ञा और अज्ञान।
वेदकर्म - क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, देशमशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, मल।
अंतराय कर्म - अलाभ।
शेष मोहनीय कर्म।

→ सूक्ष्मसंपराय और छद्मस्थवीतराग को १५ परीषह - क्षुत् पिपासा शीत उष्ण देशमशक चर्या शय्या वध रोग तृणस्पर्श मल अलाभ प्रज्ञा अज्ञान।
जिन में वेदकर्म के ११ परीषह।

शेष विस्तार तत्त्वार्थ टीका से जानना।

→ द्रव्यपरीषह - जो इस लोक के लिए बंधनादि में या परवश से सहन किए जाए।
eg. इंद्रदत्त दृष्टांत (Pg. No. 3 पर)
भावपरीषह - जो संसार का व्यवच्छेद करने के लिए आकुलता रहित सहन किए जाएँ।

★ 'उपसर्ग'
→ उप-सामीप्येन सर्जनं उपसृज्यते ऽसौ वा उपसर्गः।

→ ५ प्र. - १. दिव्य 2. मानुष 3. तैर्यग्योन ५. आत्मसंवेदनीय।

1. दिव्य उपसर्ग - ५ कारणों से
(a) हास्य - eg. बालसाधु अन्य गाँव में गोचरी गए × बाणव्यंतर को जाकर बोले - यदि गोचरी मिलेगी तो तिलखल (तिल से बनी वस्तु विशेष - टिप्पणक) से आपकी पूजा करेंगे × गोचरी मिली × बाणव्यंतर साधुओं से तिलखल मांगता है × वे एक-दूसरे का मुँह देखते हैं × तिलखल

Date :
हाथ में लिया और कहा - ये रहा तेरा तिलखल, बोलकर स्वयं ही खा गए x देव उनके रूप को छुपाकर उनके साथ खेलता है x शाम को गुरु ढूंढने लगे x देवी ने आचार्य को पूरी बात कही x

(b) द्वेष (पूर्वभव का संबंध या अवज्ञादि से किया गया द्वेष) - eg. संगम।

(c) विमर्श (प्रतिज्ञा से चलित होता है या नहीं) - eg. एक देवकुल में साधु चौमासा कर निकले x उनका एक साधु, जो पहले अन्य जगह गया था, वहीं चौमासा करने आया x देव ने सोचा - दृढ़धर्मी है या नहीं? x श्राविका बनकर उपसर्ग किया x साधु मना करता है x तुष्ट होकर देव ने वंदन किया।

(d) पृथग्विमात्रा - पहले हास्य से शुरू करे फिर द्वेष से उपसर्ग करे वि. सांयोगिक भांगे।

2. मानुष्य - 4 प्र.

(a) हास्य - eg. एक गणिकापुत्री x भिक्षा आए हुए बालसाधु को उपसर्ग करती है x साधु ने दंड से मारा x राजसभा में case किया x राजा ने साधु को बुलाया x साधु ने श्रीगृह दृष्टांत दिया - हे राजन कोई आपके भंडार से रत्न चुराए तो क्या सजा दोगे? x राजा - सर्वस्व हरकर वध करूँगा x साधु - वह भी मेरे ज्ञान-दर्शन-चारित्र चोर रही थी अतः मैंने मारा x राजा ने पूजा कर साधु को छोड़ा xx

(b) द्वेष - eg. सोमभूति ने गजसुकुमाल को मारा। अथवा स्त्री के साथ अकार्य करते हुए एक ब्राह्मण को साधु ने देखा x ब्राह्मण द्वेष से मारने आया x साधु को पूछा - तूने क्या देखा? x साधु - बहुं सुणेइ कण्णेहिं, बहुं अच्छीहिं पेच्छइ। न य दिट्ठं सुयं पुव्वं, भिक्खु अक्खाउमरिहइ॥

(c) विमर्श - eg. चाणक्य ने चंद्रगुप्त को कहा - तू धर्म कर x अंतःपुर में अन्यतीर्थिकों को बुलाकर धर्मकथा कराई x रानियों द्वारा उपसर्ग करने पर भाग गए x साधुओं को बुलाया x वे बोले - यदि राजा बैठेगा तो हम कथा करेंगे x राजा आया x धर्मकथा प्रारंभ हुई x राजा गया x रानी उपसर्ग करती है x साधुओं ने रानियों को मारा और राजा को श्रीगृह का दृष्टांत कहा x राजा श्राद्ध हुआ।

(d) कुशील प्रतिसेवना - eg. एक ईर्ष्यालु x 4 पत्नी x घर में 7 वाड़ कराई x राजा को कहकर घोषणा कराई - 7 वाड़ वाले घर में किसी को प्रवेश नहीं करना x साधु शाम को वसति के लिए नहीं जानता हुआ घुसा x पहले प्रहर में पहली पत्नी आई - मुझे स्वीकार x साधु कछोटा बांधकर आसन को मुँह पर लपेटकर नीचे मुँह रखकर खड़ा रहा x वह थककर गई x अन्य पत्नियों ने पूछा - कैसा है? x प्रथम पत्नी - इसके जैसा दूसरा कोई मनुष्य नहीं है x वे भी 1-1 प्रहर उपसर्ग कर गई x बाद में चारों मिलकर बात करती है x उनका विकार शांत हुआ, श्राविका बनी xx।
पृथग्विमात्रा भेद को यहाँ हास्यादि 4 भेद में ही अंतर्भाव विवक्षा करना।

3. तैर्यग्योन - 4 कारण से

Date :

(a) भय - eg. कुत्ते वि. काटे।
(b) द्वेष - eg. चंडकौशिक अथवा वानरादि।
(c) आहार के लिए - eg. सिंहादि।
(d) अपत्य- संतान की रक्षा के लिए eg. कौए वि.।

4. आत्मसंवेदनीय - आत्मा (स्वयं) द्वारा जो किए जाए। 49.
(a) घट्टन से (खुजलाने से) - eg. आँख में रज घुसी तब खुजाए तो आँख दुःखने लगे अथवा कोई गांठ हुई हो, उसे मसलने से दुःखे।
(b) पतन से (गिरने से) - मंदप्रयत्न से चले और गिरे।
(c) स्तंभन से (सुन्न होने से) - एक ही Position में तब तक बैठा रहे, जिससे पैर सुन्न हो।
(d) श्लेषण से (मुड़ने से) - पैर को बहुत देर मोड़कर रखे जिससे वायु के कारण वह वैसा ही रह जाए अथवा नृत्यादि करते हुए अंग को इतना मोड़ दे कि वह मुड़ा ही रह जाए।

अथवा अन्य प्रकार से
(a) वात से (b) पित्त से (c) कफ से (d) सन्निपात (मिश्र) से।

→ ये द्रव्य उपसर्ग हुए। उपयुक्त जीव को ये ही उपसर्ग भाव उपसर्ग होते हैं।
→ इन उपसर्गों को झुकाने वाले नमस्कार के योग्य हैं।

हरिभद्रीय वृत्ति → [(i) अनुसंधान Pg. No. 58 पर]

अथवा माया में तोते का दृष्टांत - एक वृद्ध का पुत्र बाल साधु बना x स्नेह से पिता सभी इच्छा पूरी करते हैं x वह सुखशील हो गया x युवावस्था में स्त्री भी मांगी x पिता अयोग्य जानकर उसे निकाल देते हैं x नौकर का काम करता वह आर्तध्यान से मरकर माया से तोता बना x जातिस्मरण होने से धर्मकथा जानता है x एक वनचारक ने पकड़कर एक पैर तोड़ा और काणा बनाया x बेचने बाजार ले गया x कोई खरीदता नहीं है x वनचारक श्रावक की दुकान पर छोड़कर मूल्य लेने गया x तोते ने श्रावक को पहचान दी x उसने खरीदकर पिंजरे में डाला x श्रावक के स्वजन मिथ्यादृष्टि थे x यह धर्म सुनाता है x श्रावक का पुत्र एक माहेश्वर की पुत्री के पीछे पागल था x वह कभी धर्म नहीं सुनता x तोते के पूछने पर अन्य स्वजनों ने कारण बताया x वह बोला- तुम निश्चिंत रहो x तोते ने पुत्र को बुलाकर कहा- तू भस्म वाले संन्यासी के पास जाकर कपाल की पूजा कर मुझे एक ईंट हटाकर निकालना x उसने वैसा किया तो ऐसा लगा मानो देव प्रगट हुए x यह देखकर कन्या का पिता तोते के पैर पड़कर बोला- मेरी पुत्री का वर दो x तोते ने

Date :

श्रावक का पुत्र बताया × विवाह हुआ × कन्या गर्व करती है कि मैं देवदत्ता हूँ × एकदा तोता हँसा × आग्रह करने पर तोते ने उस कन्या को सही बात कही × उसे गुस्सा आया × एकदा घर के प्रसंग में तोता व्यस्त होने पर वह कन्या उसके पीछे खींचती है और बोली - तू बहुत बड़ा पंडित है ना | × 'समय पसार करूँ' ऐसा सोचकर बोला - मैं 'पंडित नहीं' हूँ, पंडित तो हजाम की पत्नी है —

चावल खेत में ले जाती एक नाई की पत्नी को चोरों ने पकड़ा × वह बोली - मैं भी तुम्हारे जैसे को ही ढूँढती हूँ, तुम रात को आना, हम रूपये लेकर भाग जाएँगे × चोर रात को आए × उसने छुरे से सबकी नाक काटी × दूसरे दिन चोरों ने पुनः उसे पकड़ा × वह बोली - अरे! कितने नाक काटे? × पैसे लेकर भाग गई × गाँव में भोजन लेने के बहाने से जाकर मुख्य चोर ने उसे बेचदिया × चोर पैसे लेकर भाग गए × वह स्त्री बचकर रात को पेड़ पर चढ़कर बैठी × चोर भैंस चोरकर उसी पेड़ के नीचे आए × मांस पकाकर खाते हैं × एक चोर ऊपर चढ़कर सभी ओर देखता है × स्त्री चोर को पैसे बताती है × वह उसके पास लेने जाता है × स्त्री उसे दाँत-जीभ से पकड़ती है × 'यहाँ यह स्त्री है' ऐसा गिरते-गिरते चिल्लाया × चोर भाग गए × स्त्री सब पैसे लेकर घर आ गई × ऐसे वह हजाम की पत्नी पंडित थी, मैं नहीं' ×

पुत्रवधू ने पुनः तोते के पीछे खींचे × तोता पुनः बोला - मैं पंडित नहीं किंतु वणिक् की पुत्री पंडित है —

वसंतपुर × एक वणिक् ने अन्य से शर्त लगाई कि माघ मास में जो एक रात पानी में रहेगा, उसे मैं हजार रू. दूँगा × एक गरीब वणिक् रहा × उसने पूछने पर कहा - नगर के एक घर में जलते दीपक को देखते हुए मैं रहा × वणिक् - तू दीपक के प्रभाव से पानी में रहा अतः रू. नहीं दूँगा × गरीब वणिक् की पुत्री ने चिंता का कारण पूछा × गरीब वणिक् - मैं निरर्थक पानी में रहा × पुत्री - चिंता मत करो, गर्मी में आप जमणवार रखकर सबको बुलाना, सामने पानी रखना, सब पानी मांगे तब कहना इस पानी को देखकर प्यास बुझाओ × गरीब वणिक् ने ऐसा किया × वह वणिक् बोला - पानी देखकर प्यास बुझती है क्या? × गरीब वणिक् - पानी देखने से प्यास नहीं बुझती तो दीपक देखने से मेरी ठंडी कैसे उड़ गई × उसने हजार रू. दिए × फिर पूछा - ऐसी बुद्धि किसने दी? × गरीब वणिक् - मेरी पुत्री ने × वह पुत्री पर गुस्सा हुआ, विवाह के लिए कहा × गरीब वणिक् ने पुत्री को परेशान न करे इसलिए मना किया किंतु पुत्री ने कहा - मेरा विवाह कर दो × विवाह नक्की हुआ × वणिक् घर में कूआँ खोदाता है × पुत्री ने स्वजनों को कहा - देखो, मेरे ससुराल में क्या चल रहा है × स्वजन - कूआ खोद रहे हैं × उसने कूए से घर तक सुरंग बनवाई × विवाह हुआ × उसने पत्नी को ~~सुरंग~~ कूए में उतारा और कहा, मैं दिग्यात्रा पर जाता हूँ, तू पंडित है ना तो ये कपास कातना और 3 पुत्र जन्म देना × वणिक् ने घर में कहा - उसे रोज चावल-कांजी खाने देना ×

पुत्री सुरंग से पिता के घर पहुँची × पिता को कहा - आप कुएँ में रहो और कपास से ये रस्सी

Date :

बनाओ x वह वेश्या बनकर आगे के नगर में गई x पति मिला x बहुत साल तक उसके साथ रही x 3 पुत्र हुए x वणिक् से बहुत पैसे लिए x वणिक् वापस आया x वह भी आई x सुरंग में पहुँची x वणिक् ने पलंग कूप में उतारा x पुत्री ने क्रमशः कपास की दोरी, प्रथम पुत्र, द्वितीय, तृतीय पुत्र के साथ स्वयं बाहर आई x वणिक् ने खुश होकर घर की स्वामिनी बनाया x

ऐसे वह वणिक् की पुत्री पंडित है, मैं नहीं x

पुत्रवधू ने पुनः तोते के पींछे खींचे x वह पुनः बोला - मैं पंडित नहीं, तिल खाने वाली कोली जाति की कन्या पंडित है -

कोली भील जाति की कन्या x उसके माता-पिता बाहर गए x घर में अकेली x एकदा चोर आया x उसने नाटक चालू किया - वह स्वयं को कहने लगी कि मैं मेरे मामा के पुत्र को दी गई हूँ, मेरे पुत्र का नाम 'चंद्र' रखूँगी, उसे बोलाऊँगी हे चंद्र! यहाँ आ' x इस प्रकार जोर से चंद्र बोला x पास में रहने वाला श्वेतध्वजचंद्र नामक व्यक्ति 'क्या हुआ?' कहता हुआ वहाँ आया, जिससे चोर भाग गया x

ऐसे वह पंडित है, मैं नहीं x

पुनः पींछे खींचे .... तोता - कुलपुत्र की पुत्री पंडित है, मैं नहीं -

वसंतपुर x जितशत्रु x कुलपुत्र नामक वणिक् x राजा ने घोषणा कराई - नहीं बनी हुई घटना पर (असत् वस्तु पर) भी मुझे जो विश्वास कराएगा, उसे भोगसामग्री मिलेगी x एकदा कुलपुत्र सूर्यास्त के बाद घर आया x पुत्री के पूछने पर कहा - इस चर्चा में देर हुई x पुत्री - मैं विश्वास कराऊँगी x राजसभा में गए x पुत्री ने राजा को कहा - मैं युवान् हुई तब मेरा विवाह मामा के पुत्र के साथ हुआ x मेरे माता-पिता बाहर गए x 'हृदय से मेरा आतिथ्य करती है या नहीं' यह देखने मामा का पुत्र अतिथि बनकर आया x रात में साँप काटने से वह मर गया x मृतक लेकर मैं श्मशान गई x भूत-पिशाच उपद्रव करने लगे x तभी राजा ने पूछा - तू डरी नहीं? x पुत्री - घटना सच हो तो डरूँ ना x

ऐसे वह पुत्री पंडित है, मैं नहीं x

इस प्रकार तोते ने पूरी रात में पुत्रवधू को 500 कथा कही x पुत्रवधू ने पींछे बिना के तोते को छोड़ दिया x एक बाज पक्षी ने उठाया x दूसरा बाज लड़ने लगा x दोनों की लड़ाई में वह नीचे गिरा x अशोकवन में दासी पुत्र दिखा x तोते ने उसे बचाने के लिए कहा x उसने बचाया x तोते ने राजा को कहकर दासीपुत्र को राजा बनवाया x 7 दिन राज्य किया फिर महेश्वर कुल और तोते को खरीदने वाले श्रावक का कुल, दोनों कुलों ने दीक्षा ली x दासीपुत्र अनशन कर सहस्रार देवलोक में गया x

इस प्रकार माया को दूर करने वाले अरिहंत नमस्कार योग्य हैं।

Date :

टिप्पणक → [(i) अनुसंधान Pg. No. 64] –

निषद्या परीषह – व्यंतरादिकृत अट्टहास्यादि अनिष्ट परीषह को निर्भय होकर सहन करे। दिव्यांगनाप्रार्थनादि इष्ट परीषह को स्पृहा बिना सहन करे। स्त्र्यादि रूप कंटक से रहित श्मशानादि निषद्या में अनिष्ट-इष्ट परीषह सहन करे।

→ [(ii) अनुसंधान Pg. 64] –

जीवानाशात् क्षमायोगात्, गुणाप्तेः क्रोधदोषतः ॥1.3॥ (हरिभद्रीय वृत्ति)

वध परीषह सहन करने की भावना –

(1) जीवानाशात् – यदि ये लकड़ी वि. मारने वाला मुझे मार भी डाले तो कौन यहाँ निवारण करता। अतः इसने मेरे जीव का नाश न करके इसने मुझे लाभ ही किया है।

(2) क्षमायोगात् गुणाप्तेः – क्षमा वालों को ही इहलोक में यशकीर्ति वि.; परलोक में सुगति वि. गुण होते हैं। अतः क्षमा के योग से गुणप्राप्ति होने से सहन करना चाहिए।

(3) क्रोधदोषतः – क्रोध वालों को इहलोक में प्राणनाश-अकीर्ति वि. दोष और परलोक में नरकादि दोष होने से सहन करना चाहिए।

→ [(iii) अनुसंधान Pg. 65] –

जीवाजीवादि वस्तु का जिज्ञासु यदि न जाने तो भी मोह न पामे अर्थात् 'मेरा जन्म विफल है, गर्भ में ही मैं मर क्यों नहीं गया' ऐसा आर्त्तध्यान न करे बल्कि ज्ञानावरण के क्षय के लिए धर्मध्यान करे। अन्य ज्ञानियों के सातिशयज्ञान को देखकर (तथैव) पूर्वार्द्ध में बताया हुआ आत्मनिंदा रूप मोह का त्याग करे, अन्यथा न करे।

चूर्णि → [*(i) अनुसंधान Pg. 51] –

राग के 4 निक्षेप में कर्मद्रव्यराग – रागवेदनीय बद्ध कर्म जब तक उदय में न आए। (Pg. 51 पर लिखे 4 भेदों का एक में समावेश)

→ [(ii) अनुसंधान Pg. 52] –

भाव राग = राग वेदनीय के उदय में आए पुद्गल।

[★ यद्यपि यहाँ भाव निक्षेप में पुद्गल का ग्रहण किया है किंतु भाव में परिणाम का ग्रहण होता है। यह द्रष्टव्य है कि मलयगिरि म. या हरिभद्रसू. म. ने उदित पुद्गलों को किसी भी निक्षेप में नहीं लिया। अतः ये दो मर्थ दो भिन्न परंपरा रूप में प्रतीत होते हैं। तत्त्वार्थ टीकाकार सिद्धसेनगणि ने भी अपनी टीका में कहीं-कहीं इसी प्रकार भाव निक्षेप

Date :

में पुद्गल का ग्रहण किया है। (जैसे- भावास्रव, भावबंध, भावमन वि०)]

→ (iii) अनुसंधान Pg.55
शब्दादि नय क्रोध-मान-माया को द्वेष तथा लोभ में भजना मानते हैं।

→ (iv) अनुसंधान Pg.55
कषाय के 8 निक्षेप की नयों से विचारणा-
नैगम सभी निक्षेप मानता है।
संग्रह-व्यवहार आदेश और उत्पत्ति निक्षेप नहीं मानता।
ऋजुसूत्र आदेश, उत्पत्ति और स्थापना निक्षेप नहीं मानता।
शब्दादि नय नाम और भाव कषाय को मानते हैं।

→ (v) अनुसंधान Pg.62
यहाँ अवांतर कथा-
वह युवक सोचता है-
अत्वरा सर्वकार्येषु, त्वरा कार्यविनाशिनी। त्वरमाणेन मूर्खेण, मयूरो वायसीकृतः॥
अटवी में कार्पटिक ने शुक(?) की आराधना की × वह शुक मोर रूप में नाचकर रोज।
सोने का पंख खिराता है × कार्पटिक ने सोचा- कितने दिन रहूँ, एक साथ सब पंख खींच लिए ×
वह कौआ बन गया, कुछ नहीं देता है।

मलयगिरीय
टीका युक्त. अरिहंत शब्द की अलग-अलग व्युत्पत्तियाँ-
गा. 919 इंद्रिय-विषय-कषाय-परीषह-वेदना-उपसर्ग रूप शत्रुओं का हनन करने वाले है- अरिहंत।
★ प्र. इंद्रियादि ऊपर अनंतर गाथा में ही कहे गए तो पुन: क्यों कहे?
उ. अनंतर गाथा में नमस्कार के हेतु रूप में कहे, यहाँ निरुक्ति के लिए कहे।

गा. 920 8 प्र. के कर्म सभी जीवों के शत्रुरूप हैं। उन कर्म शत्रु का हनन करने वाले है- अरिहंत।

गा. 921 वंदन-नमस्कार के और सिद्धि के योग्य होने से अर्हन्त।
★ वंदन- सिर से। नमस्कार- वचन से।
गा. 922 देव-असुर-मनुष्यों से पूजा के योग्य = अर्हन्त।

ii) देखें टिप्पणक

Date :

चूर्णि → नमस्कार के योग्य = अर्हन्त। 2 प्र. - द्रव्य, भाव।
द्रव्याई - प्रशस्त - हिरण्यादि के योग्य
अप्रशस्त - वध बंधादि के योग्य
भावार्ह - प्रशस्त - वंदननमस्कार के योग्य
अप्रशस्त - आक्रोशादि के योग्य।

→ वंदन - सिर से, नमस्कार - वचन से, पूजा - वस्त्रादि से, सत्कार - अभ्युत्थानादि।

मलयगिरीय टीका अव. नमस्कार की अभीष्टता बताने के लिए (i) अपांतरालिक फल बताते हैं -

गा.923 अरिहंत का नमस्कार जीव को हजारों भव से छुड़ाता है। भाव से किया जाता नमस्कार बोधिलाभ के लिए होता है।

★ प्र. भाव से भी किया जाता नमस्कार सभी जीवों को उसी भव में मोक्ष नहीं ले जाता। अतः 'जीव को छुड़ाता है' ऐसा क्यों कहा?

उ. यदि उसी भव में मोक्ष नहीं होता तो भी बोधिलाभ के लिए होता है और बोधिलाभ जल्दी से मोक्ष पहुँचाता है, अतः कोई दोष नहीं है।

★ सरूप शब्द यहाँ अनंत अर्थ में है।

गा.924 ~~अ~~भवक्षय को करते धन्य जीवों के हृदय को नहीं छोड़ता अरिहंत का नमस्कार दुर्ध्यान का वारक है।

★ ज्ञान-दर्शन-चारित्रलक्षणं धनं लब्धाः धन्याः।

★ भवक्षय को करते = मृत्यु को प्राप्त करते।

★ भावार्थ - मृत्यु प्राप्त करते जीव यदि अर्हन्त नमस्कार करें तो उन्हें धर्मध्यान में एकाग्रता होती है।

गा.925 इस प्रकार अरिहंतनमस्कार महार्थ कहा गया है। क्योंकि मरण समीप में आने पर यह नमस्कार ही बार-बार बहुत बार किया जाता है।

★ प्र. यह नमस्कार महार्थ कैसे है?

उ. क्योंकि अल्पाक्षर होने पर भी द्वादशांग का संग्रह करने वाला है।

प्र. नमस्कार 12 अंग का संग्राही कैसे?

उ. मरणकाल में 12 अंग के परावर्तन की शक्ति न होने पर सभी महर्षि नमस्कार का स्मरण करते हैं।

Date :

अत. उपसंहार —

गा.926 अरिहंतो नमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं॥

★ पासयति - प्रक्षिनयति जीवं इति पापम्। (औणादिक प प्रत्यय, पा धातु)
पिबति हितं इति पापम्।
पाति - रक्षति भवान्निर्गच्छन्तं जीवं इति पापम्।

★ प्रथम स्थान = नामादि सभी मंगलों में प्रधान मंगल, अथवा अरिहंतादि 5 भाव मंगलों में प्रथम मंगल।

टीप्पणक → (i) [Pg. 72]

Q. अपांतरालिक फल तो स्वर्गादि को कहते हैं। गाथा में तो मोक्ष फल (हजारों भव से छुड़ाना) कहा है। अतः यहाँ अवतरणिका और गाथार्थ में विरोध कैसे नहीं है?

A. यहाँ स्वर्गादि की अपेक्षा से अपांतराल शब्द नहीं कहा है किंतु (द्वार गा.887) 'उप्पत्ती निक्खेवो' द्वार गाथा के क्रम से अरिहंतादि पाँचों के नमस्कार का फल अंत में (१. फल द्वार, देखें द्वार गा.887 Pg. 34) कहा जाएगा। उसकी अपेक्षा यह फल अपांतरालिक कहा गया।

मलयगिरीय टीका

'सिद्ध'

★ सिद्धयति स्म सिद्धः। जो जिस गुण से परिनिष्ठित हो, पुनः साधने योग्य न है वह सिद्ध eg. सीजे हुए चावल।

★ सिद्ध - १५ निक्षेप। नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य सिद्ध में तद्व्यतिरिक्त - चावल।

अत. नाम-स्थापना-द्रव्य सिद्धों को छोड़कर शेष निक्षेप —

गा.927 (1-3) ४. कर्मसिद्ध 5. शिल्पसिद्ध 6. विद्यासिद्ध 7. मंत्रसिद्ध 8. योगसिद्ध 9. आगमसिद्ध
(प्रतिद्वार गा.) 10. अर्थसिद्ध 11. यात्रासिद्ध 12. अभिप्रायसिद्ध 13. तपसिद्ध 14. कर्मक्षयसिद्ध।

अत. कर्म का स्वरूप —

गा.928 ★ कर्म = आचार्य के उपदेश बिना सातिशय, अनन्यसाधारण उत्पन्न होने वाला। eg. कृषिवाणिज्यादि।

★ शिल्प = आचार्योपदेश से उत्पन्न होने वाला, सातिशय कर्म अथवा ग्रंथनिबद्ध।

Date :

eg. घटकार, लोहकारादि। (यह निर्देश भाव की प्रधानता वाला है क्योंकि घटकारत्व, लोहकारत्वादि शिल्प है, घटकारादि नहीं)

अत. 4. कर्म सिद्ध –

गा 929 ★ जो सर्वकर्म में कुशल है या एक भी कर्म में सुपरिनिष्ठित है, वह कर्म सिद्ध।

★ सह्यगिरिसिद्ध – कोंकण × एक विकट देश में पुरुष सह्य पर्वत पर भाजन ऊपर चढ़ाते-उतारते हैं × उनके विषमभार को देखकर राजा ने आज्ञा की - इन्हें मेरे द्वारा भी मार्ग देना चाहिए, इनके द्वारा किसी को मार्ग नहीं देना चाहिए × एक सिंधु देश का पुराण (जिसने दीक्षा छोड़ी हो) सोचता है - मैं ऐसी जगह जाऊँ जहाँ जीव थके और सुखी न हो × वह भी पर्वत पर सबसे अधिक भार उठाकर चढ़ने लगा × उसने एकदा एक साधु को रास्ता दिया × सब लोगों ने राजा को कहा × राजा ने उसे कहा - तूने मेरी आज्ञा लांघकर अच्छा नहीं किया × पुराण - आपने भार के कारण ऐसी आज्ञा की थी ना! × राजा - हाँ × पुराण - तो वह साधु मुझसे अधिक भार वहन करता है × राजा - कैसे? × पुराण - इस भार से हम थक जाते हैं, वे साधु 18000 शीलांग के भार को यावज्जीव थके बिना वहन करते हैं, अतः वे अधिक भार वाही हैं × राजा बोध पाया × पुराण ने भी संवेग से पुनः दीक्षा ली ××

अत. 5. शिल्प सिद्ध –

गा 930 ★ जो सर्व शिल्प में या एक भी शिल्प में सुपरिनिष्ठित है।

★ कोक्कास वर्द्धकि – सोपारक × रथकार की दासी को ब्राह्मण से एक पुत्र हुआ × (दासीपुत्र शिल्प के लिए अयोग्य होता है अतः मुझे कोई जाने नहीं ऐसे वह मौन रहता है - दीपणक) × रथकार उसके पुत्रों को सिखाता है किंतु वे मंदबुद्धि कुछ नहीं सीखते × दासीपुत्र सब सीखता है × रथकार मरा × राजा ने दासीपुत्र को उसका सब कुछ दे दिया ×

उज्जयिनी में श्रावक राजा × उसके 4 श्रावक ⓐ रसोईया - वह ऐसी रसोई बनाता कि खाने वाले को उसकी इच्छानुसार पचे ⓑ अभ्यंगन करने वाला - यह कुडव जितना तेल शरीर में उतारकर इतना ही बाहर भी निकालता ⓒ शय्यापालक (मालिश) – ऐसी शय्या बिछाता कि सोने वाला उसकी इच्छानुसार उठता ⓓ कोशाध्यक्ष - ऐसी कला थी कि भंडार में घुसने वाले को इसकी इच्छानुसार ही दिखता × राजा पुत्र रहित होने से उदासीन होकर दीक्षा की भावना में था ×

पाटलीपुत्र × जितशत्रु × इस राजा ने उज्जयिनी को घेर लिया × उज्जयिनी के राजा को मरणांत शूल होने से वह मरकर देवलोक गया × नगर जनों ने नगरी जितशत्रु को सौंपी × 4 श्रावकों को राजा ने पूछा - तुम क्या करते हो? × कोशाध्यक्ष भंडार में राजा को ले गया किंतु भंडार खाली दिखा

Date :

x फिर अन्य दरवाजे से पुनः भंडार में धनादि दिखाया x शय्यापालक ने ऐसी शय्या बिछाई कि राजा को हर मुहूर्त में उठना पड़ता है x रसोईए ने ऐसा भोजन बनाया कि राजा को बार-बार खाना पड़ता है x मालिश करने वाले ने मालिश के बाद एक पैर में से तेल नहीं निकाला और कहा- जो मेरे जैसा हो, वह निकाले x चारों ने दीक्षा ली x तेल की गर्मी से राजा का शरीर काला हो गया x उसका 'काकवर्ण' नाम प्रसिद्ध हुआ x

सोपारक में दुष्काल हुआ x कोकास उज्जयिनी गया x राजा को स्वयं की कला बताने यंत्रमय कबूतरों से सुगंधी चावल चोरे x कोष्ठागारों ने राजा को कहा x आरक्षकों ने कोकास को पकड़ा x राजा ने पगार fix कर रख लिया x कोकास ने आकाशगामी गरुड़ बनाया x राजा, कोक्कास और रानी उसमें घूमते हैं x शेष रानियों ने परानी को पूछा- किस खील से यंत्र वापस आता है? x परानी ने बता दिया x ईर्ष्या से उन रानियों ने वह कील निकाल दी x राजा-रानी और कोक्कास उड़े x किंतु यंत्र वापस नहीं आता है x सीधे उड़ते हुए कलिंग देश में तलवार जैसे पेड़ से टकराकर पंख टूटने से गरुड़ नीचे गिरा x पंख जोड़ने के उपकरण लेने नगर में एक रथकार के यहाँ गया x रथकार पहिए बना रहा था x एक पूरा बना गया था, दूसरा आधा x वह उपकरण लेने घर गया x कोक्कास ने पूरा बना दिया x वह चक्र फेंकने पर बहुत दूर जाकर किसी से टकराकर पुनः जहाँ से फेंका था, वहाँ आ जाता है और खड़ा रखने पर नीचे नहीं गिरता x उस रथकार का बनाया हुआ चक्र फेंकने पर दूर तो जाता है किंतु टकराकर वहीं गिर जाता है x रथकार ने आकर चक्र देखकर उसे पहचान गया x नगर के राजा को कोक्कास की बात की x कोक्कास को पकड़ा x मारने पर काकवर्ण राजा की बात की x राजा ने काकवर्ण राजा-रानी को पकड़ लिया और खाने को देना बंद किया x अपयश के भय से नागरिक कौए को पिंड देने लगे x कोक्कास को राजा ने कहा- मेरे 100 पुत्र के लिए 7 मंजिला महल बना, मेरा स्थान बीच में रखना x उसने बनाया x काकवर्ण के पुत्र को लेख भेजा कि यहाँ जिससे मैं इसे मारूँ और तू तेरे माता-पिता को बचा x दिन fix किया x उस दिन कोक्कास ने महल की कीलें निकाली x महल गिर गया x राजा पुत्रों सहित मर गया x काकवर्ण के पुत्र ने नगर लिया और माता-पिता को छुड़ाया xx

भत. 6. विद्यासिद्ध -

गा.931 ★ जिसका देव स्त्री हो या जो साधनासहित हो, वह विद्या।
जिसका देव पुरुष हो या जो साधना रहित हो, वह मंत्र।

गा.932 ★ सभी विद्या में सिद्ध या एक भी विद्या में परिनिष्ठित।

Date :

★ आर्य खपुट – खपुटाचार्य विद्यासिद्ध थे x उनका भानजा बाल था x उसने सुन-सुनकर विद्याएँ ग्रहण की x आ. भानजे को भरूच में साधुओं के पास छोड़कर गुड़शस्त्र नगर गए x वहाँ एक परिव्राजक वाद में साधुओं से हारकर गुड़शस्त्र नगर में बड़े हाथवाला व्यंतर बना x उसने साधुओं पर उपसर्ग किए x ~~आ. पुन: आए~~ x आ. ने व्यंतर के मंदिर में जाकर प्रतिमा के कान पर जूते लटकाए x पूजारी लोगों को लेकर आया x जैसे-जैसे मंदिर खोलते हैं, वैसे-वैसे प्रतिमा का नीचे का भाग दिखने लगा x राजा आया x राजपुरुष लकड़ियों से आ. को मारते हैं x वे प्रहार अंतःपुर में रानियों को लगने से छोड़ दिया x बड़े हाथ वाला वृहत्कर व्यंतर चलने लगा x उसके पीछे अन्य व्यंतर भी चलने लगे x मंदिर में दो ~~पा~~ पाषाणमय कुंडी थी x वे भी आ. के आसपास घूमने लगी x राजा वि.ने विनंती की - छोड़ दो x आ. ने व्यंतरों को छोड़ दिया x बहुत दूर जाकर कुंडियों को भी छोड़ दिया और कहा- जो मेरे जैसा हो, वह वापस ले जाए x

आ. का भानजा आहार की आसक्ति से बौद्ध बन गया x उसके पात्र उपासकों के घर जाते x सबसे आगे का पात्रा वस्त्र से ढँका रहता x आकाशमार्ग से पात्रे जाते x उपासक श्रेष्ठ आसन पर पात्रे रखते x यदि वे अनादर करें तो पात्रे भोजन लिए बिना ही आगे चल देते x संघ ने खपुटाचार्य को बात की x पात्र भराकर पुन: आकाश में वापस आते x बीच में आ. ने एक पत्थर रख दिया x पात्रे टकराकर टूट गए x भानजा डरकर भाग गया x आ. बौद्ध के पास गए x बौद्ध- आओ, बुद्ध के पैर पड़ो x आ.- हे बुद्ध! मुझे वंदन करो x बुद्ध की प्रतिमा ने आ. के पास आकर वंदन किया x दरवाजे पर एक पुतला था x उसने आ. के कहने पर वंदन किया x आ.- खड़ा हो x खड़ा हुआ x ऐसे ही रहना x आ. के पास आकर वैसे ही खड़ा रहा x पुतले का नाम निर्ग्रंथनामित पड़ा xx

अव. 7. मंत्रसिद्ध –

गा. 933 ★ जिसने सर्व मंत्र अधीन किए हो या बहुत मंत्र या कोई एक मंत्र सिद्ध करने वाला।

★ स्तंभाकर्षक – एक नगर में राजा ने रूपवती साध्वी का अपहरण किया x संघ इकट्ठा हुआ x उसमें एक मंत्रसिद्ध साधु ने राजांगन के स्तंभों को मंत्रित किया x वे थंभे आकाश में हिलने लगे x महल के थंभे भी हिलने लगे x राजा ने साध्वीजी को छोड़ दिया x संघ के पास क्षमा माँगी xx

अव. 8. योगसिद्ध –

गा. 934 सभी द्रव्ययोग या एक भी योग में सिद्ध।

Date :

★ समिताचार्य — आभीर देश x कृष्णा और बेन्ना नदी के बीच में तापस रहते हैं x उनमें से एक पादलेप से पानी पर चलता है x लोक आकृष्ट हुए x जैनों की निंदा हुई x वज्रस्वामी के मामा आर्यसमित विचरते हुए आए x श्रावकों ने बात की x व रुकने को नहीं इच्छते x संघ - आप रुकने के लिए क्यों नहीं इच्छते? x आ. - यह लेप लगाता है, इसमें कुछ रुकने जैसा नहीं है x श्रावकों ने तापस को घर बुलाया कि हम भी दान देंगे x घर आने पर नहीं मना करने पर भी जबरन पैर और पादुका धोई x फिर पानी में उतरे तो डूबने लगे x श्रावकों ने स्पष्ट कहा कि दंभ से लोगों को ठगते हैं x आ. निकले x योग नदी में डालकर कहा - हे पुत्रि (नदि)! तू रास्ता दे x दोनों किनारे मिले x आ. सामने पहुँच गए x तापसों ने दीक्षा ली और ब्रह्मद्वीप में रहने वाले होने से ब्रह्मद्वीप नाम से जाने गए xx

अव. 9.10. आगम - अर्थ सिद्ध —

गा935 ★ आगमसिद्ध - 12 अंग का ज्ञाता, ये भूत-भविष्यादि जानने से अतिशय वाले ही होते हैं। यहाँ गौतमादि अनेक उदाहरण जानना।

★ अर्थ = धन, जिसके पास बहुत धन हो।

मम्मण - राजगृह x मम्मण सेठ x बहुत मेहनत से बहुत धन कमाया x वह धन को खाता-पीता भी नहीं है x महल के सबसे ऊपर वाली मंजिल करोड़ों रुपये से, सोने के, रत्नजड़ित, वज्ररत्न के सींग वाले बैल बनाए x दूसरा बैल भी बहुत कुछ बन गया था x उसे पूरा करने के लिए वर्षाऋतु में मात्र कछोटा बांधकर नदी में से काष्ठ खींचता है x उस समय राजा रानी के साथ गवाक्ष में बैठा था x गरीब को देखकर रानी ने कहा - राजा खरेखर मेघ और नदी समान होते हैं (अर्थात् जैसे मेघ और नदी जहाँ पानी होता है, वहीं होते हैं, मरुभूमि में नहीं वैसे राजा भी धनिक श्रेष्ठियों का ही सत्कार करता है, गरीब का नहीं) x राजा - कैसे? x रानी ने गरीब बताया x राजा ने बुलाया x पूछा - क्यों ऐसा कष्ट करता है? x मम्मण - बैल की जोड़ी पूरी नहीं होती x राजा - 100 बैल लेजा x मम्मण - मुझे उनका काम नहीं है, x मेरे बैल जैसा ही दूसरा बैल दो x राजा - तेरा बैल कैसा है? x घर लेजाकर दिखाए x राजा - मेरे पूरे भंडार से भी यह बैल पूरा नहीं होगा, इतना वैभव होने पर भी तृष्णा क्यों करता है? x मम्मण - यह बैल बनने पर ही मुझे सुख मिलेगा, इसलिए मैंने उपाय किए हैं - सभी जगह किराना बेचना, खेती करना, हाथी-बैल-घोड़े बेचना x राजा - इतना व्यापार है तो थोड़े के लिए क्यों कष्ट करता है? x मम्मण - मेरा शरीर सहन करने में समर्थ है और अभी कुछ काम नहीं है तथा वर्षा में मूल्यवान् लकड़ियाँ नदी के पूर में बहती हैं अतः मैं यह काम करता हूँ x राजा - तेरे मनोरथ को पूरा करने तू ही समर्थ है, मैं नहीं।

Date :

अव. 11. यात्रा सिद्ध –

गा. 936 ★ स्थल-जलादि पथों पर सदैव अविसंवादित यात्रा करने वाला। अथवा वरदान प्राप्त करने वाला।

★ जिसने 12 बार समुद्र यात्रा की हो, वह यात्रासिद्ध। अन्य यात्रिक इसका दर्शन स्वयं की यात्रा के लिए मंगल रूप मानते हैं।

★ तुंडिक – तुंडिक वणिक x लाखों बार समुद्र में वाहन टूटा x तो भी वह नहीं हारता और बोला – पानी में गया हुआ पानी में से ही मिलता है x स्वजनादि सहाय करते हैं तो भी नहीं लेता x उसके दृढ़ निश्चय से देव प्रसन्न हुआ, धन दिया और पूछा – तेरे लिए और क्या करूँ? x तुंडिक – जो मेरा नाम लेकर समुद्र में जाए वह भी बिना वापस आए x देव – तथास्तु।
अन्य मत – निर्यामक की एक पोटली समुद्र में गिर गई x तुंडिक ने उसे लेने समुद्र को खाली करना चालू किया x थके बिना करता देख देवी ने उपर्युक्त वरदान दिया xx।

अव. 12. अभिप्राय सिद्ध –

गा. 937 ★ जिसकी ~~सर्वे कर्की~~ बुद्धि विपुल, विमल, सूक्ष्म है अथवा जो औत्पत्तिक्यादि 4 प्र. की बुद्धि से युक्त है, वह बुद्धि या अभिप्राय सिद्ध।

★ विपुल = विस्तार वाली, एक पद से अनेक पद का अनुसरण करने वाली।
विमला = संशय-विपर्यय-अनध्यवसाय रूप मल से रहित।
सूक्ष्म = अत्यंत दुःख से बोध्य हो सके जिसका ऐसे सूक्ष्म और व्यवहित अर्थ को जानने में समर्थ।

अव. 4 प्र. की बुद्धि –

गा. 938 (प्रतिद्वार गा.) (I) औत्पत्तिकी (II) वैनयिकी (III) कार्मिकी (IV) पारिणामिक, ये 4 प्र. की बुद्धि है। 5वीं कोई बुद्धि नहीं है।

(I) औत्पत्तिकी = उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्या:। उत्पत्ति यानि क्षयोपशम।
प्र. सभी बुद्धि का क्षयोपशम प्रयोजन है तो यही औत्पातिकी कैसे?
उ. क्षयोपशम अंतरंग कारण होने से सर्व बुद्धि में साधारण प्रयोजन है। अतः उसकी विवक्षा नहीं की जाती। किंतु अन्य शास्त्र-कर्म-अभ्यासादि की जिसे अपेक्षा न हो, मात्र क्षयोपशम ही (उत्पत्तिरेव) जिसका कारण हो, वह औत्पातिकी।

(II) विनय, गुरुशुश्रूषा कारणं यस्या: सा वैनयिकी।

Date :

(III) कर्म = अनाचार्यक अथवा कादाचित्क (कादाचित्क = जिस दिन कार्य शुरु किया, उसी दिन पूरा हो वह कादाचित्क कर्म eg. पीठ-फलकादि-निर्माण - टीप्पणक)
शिल्प = आचार्यक अथवा नित्य व्यापार (जो कार्य बहुत दिन चले eg. महल बनाना - टीप्पणक)
इन कर्म से उत्पन्न होने वाली कर्मजा (कार्मिकी) बुद्धि।

(IV) परि-समन्तान्नमनं - यथावस्थितवस्त्वनुसारितया गमनः परिणामः = वस्तु स्वभाव के अनुसार वस्तु का संपूर्ण रूप से ढलना।
परिणाम = दीर्घ काल तक पूर्वापर अर्थावलोकनादि से जन्य, आत्मा का धर्म विशेष।
स कारणं अस्याः पारिणामिकी।

अव. (I) औत्पातिकी बुद्धि –
गा.939 पूर्व में नहीं देखे-सुने-विचारे अर्थ को तत्क्षण ही विशुद्ध रूप में ग्रहण करने वाली और अव्याहत फल के योग वाली औत्पत्तिकी बुद्धि।
★ अव्याहत = इह-परलोक से एकान्तिक अविरुद्ध, ऐसे फल के योग वाली।

अव. इसके उदाहरण –
गा.940 1. भरत शिला 2. शर्त (पणिक?) 3. वृक्ष 4. मुद्रिका 5. पट 6. गिरगिट 7. कौआ 8. विष्ठा 9. गज 10. विदूषक 11 (घृतान्न) 11. गोली 12. खंभा 13. क्षुल्लक 14. मार्गस्त्री 15. पति 16. पुत्र
गा.941 a भरतशिला b भेड़ c मुर्गा d तिल e बालु f हाथी g कुआँ h वनखंड i खीर j बकरी की लेंडी k. पत्ते l. गिलहरी m. 5 पिता (प्रथम भरतशिला दृष्टांत के अंतर्गत)
गा.942 17. मधुमक्खी का छत्ता 18. अंगुठी 19. मुहरछाप 20. पैसे 21. भिक्षु 22. बालक-निधान 23. शिक्षाशास्त्र 24. अर्थशास्त्र 25. बड़ी इच्छा 26. लाख मूल्य वाला पात्र।

1. (a) भरतशिला – उज्जयिनी के पास नटों का गाँव x एक भरत नामक नट की पत्नी मर गई x पुत्र छोटा था x वह दूसरी पत्नी लाया x वह पुत्र के साथ सम्यक् नहीं वर्तती x पुत्र - यदि मेरे साथ बराबर नहीं वर्तेगी तो ऐसा करूँगा कि मेरे पैर में गिरना पड़ेगा x रात में पिता को सहसा बोला - देखो, यह पुरुष जा रहा है x पिता ने पत्नी को दुराचारी समझकर राग कम किया x पत्नी ने अच्छा वर्तन करने को कहा तो बोला - मैं सब ठीक कर दूँगा x एक दिन छाया को दिखाकर

Date :

बोला - देखो, यह पुरुष x पिता लज्जित हुए और सोचा - इसके पहले भी यही पुरुष बताया होगा x अतः पत्नी पर राग हुआ x

मुझे विष देकर मार न दे अतः रोहक पिता के साथ ही जिमता है x

एकदा उज्जयिनी गए x नगर देखकर बाहर निकले x कुछ भूली वस्तु लेने पिता पुनः गए x रोहक ने शिप्रा नदी के किनारे नगरी बनाई x वहाँ राजा आए तो उसने रोका कि राजकुल में से मत निकलना x राजा ने पूछा कैसे ? x उसने देवकुल-राजकुल सहित नगरी का वर्णन किया x राजा 'कहाँ रहता है? कितनी बार नगरी देखी?' वि. पूछता है x उसके पिता आ गए xx

राजा के 499 मंत्री थे x एक मंत्री की खोज थी जो सबका प्रधान बने x परीक्षा के लिए गाँव को राजा ने ~~पूछा~~ कहा - गाँव के बाहर की मोटी शिला का मंडप बनाओ x लोग व्याकुल हुए x पिता देर से घर आए x रोहक - हम कभी से भूखे हैं x पिता - तू तो सुखी है x रोहक को सब बताया x रोहक - शिला के नीचे खोदकर थंभे लगा दो x गाँव वालों ने ऐसा किया x लीपण वि. भी किया x राजा को कहलाया x राजा ने पूछा - किसने बनाया ? x गाँववाले - रोहक ने।

b. राजा ने गाँव में भेड़ भेजी x कहा - एक पक्ष में इसका वजन घट-बढ़ना नहीं चाहिए x गाँव वालों ने रोहक को पूछा x रोहक - सिंह के साथ बांध दो और घास दो x घास खाने से वजन बढ़ा नहीं और डर से घटा भी नहीं।

c. मुर्गा — राजा - अकेले मुर्गे का युद्ध कराओ x रोहक - दर्पण सामने रख दो, प्रतिबिंब के साथ लड़ेगा।

d. तिल — राजा - तिल जितना ही तेल देना x रोहक ने काँच में दोनों के same size की image बनाकर भेज दिया। (जैसे एक ही metre से मापने से दो वस्तु समान होती है, वैसे यहाँ उसने काँच से मापा)

e. बालु — राजा - बालु रेती की रस्सी बनाओ x रोहक - आपके भंडार में sample हो तो भेज दो।

f. हाथी - राजा ने बूढ़ा हाथी भेजा और कहा - रोज हाथी के समाचार मुझे देना किंतु 'मर गया' ऐसे समाचार तुम्हें मुझे नहीं देना x एक दिन हाथी मर गया x रोहक - राजा को कहो कि हाथी उठता नहीं है, बैठता नहीं है, खाता नहीं है वि. x राजा - क्या वह मर गया? x लोक - ऐसा आप कहते हो, हम नहीं।

g. कुआँ - राजा - तुम्हारे गाँव के कुएँ का पानी मीठा है अतः कुएँ को यहाँ भेज दो x रोहक-

गाँव का कूआँ अकेला नगर में डरता है अतः उसे लेने पहले नगर के कुएँ को भेजो।

h. वनखंड – राजा - तुम्हारे गाँव के पूर्व दिशा वाले वनखंड को पश्चिम में ले जाओ x रोहक के कहने से पूरा गाँव पूर्व में गया जिससे वनखंड पश्चिम में आ गया।

i. खीर - राजा - अग्नि बिना खीर पकाओ x रोहक के कहने से लोगों ने सूर्य से तपी बकरी की लेंडी और घास की गर्मी से खीर पकाई।

j. बकरी की लेंडी – k. पत्ते –

राजा - अकेला रोहक यहाँ आए किंतु वह शुक्ल या कृष्ण पक्ष में, रात या दिन में; छाया या धूप में, छत्र या खुल्ले सिर, पैदल या वाहन में, पथ या उत्पथ से, नहाकर या बिना नहाए न आए x रोहक देशस्नान कर, बैलगाडी के दो पहिए के बीच के रास्ते पर, (इससे पथ - उत्पथ का लंघन हुआ) बकरे पर (पैदल या वाहन नहीं), चलनी से सिर ढाँक कर (छत्र या खुल्ले सिर नहीं), संध्या समय (दिन - रात नहीं), अमावस्या की संधि पर (कृष्ण - शुक्ल पक्ष में नहीं) राजा के पास पहुँचा x राजा ने सत्कार किया x

रात को राजा ने स्वयं के पास सुलाया x प्रथम प्रहर में राजा - सोता है या जागता है? x रोहक - जागता हूँ? x राजा - क्या सोचता है? x रोहक - पीपल के पत्ते की डांडी बड़ी या शिखा? x राजा को जवाब न आने पर रोहक - दोनों समान है x ऐसे ही दूसरे प्रहर में रोहक - बकरी की लेंडी गोल क्यों होती है? x जवाब न आने पर रोहक - वायु के कारण x x

l. गिलहरी – तीसरे प्रहर में रोहक - गिलहरी के शरीर पर जितनी काली रेखा उतनी ही सफेद भी होती है; जितनी लंबी पूँछ उतना लंबा शरीर भी होता है।

m. पिता – चौथे प्रहर में रोहक को नींद आ गई x सोटी मारकर राजा ने जगाया और पूछा - सोता है या जागता है? x रोहक - जागता x क्या सोचता है? x आपके कितने पिता है? x कितने? x 5 - पिता कौन? x राजा, वैश्रमण, चांडाल, धोबी, केकड़ा x राजा माता के पास गया x बहुत आग्रह करने पर माता बोली - ऐसे तो राजा ही तेरे पिता हैं किंतु जब मैं ऋतुस्नाता थी तब वैश्रमण यक्ष की पूजा करने गई थी, अलंकृत देव को देखकर मुझे विकार हुआ, रास्ते में आते हुए रूपवान् चांडाल - धोबी को देखकर विकार हुआ, घर में महोत्सव के लिए आटे के केकड़े बनाए थे, उसके स्पर्श से भी मुझे विकार हुआ था x राजा ने रोहक को एकांत में पूछा - तुझे कैसे पता चला? x रोहक – न्यायपूर्वक राज्य चलाने से राजा,

Date :

दान से वैश्रमण, रोष से चांडाल, सर्वस्व हरण से धोबी, शांति से सोए हुए को सोरी मारने से केकेड़ा x राजा ने खुश होकर उसे प्रधानमंत्री बनाया। (गा.941 पूर्ण)

2. शर्त - दो जन ने शर्त लगाई x एक - यदि तेरी सभी ककड़ी कोई खाए, तो तू क्या देगा? x दूसरा - नगर के द्वार में से जो मोदक नहीं निकले, वह दूँगा x पहले ने सभी ककड़ी थोड़ी-थोड़ी चखकर रख दी और मोदक माँगने लगा x दूसरा - ये तो खाई नहीं है, चखी है x पहला लोक प्रमाण है x बेचने निकले x जो भी खरीदने आता, वह कहता कि ये तो खाई हुई हैं x दूसरा डरकर रूपये देता है, सौ रू. देने पर भी पहला नहीं मानता x दूसरा जुआरियों के पास गया x जुआरी ने उपाय बताया x उसने एक मोदक लाकर दरवाजे के पास रखा और बोला - हे मोदक! तू बाहर जा x यह मोदक नगर के द्वार में से नहीं निकलता, वह उसे दिया xx

3. वृक्ष - एक पथ में पथिक जा रहे थे x आम के पेड़ से आम लेने की इच्छा हुई किंतु बंदर लेने नहीं देते x अतः उन्होंने पत्थर फेंके x बंदरों ने आम तोड़कर फेंके xx

4. पुष्टिका - राजगृह x प्रसेनजित् x पुत्र श्रेणिक राजलक्षण से संपन्न होने पर 'यह पुत्र मारे नहीं' ऐसी बुद्धि से राजा उसे कुछ नहीं देता x वह अधृति निकल गया x बेनातट पहुँचा x एक श्रेष्ठि, जिनका वैभव नष्ट हो गया, की दूकान के पास आया x एक लाख का किराना सेठ का एक ही दिन में बिक गया x सेठ - तुम किसके महेमान हो? x श्रे. - आपका x सेठ उसे घर ले गया x कुछ समय बाद स्वयं की पुत्री परणाई x नंदा को स्वप्न में सफेद हाथी आया x गर्भ रहा x प्रसेनजित् राजा ने श्रे. को लेने ऊँट भेजा x श्रे. ने नंदा को कहा - हम राजगृह में सफेद दीवाल वाले प्रसिद्ध गोपाल हैं, हमारा काम हो तो वहाँ आना x वह गया x
नंदा को अभय की उद्घोषणा सुनने का दोहद हुआ x सेठ ने राजा को द्रव्य देकर दोहद पूर्ण किया x पुत्र हुआ, अभय नाम रखा x बड़ा होने पर पूछा - मेरे पिता कहाँ हैं? x माता ने पूरी बात कही x दोनों गए x राजगृह के बाहर रहे x पुत्र राजगृह में गया x
राजा मंत्री के लिए परीक्षा करता है x एक सूखे कूएं में पड़ी अंगुठी पात्र पर खड़े हुए निकालना है x अभय ने गोबर डाला x सूख जाने पर पानी से कूआ भरा x गोबर ऊपर आ गया x अंगुठी निकालकर राजा के पास गया x राजा - तू कौन है? x अभय - आपका पुत्र x राजा - कैसे? x वृत्तांत कहा x मंत्री बना।

5. पट - दो पुरुष नदी में नहाते हैं x एक के कपड़े मजबूत हैं, दूसरे के जीर्ण x जीर्ण वस्त्र वाला दृढ़ वस्त्र लेकर गया x पहला मांगने पर न दिए x राजकुल में case गया x न्यायाधीश - ये कपड़े

Date :

खरीदे हुए हैं या हाथ से बने हैं ? x हाथ से बने हैं x दोनों की पत्नियों को बुलाकर कपड़ा बुनवाया x बुनने की style देखकर न्याय किया x
अन्य मत - दोनों के सिर देखे x जिसका ऊनी कपड़ा था, उसके सिर में ऊन के तंतु थे, जिसका सूती कपड़ा था, उसके सिर में सूत के तंतु थे x जो कपड़े जिसके थे, उसे दिए।

6. गिरगिट — एक पुरुष ठल्ले गए x वह जहाँ बैठा था, वहाँ दो गिरगिट लड़े x एक गिरगिट उस पुरुष के नीचे रहे बिल में घुसा x घुसते हुए उसकी पूँछ पुरुष को छू गई x पुरुष को भ्रम हो गया - कि गिरगिट अंदर घुस गया x दुर्बल हुआ x वैद्य ने 100रु मांगे x एक घड़े में गिरगिट डालकर लाख से ढंक दिया x पुरुष को रेचक दिया x पुरुष को कहा ठल्ले घड़े में करना x बाद में तड़फड़ता गिरगिट देखकर वह स्वस्थ हुआ।

अथवा

7. गिरगिट को सिर हिलाते देख बौद्ध भिक्षु ने बाल मुनि को पूछा - यह सिर क्यों हिलाता है ? x बाल मुनि - वह सोच रहा है कि यह भिक्षु है या भिक्षुणी ?

7. कौआ - बौद्ध भिक्षु ने बाल मुनि को पूछा - अरिहंत सर्वज्ञ हैं ? x हाँ ! x इस गाँव में कितने कौए हैं ? x 60000, यदि कम हो तो समझना कि कुछ बाहर गए हैं, अधिक हो तो बाहर से आए हैं।

अथवा

एक वणिक् x बाहर जाते हुए उसने निधि देखा x उसने सोचा - मेरी पत्नी रहस्य गुप्त रखती है या नहीं, परीक्षा करूँ x पत्नी को कहा - सफेद कौआ मेरी गुदा में घुस गया x पत्नी ने सखी को कहा x परंपरा से राजा ने सुना x वणिक् को बुलाकर पूछने पर वणिक् ने वृत्तांत कहा x राजा ने उसे मंत्री बनाया।

अथवा

(हरिभद्रीय टीका -) एक कौआ विष्ठा बिखेर रहा था x एक वैष्णव ने बाल मुनि को पूछा - यह क्यों बिखेर रहा है ? x (वैष्णव का मत - स्थले विष्णु जले विष्णु ... सर्वत्र विष्णु है) x बालमुनि - वह भगवान् ढूँढ रहा है।

8. विष्ठा - एक ब्राह्मण की पत्नी अन्य गाम में जाते हुए धूर्त में रत हुई x दोनों लड़ने लगे - यह मेरी पत्नी है x पत्नी ने धूर्त को स्वयं का पति कहा x Case किया x न्यायाधीश ने तीनों को एकांत में पूछा - तुमने कल क्या खाया था ? x तीनों का जवाब लेने के बाद रेचक दिया x ब्राह्मण और पत्नी की विष्ठा में तिल देखे x धूर्त को भगा दिया।

Date :

9. गज – वसंतपुर x राजा ने मंत्री ढूँढने के लिए * हाथी का वजन मापने वाले को लाख सोनामुहर देने की घोषणा की x एक व्यक्ति ने हाथी को नाव में बिठाकर चिंतन जहाँ तक पानी आया, वहाँ नाव के बाहर निशान किया x हाथी को उतारकर उस निशान तक level आए उतने पत्थर भरकर पत्थर का वजन कर लिया x

अथवा

कोई यहाँ 'गाय' शब्द से गज की जगह गाय का दृष्टांत देते हैं –

(टीप्पणक –) चोर गायों को चोरकर पत्थर वाले मार्ग से गए, जिससे पैर के निशान नहीं दिखते x एक पुरुष पैर से चलने लगा, जिससे गाय के पैर के निशान उसके पैर पर उभरे x उसके अनुसार वह गाएँ वापस लाया।

10. विदूषक = सर्वरहस्य को जानने वाला – एक राजा रानी के गुण गाता है कि मेरी रानी अतीव निरामय है, उसे कभी वायूट भी नहीं होती x विदूषक - राजन्! ऐसा नहीं है, रानी हमेशा सुगंधी पुष्प-पराग पास में रखती है जिससे पता नहीं चलता x राजा ने परीक्षा की x बात सही निकली तो राजा हँसने लगा x रानी के आग्रह करने पर राजा ने वृत्तांत कहा x रानी ने उसे देशनिकाल किया x वह जूते की माला पहनकर जाने लगा x रानी ने कारण पूछा x वि.– आपकी कीर्ति (नीरोगी की) अन्य बहुत देशों में फैलाना है, इसलिए इतने सारे जूते लिए हैं x रानी ने सोचा - अभी यह एक ही जानता है, यदि जाएगा तो अन्य भी जानेंगे x अतः रोक लिया। (टीप्पणक ~~देखें~~ में स्पष्ट है)

11. गोलक – एक लड़के की नाक में लाख की गोली घुस गई x एक व्यक्ति तपी हुई शलाका से पिघलाकर निकाल दी।

12. खंभा – एक राजा मंत्री ढूँढता है x घोषणा की कि तालाब के बीच में खंभे पर जो तट पर रहकर डोरी बांधेगा, उसे लाख मुहर देंगे x एक व्यक्ति ने तट पर कीला बांधा, डोरी कीले पर बांधी, किनारे-किनारे घूमकर आया x लाख मुहर जीता, मंत्री बना।

13. बालमुनि – एक परिव्राजिका प्रतिज्ञा पूर्वक बोली – जो पुरुष जो करेगा, वह मैं भी करूँगी x राजा ने पटह बजवाया x भिक्षा गए बालमुनि ने सुना, पटह का वारण किया x राजकुल गए x स्वयं का लिंग बताया और मात्रु से कमल रचा x वह न कर सकी x मुनि जीते।

14. मार्गस्त्री – एक पुरुष पत्नी के साथ अन्य ग्राम जाता है x पत्नी मात्रु के लिए गई x पुरुष के रूप

से वाणव्यंतरी रत हुई x (वाणव्यंतरी पत्नी के रूप से साथ में लगी) x पत्नी बाद में आई x रोने लगी x राजकुल गए x दोनों कहने लगे - मेरा पति x न्यायाधीश ने विचारकर पुरुष को दूर रखा x कहा - जो पहले हाथ से उसे ले, उसका पति x वाणव्यंतरी ने दूर से हाथ लंबा किया x जाना - यह वाणव्यंतरी है x उसे निकाला।

अथवा

14. रास्ते में मूलदेव - कंडरिक जाते हैं x एक पुरुष पत्नी सहित देखा x कंडरिक स्त्री के रूप से मूर्च्छित हुआ x मूलदेव - मैं तुझे मिलाता हूँ x उसे एक वननिकुंज में रखकर रास्ते पर आकर खड़ा रहा x वह पुरुष - स्त्री के साथ आया x मूलदेव - यहाँ मेरी महिला को प्रसव है, इस स्त्री को भेजो x भेजा x स्त्री उसके साथ रहकर आई x आकर मूलदेव के वस्त्र को पकड़कर बोली - आपकी प्रिया ने पुत्र को जन्म दिया है x।

15. पति - दो भाइयों की एक पत्नी x लोक में प्रसिद्ध - पत्नी को दोनों पति समान हैं x परंपरा से राजा ने सुना x विस्मय हुआ x मंत्री - ऐसा कैसे होगा? अवश्य अंतर है x मंत्री ने महिला को लेख दिया - इन दोनों को गाँव जाना, एक को पूर्व में, एक को पश्चिम में, उसी दिन वापस आना है x उस महिला ने भेजा, जो द्वेष्य था उसे पूर्व में भेजा जिससे आते - जाते दोनों बार मस्तक पर सूर्य रहे x मंत्री की बात पर राजा के विश्वास नहीं करने पर पुनः दोनों को अलग - अलग गाँव में भेजा x दो पुरुष पत्नी के भेजे x दोनों ने कहा - दोनों पति की तबियत अत्यंत खराब है x पत्नी 'यह मंद संघयण वाला है' अतः बोलकर उधर गई x सबने जाना कि विशेष है। (टिप्पणक में स्पष्ट है।)

16. पुत्र - एक वणिक् दो पत्नी के साथ अन्य राज्य में गया x मरा x एक पत्नी को पुत्र था, वह कुछ समझता नहीं था x दोनों बोली - मेरा पुत्र है x राजकुल गए x मंत्री - धन के दो भाग कर पुत्र के भी तलवार से दो भाग करो x माता बोली - इसका ही पुत्र है, मत मारो x मंत्री ने जाना - इसका ही पुत्र है, जो उसके दुःख से रोती है x उसे ही दिया।

17. मधुसिक्थ - एक सिक्थकर था x उसकी पत्नी कुलटा थी x एकदा जार पुरुष के साथ मैथुन अवस्था में उसने ऊपर छत्ता देखा x शहद खरीदते पति को रोका - मैं छत्ता बताती हूँ x दोनों वहाँ गए x छत्ता नहीं दिखा x उसने मैथुन की वैसी ही अवस्था में रहकर पति को दिखाया x पति जान गया - यह कुलटा है।

18. मुद्रिका - पुरोहित अमानत रखकर देता है x लोक में प्रसिद्ध - पुरोहित सत्यवादी और निर्लोभ

Date :

है x एकदा द्रमक के 1000रू. वापस नहीं देता x वह पागल हो गया x मंत्री रास्ते से जा रहा था x द्रमक - पुरोहित! मेरे 1000रू. दे (यह मंत्री ने देखा) x उसे दया आई x राजा को कहा x राजा ने पुरोहित को कहा - इसके रू. दे x पुरोहित - मैंने लिए ही नहीं x राजा ने द्रमक को ~~विश्व~~ साक्षिती पूर्वक दिन वि. पूछा x एकदा राजा पुरोहित के द्यूत रमता है x परस्पर मुद्रा संचार हुआ x राजा ने वह अंगुठी पुरोहित को खबर न पड़े ऐसे व्यक्ति को दी x ~~उस~~ पहले से निश्चितानुसार वह पुरोहित के घर गया, पत्नी को कहा - द्रमक के इस दिन रखे 1000 रू. की पोटली दो x लेकर आया x अन्य पोटली के साथ मिला दी x द्रमक को कहा - तेरी ले ले x उसने स्वयं की ली x पुरोहित की जीभ छेदी x x। (टीप्पणक में स्पष्ट है)

19. अंक (मुहर) - एक पुरोहित अमानत रखता है x साधुवाद x एक द्रमक की थैली से उसने असली रूपये निकाल कर नकली भर दिए x आने पर दी x द्रमक ने नकली रू. देखकर मांगे x राजकुल गए x न्यायाधीशों ने द्रमक को पूछा - कितने थे? x हजार x ~~इस~~ असली 1000 रू. भरकर पुरोहित को थैली सीने दी x वह नहीं सील सका x राजा ने पुरोहित को दंड किया x x। (टीप्पणक - नकली रू. हल्के होने से कम जगह रोकते हैं x अतः ~~क~~ पुरोहित ने नकली रू. भरे x जगह खाली रहने से थैली नीचे से काटकर पुनः सिलाई की x अब पुनः असली रू. भरने पर थैली बंद नहीं हो सकती x अतः वह पकड़ा गया)

20. ~~भिक्षु~~ पण - एक द्रमक ने ~~भिक्षु~~ पुरोहित के पास अमानत रखी x पुरोहित ने ~~नकली भर~~ अल्पमूल्यवाली Currency भर दी x आने पर दिए x द्रमक - ये मेरे पैसे नहीं हैं x राजकुल गए x न्यायाधीश ने द्रमक को पूछा - तूने कब अमानत रखी थी x द्रमक - इतने काल पहले x न्यायाधीश - इतने काल ये पैसे थे ही नहीं, ये तो नए पैसे हैं अतः पुरोहित ने भरे x दंड किया।
(टीप्पणक में स्पष्ट है)

21. भिक्षु - एक द्रमक ने भिक्षु के पास अमानत रखी x आने पर वापस नहीं देता x द्रमक जुआरी के पास गया x जुआरी भगवा वस्त्र पहनकर सोने की लकड़ियाँ लेकर गए और कहा - हम तीर्थ जा रहे हैं, ये रखो x तभी पूर्व संकेतित द्रमक आया x मांगी x भिक्षु ने सोचा यदि नहीं दूँगा तो इन्हें अविश्वास होगा x अतः दी x जुआरी - 'अन्य भी भिक्षु जाने वाले हैं अतः बाद में उनके साथ जाएँगे' कहकर निकल गए x x।

22. बाल-निधान - दो मित्र ने निधान देखा x एक - कल सुनक्षत्र है, अतः कल लेंगे x वह रात में आकर निधान लेकर कोयले डालता है x दूसरे दिन दोनों आए, कोयले देखे x धूर्त - अहो! हम मंदपुण्य हैं इत्यादि बोलने लगा x दूसरा समझ गया किंतु कुछ न बोला x घर पर

Date :

उसकी प्रतिमा बनवाकर दो बंदर रखे x प्रतिमा में बहुत भक्त रखता जिससे बंदर उस पर चढ़ते x एक दिन उसके दो पुत्र भोजन के लिए बुलाए, छुपाया x वह पुत्रों को लेने उसके घर आया x प्रतिमा की जगह उसे बिठाया, बंदर छोड़े x कहा - ये तेरे पुत्र हैं x धूर्त - पुत्र बंदर कैसे हो गए? x दूसरा - जैसे दीनार के कोयले हुए, वैसे ही x उसने भाग दिया।

23. शिक्षाशास्त्र = धनुर्वेद - एक कुलपुत्र धनुर्वेद में कुशल x वह एक सेठ के पुत्र को सीखाता है x पैसे लिए x सेठ-सेठानी सोचते हैं - इसे बहुत पैसे दिए, जब जाएगा तब मार देंगे x उसे घर से बाहर नहीं जाने देते x वह समझ गया x उसने स्वजनों को संदेश दिया कि रात को मैं गोबर के कंडे नदी में डालूंगा, वह तुम ले लेना x कंडे के साथ धन मिश्रित किया x 'हमारी कुलपरंपरा है' कहकर सभी धन गोबर के साथ नदी में डाला x फिर स्वयं भी भाग गया।

24. अर्थशास्त्र - एक वणिक् दो पत्नी के साथ अन्य गाँव गया x मर गया x एक पत्नी को पुत्र किंतु छोटा x दोनों कहने लगी - मेरा पुत्र x सुमतिनाथ भ. के गर्भ में होने पर माता मंगला देवी ने सुना x दोनों को बुलाकर कहा - मेरा पुत्र इस अशोकवृक्ष के नीचे समाधान देगा तब तक दोनों समानतया खाओ-पीओ x जिसका पुत्र न था, उसने सोचा - इतना काल तो मिला, बाद में क्या होगा कौन जाने? x देवी की बात मान ली x देवी समझ गई कि इसका पुत्र नहीं है x।

25. इच्छा - एक स्त्री का पति मर गया x पति बिना उसे ब्याज नहीं मिलता x उसने पति के मित्र को कहा - तू ले आ x मित्र - यदि मुझे भाग दे तो x स्त्री - जिसे तू इच्छे मुझे देना x वह लाया x उसे बहुत कम दिया x वह नहीं मानी x राजकुल गए x न्यायाधीश ने सब धन मंगाया x दो ढेर किए - एक छोटा, एक बड़ा x उसे पूछा - तू कौन सा इच्छता है x मित्र - बड़ा x न्या. - इसने कहा था जिसे तू इच्छे वह मुझे देना अतः बड़ा इसे दे xx।

26. लाख - एक परिव्राजक के पास लाख मूल्य वाला पात्र था x उसने कहा - जो मुझे अपूर्वश्रुत बात सुनाएगा उसे यह पात्र दूंगा x सिद्धपुत्र - तेरे पिता ने मेरे पिता से लाख रू. लिए थे, यदि सुना है तो वह लाख रू. दे, नहीं सुना तो पात्र दे x जीता x। (गा 940-2 पूर्ण)

प्रव II वैनयिकी बुद्धि (देखें गा. 938 Pg. 78 पर) -

गा 943 कठिन कार्य करने में समर्थ, त्रिवर्ग के सूत्रार्थ का सार ग्रहण किया है जिसने ऐसी

Date :

दोनों लोक में फलवती विनय से उत्पन्न बुद्धि है।

★ ~~त्र~~ त्रिवर्ग = धर्म, अर्थ, काम। इनके सूत्र और अर्थ का सार ग्रहण करने वाली।
9. नंदीसूत्र में 4बुद्धि को अश्रुतनिश्रित कहा है। सूत्रार्थ का सार लेने से अश्रुत-निश्रित कैसे?
5. वहाँ प्रायःवृत्ति से अश्रुतनिश्रित कहा है। यदि अल्पश्रुत निश्रितत्व हो तो दोष नहीं है।

गा.944 1. निमित्त 2. अर्थशास्त्र 3. लेख 4. गणित 5. कूआँ 6. अश्व 7. गधा 8. लक्षण 9. ग्रंथि 10. औषध 11. गणिका और रथिक

गा.945 12. गीली साड़ी, लंबा तृण, क्रौंच की प्रदक्षिणा 13. नीक का पानी 14. बैल, घोड़ा, वृक्ष से गिरना

1. निमित्त – एक सिद्धपुत्र ने 2 शिष्य को निमित्त शास्त्र सिखाया x एकदा दोनों लकड़ी-घास लेने गए x रास्ते में हाथी के पाये देखे x एक – ये हाथिनी के पगले हैं x दूसरा – कैसे? x पहला – पिशाब देखकर पता चला और वह काणी है x कैसे? x एक तरफ ही उसने पत्ते-फूल खाए हैं x उसके ऊपर स्त्री-पुरुष बैठे हैं, उनमें से स्त्री गर्भवती है x कैसे? x वह हाथ का टेका देकर उठी x स्त्री ने लाल कपड़े पहने हैं x कैसे? x पैड़ों पर लाल तंतु दिख रहे हैं, उसे पुत्र होगा क्योंकि उसका सीधा पैर भारी है x
इसी समय नदी किनारे एक वृद्धा घड़ा लेकर आई x इन दोनों को परदेश गए पुत्र का आगमन पूछा x ~~बूढ़~~ उसी समय उसका भरा हुआ घड़ा फूटा x दूसरा – तेरा पुत्र मर गया है x पहला – तेरा पुत्र घर आ गया है x वह घर आई, पुत्र को देखा x वस्त्र और रू. से वापस आकर पहले शिष्य का सन्मान किया x
दोनों गुरु के पास गए x दूसरा – आपने मुझे बराबर नहीं पढ़ाया x गुरु – क्यों? x वृत्तांत कहा x पहला – घट मिट्टी में से जन्मा, उसी में मिल गया, वैसे पुत्र भी माता को मिल गया x गुरु – तू बराबर पढ़ा नहीं, मैं क्या करूँ? x प्रथम शिष्य की वैनयिकी बुद्धि।

2. अर्थशास्त्र – (टीप्पणक –) पाटलीपुत्र x नंद राजा ने कोई अपराध में कल्पक मंत्री को परिवार सहित अंधकूप में डाला x उनके भोजन के लिए कोद्रवादि रोज डालते हैं किंतु वे कम होते हैं x अतः वैर का बदला लेने कल्पक अकेला ही सब खाता है, बाकी सब मर जाते हैं x नंद कल्पक की बुद्धि से ही राज्य करता था x अतः ~~इ~~उसे अंधकूप में जानकर प्रतिपक्ष राजाओं ने पाटलीपुत्र को घेरा x तब नंद को कल्पक याद आया x राजा ने कूप से निकलवाकर

Date :

उसे भर्त्सना की x कल्पक ने स्वयं के पुरुषों को वहाँ भेजकर कहलवाया कि इधर से मैं नाव में आ रहा हूँ, उधर से तुम्हारे मंत्रियों को भेजा जिससे नदी के बीच संधि हो x सभी मिले x कल्पक कुछ भी असंबद्ध बोलकर वापस आ गया x उन मंत्रियों ने राजाओं को बात की x सभी राजाओं ने सोचा- कल्पक कभी भी ऐसा असंबद्ध नहीं बोल सकता, ये हमारे मंत्री ही उसने भेद लिए हैं; यदि यह पता होता कि यह जिंदा है तो हम आते ही नहीं x ऐसा सोचकर भग गए x

3.4. लेख-गणित — जो 18 देश की 18 लिपि को जाने उसकी वैनयिकी बुद्धि।
जो विषमगणित को जाने उसकी वैनयिकी बुद्धि।
अन्य मत- एक उपाध्याय ने राजकुमारों को लाख से बनी हुई अंटी से खिलाते-खिलाते गणित सिखाया।

5. कूप — कुएँ, वापी वि. के जानकार नैमित्तिक ने कहा- यहाँ इतना खोदो तो पानी निकलेगा x खोदा किंतु पानी नहीं निकला x नैमित्तिक -कुएँ के किनारे पर जोर से ठोको x ठोकने पर आवाज करता हुआ पानी निकला।

6. अश्व — अश्व का व्यापारी द्वारिका गया x सभी कुमार मोटे-तगड़े घोड़े खरीदते हैं x वसुदेव ने दुर्बल किंतु लक्षणयुक्त अश्व लिया x यह घोड़ा सभी काम करने वाला और अनेक घोड़े का लानेवाला हुआ।

7. गधा — एक राजा मंत्रीमंडल में तरुण ही ~~रखता~~ पसंद करता था, वृद्ध नहीं x एकदा सैन्य के साथ यात्रा पर गया x अटवी में सेना तृषा से पीड़ाई x तरुणों के कोई उपाय सफल नहीं हुए x वृद्ध को पूछा x उनमें एक पितृभक्त सैनिक खबर न पड़े ऐसे पिता को साथ में लाया था x वृद्ध-गधे जहाँ पैर पछाड़कर जमीन सूंघे, वहाँ थोड़ा खोदने पर पानी निकलेगा x।

8. लक्षण — पारस देश x अश्वपालक x (एक अश्व स्वामी ने स्वयं के घोड़े पालने अश्वपालक रखा x हर साल 2 घोड़े पगार रूप देने का नक्की किया x ~~ब~~ — टिप्पणक) x जब पगार लेने का समय आया तब उसने स्वामी की लड़की को पूछा- कौन से घोड़े लूँ? x पुत्री- शांति से बैठे घोड़ों के बीच में पत्थर से भरा थैला वृक्ष से डालना, घोड़ों के सामने पड़ह बजाना, जो घोड़े डरे नहीं और पत्थर से भरे वाजिंत्र विशेष बजाकर उन्हें दौड़ाना, जो सबसे आगे दौड़े उन घोड़ों को तू लेना x उसने परीक्षा कर वही घोड़े स्वामी से माँगे x स्वामी- इन दो घोड़ों को छोड़कर शेष सभी ले ले x किंतु वह नहीं माना x तो अश्वस्वामी ने स्वयं की पत्नी को कहा कि इसे हमारी

Date :

पुत्री दें x वह नहीं मानी x उसे मनाने स्वामी ने सुथार के पुत्र का दृष्टांत दिया - एक सुथार ने स्वयं की पुत्री भानजे को दी x वह घरजमाई बनकर कोई काम नहीं करता x पत्नी ने बहुत प्रेरणा की x कुठार लेकर वह जंगल गया किंतु इच्छित लकड़ी न मिलने पर खाली हाथ वापस आया x 6 महिने बाद इच्छित लकड़ी लाया x उसमें धान्य मापने का कुलक बनाया x पत्नी को बाजार में बेचने भेजा x लाख रु. सुनकर सब हँसते किंतु एक बुद्धिमान् वणिक् ने उसकी अक्षयता को जानकर खरीदा x ऐसे सलक्षण जमाई से कुटुंब में समृद्धि बढ़ी x दृष्टांत सुनकर स्वामी की पत्नी मान गई x उसे घरजमाई बनाया x – टीप्पणक

9. ग्रंथि - पाटलीपुत्र x मुरुंड राजा x पादलिप्त आ. x कोई बुद्धिमान् पुरुषों ने 'मोहित करने वाला धागा, लकड़ी (मूल रहित), दाबड़ा (खोलने का स्थान गुप्त)' भेजा x राजा ने घोषणा कराई x कोई नहीं जान सका x राजा ने आ. को बुलाया x उन्होंने धागे को गर्म पानी डाला x मोम पिघल गया, छेड़े खुल गए x दंड पानी में डाला, मूल भाग भारी होने से नीचे डूबा x दाबड़ा गर्म पानी में डाला, लाख पिघल गया x फिर आ. ने ऊँट की चमड़ी से बने थैले में रत्न भरकर चोरसीलाई कर उन पुरुषों को भेजा और कहा - थैली फाड़े बिना रत्न निकालो x कोई नहीं निकाल सका।

10. औषध - शत्रुसैन्य को आता जान राजा ने सभी जलाशय विषमिश्रित करने विष बेचनेवाले को बुलाया x एक वैद्य चपटी विष लेकर आया x राजा गुस्से हुआ x वैद्य - यह लाख जन को मार सकता है x राजा - कैसे? x एक बूढ़े हाथी को मँगाकर उसकी पूँछ का एक बाल ~~कर~~ खींचकर वहाँ से विष शरीर में डाला x धीरे-धीरे हाथी का पूरा शरीर जहरी बनता दिखा x वैद्य - इसका मांस जो खाएगा वह मरेगा x राजा - इसका कोई उपाय है x वैद्य - हाँ x हाथी को औषध दिया x धीरे-धीरे शरीर स्वस्थ होता हुआ दिखा।

11. रथिक-गणिका - पाटलीपुत्र में दो गणिका - कोशा, उपकोशा x कोशा को स्थूलिभद्र ने श्राविका बनाया x उसने ~~सजा सिवाय~~ राजनियोग (आज्ञा) सिवाय सभी अब्रह्म का नियम लिया x एक रथिक ने राजा को खुश किया x राजा ने कोशा उसे दी x वह स्थूलिभद्र के गुण गाती है, रथिक की भक्ति नहीं करती x रथिक स्वयं की कला दिखाने अशोकवाटिका ले गया x बाणों की एक पीछे एक कतार से आम को दूर से ही तोड़कर हाथ में लाया x कोशा - शिक्षित को कुछ दुष्कर नहीं है x ऐसा कहकर सरसव का ढेर किया, ऊपर सुई रखी, सुई पर कर्णिकार पुष्प पिरोए, उस पर नाची x वह आवर्जित हुआ x कोशा - आम तोड़ना या नृत्य दुष्कर नहीं है, दुष्कर तो वह है जो स्थूलिभद्र ने किया x स्थूलिभद्र का वृत्तांत कहा x

Date :

रथिक शांत हुआ।

12. गीली साड़ी, दीर्घ तृण, क्रौंच पक्षी की अपदक्षिणा — एक राजा x राजकुमारों को आचार्य ने सिखाया x राजा द्रव्यलोभी x आचार्य को मारने का सोचा x राजकुमारों ने सोचा- इन्हें कोई उपाय से बचाना है x जब आचार्य उस दिन जिमने आए तब राजकुमारों ने साड़ी मंगाई x सूखी को भी कहा- अरे! साड़ी गीली है x फिर तृण को दरवाजे के सामने रखकर बोले - तृण बहुत लंबा है x रोज आचार्य स्नान के बाद क्रौंच की प्रदक्षिणा करवाते थे x उस दिन उल्टी कराई x अतः आ. समझे- गीली साड़ी यानि मुझे मारना चाहते हैं, लंबा तृण यानि लंबा मार्ग है, उल्टी प्रदक्षिणा से अमंगल है x आ. भाग गए।

13. नीव्रोदक — एक वणिक् की पत्नी ने पति बहुत दिन तक बाहर गया होने से दासी को कहा- कोई मेहमान ला x वह लाई x नखकर्म वि. कराया x रात को वासघर में ले गई x प्यास लगने पर पत्नी ने नीव्र का पानी पिलाया (छत पर से गिरता बारिश का पानी) x वह मर गया x पत्नी ने नगर बाहर मंदिर में रखवा दिया x दूसरे दिन मंत्री ने ताजे नख काटे हुए देखकर नगर के सभी हजामों को पूछताछ की x एक ने दासी का नाम कहा x दासी को मारने पर उसने सेठानी का नाम कहा x पत्नी ने भी स्वीकारा और सही बात की x छत पर जाकर देखा तो त्वग्विष सर्प वहाँ था।

14. बैल, घोड़ा, वृक्ष से गिरना — एक अकृतपुण्य जो जो धंधा करता है, उसमें नुकसान होता है x मित्र से माँगे हुए बैल से पूरे दिन हल चलाकर रात को उसे देता है x एकदा बैल देने आया तब मित्र को जिमता देख ~~लज्जा~~ लज्जा से पास में न गया, केवल उसके देखते हुए बाड़े में छोड़कर गया x मित्र ने बैलों की रक्षा नहीं की और रात में चोर ले गए x इसने अकृतपुण्य के पास माँगे x वह बोला- मैंने तेरे देखते हुए ही छोड़े थे, मेरा क्या दोष? x विवाद में दोनों राजधानी जाने लगे x रास्ते में घोड़े से गिरे हुए किसीने अकृतपुण्य को कहा- भागते हुए घोड़े को मार x उसने मारा तो मर्म पर लगी, घोड़ा मर गया x उसने भी इसे पकड़ा x तीनों राजधानी के बाहर वटवृक्ष के नीचे रात रुके x अन्य नट भी वहीं सोए थे x इसने सोचा- इन दोनों का मैं यावज्जीव दास बन जाऊँगा अतः वटवृक्ष की शाखा से लटका किंतु टूटने से नीचे गिरा x नीचे नट का सरदार मर गया x नटों ने भी इसे पकड़ा x अकृतपुण्य ने मंत्री को पूरा वृतांत कहा, उसे दया आई x मंत्री बोला- यह बैल देगा किंतु जिन आँखों ने बैल को छोड़ते हुए देखा उन्हें फोड़ दो, यह घोड़ा देगा किंतु बोलने वाली जीभ खींच लो x नटों को कहा- उसी वटवृक्ष के नीचे यह सोएगा,

Date :

तुममें से कोई ऊपर लटकेगा × यह सुनकर सभी भाग गए ×। (गा.९४४-५ पूर्ण)

अव. III कर्मजा बुद्धि— (देखें गा.९३८) —

गा.९४६ उपयोग से देखा है सार जिसने, कार्य के अभ्यास और विचार से विस्तृत, प्रशंसा रूप फल वाली कर्म से उत्पन्न बुद्धि है।

गा.९४७ १. हैरण्यिक २. कर्षक ३. कौलिक ४. डोव ५. मोती ६. घी ७. नट ८. दर्जी ९. वर्द्धकि १०. रसोईया ११. घटकार १२. चित्रकार।
(आधुनिक)

१. हैरण्यिक – अन्धकार में भी हाथ के स्पर्श से सही-नकली सोना पहचानता है।

२. कर्षक – एक चोर ने कमलाकार सेंध लगाई × सुबह जनवार्ता सुनने आया × वहाँ एक किसान आया, बोला - शिक्षित को क्या दुष्कर है? × चोर ने गुस्सा किया × एकदा खेत में अकेला जानकर गया और छुरी निकाली, कहा - मारूँगा × किसान - क्यों? × तूने मेरी निंदा की 'शिक्षित को क्या दुष्कर है?' × किसान - सच ही है, देख × उसने चावल की मुट्ठी भरी × तू जैसा कहेगा वैसे डालूँगा - परांमुख, उन्मुख या तिर्च्छे? × चोर ने जैसे कहे, वैसे डाले × चोर तुष्ट हुआ।

३. कौलिक (बुनाई करने वाला) – वह हाथ में तंतु लेकर कह सकता है कि इतने से इतना वस्त्र बनेगा।

४. डोव (बड़ा चम्मच) – सुतार चम्मच बनाने के पहले ही जानता है कि इसमें इतना माप आएगा।

५. मोती – मोती को सुअर के बाल से बनी वस्तु में पिरोने वाला ऐसे उछालता है कि वह गिरकर सीधे बाल में जाए।

६. घी – घी बेचने वाला बैलगाड़ी पर खड़े हुए ही सीधे नीचे रही कुंडी के नालचे में घी डालता है।

७. नट – हवा में भी अलग-अलग खेल करता है।

Date :

8. दर्जी- अभ्यास के पहले बड़ी सिलाई करता है। अभ्यास के बाद इतना बारीक सीलता है कि 'यह सीला हुआ है' ऐसी खबर भी न पड़े। वर्धमान स्वामी के दूष्य को ब्राह्मण ने सिलाया।

9. वर्द्धकि- मापे बिना ही देवकुल-रथादि का प्रमाण जानता है।

10. आपूपिक – आटे वि. को मापे बिना ही पुडले का माप जानता है।

11. घटकार- कुम्हार पहले से ही उतनी ही मिट्टी लेता है जितनी से घटादि बन जाए।

12. चित्रकार- रेखादि मापे बिना ही प्रमाणयुक्त चित्र बनाता है। अथवा उतना ही रंग लेता है जितने से चित्र पूरा हो। (गा. ९४६-७ पूर्ण)

अव. IV पारिणामिकी बुद्धि –(देखें गा. ९३८)

गा.९४८ अनुमान- हेतु-दृष्टांत से साध्य अर्थ को साधने वाली, उम्र के विपाक से पुष्ट होने वाली, हित या मोक्ष फलवाली पारिणामिकी बुद्धि होती है।

★ अनुमान = लिंग से होने वाला ज्ञान = स्वार्थानुमान = ज्ञापक ।
हेतु = लिंग का प्रतिपादक वचन = परार्थानुमान = कारक हेतु ।
दृष्टं अर्थं अंतं नयन्ति इति दृष्टान्ताः ।

प्र. अनुमान के ग्रहण से ही दृष्टांत का ग्रहण हो गया, अलग क्यों किया?
उ. अनुमान एकलक्षण वाला होने से दृष्टांत का ग्रहण नहीं होता। अन्यथानुपपत्ति ही एक लक्षण रूप हेतु है।

गा.९४९ 1. अभय 2. सेठ 3. कुमार 4. देवी 5. उदितोदय राजा 6. नंदिषेण मुनि 7. धनदत्त 8. श्रावक 9. अमात्य
गा.९५० 10. क्षपक 11. अमात्यपुत्र 12. चाणक्य 13. स्थूलभद्र 14. सुंदरी का पति नंद 15. वज्रस्वामी
गा.९५१ 16. बैल मारना 17. आँवला 18. मणि 19. सर्प 20. पशु विशेष 21. स्तूप तोड़ना 22. इंद्र ।

1. अभय- प्रद्योत ने राजगृह को घेरा x अभय कुमार ने प्रद्योत के आने के पहले ही सैना के निवेश में बहुत धन गढ़ा दिया x उसे आने पर बताया- तेरी सेना पिता ने भेद दी है,

Date :

यदि विश्वास नहीं है तो सेना के निवेश में देख × देखकर भाग गया × अभय ने सब धन लिया ।

अथवा

वेश्या ने कपट से पकड़ा × प्रद्योत को खुश किया, 5 वर प्राप्त किए × वर माँगा - अग्नि में प्रवेश करूँ × घोड़ा × कहा - मैं 'छल से लाया गया, तुझे मैं 'प्रद्योत का हरण हो रहा है' ऐसा चिल्लाते हुए दिन में लाऊँगा × राजगृह गया × वणिक् बना × दास को पागल किया × पत्नी बनाई × उज्जयिनी से रोते प्रद्योत लाया ।

2. सेठ - कष्ट सेठ × वज्रा पत्नी × घर में रोज पूजा करने वाला देवशर्मा ब्राह्मण था × सेठ यात्रा पर गए × पत्नी ब्राह्मण के साथ लगी × घर में 3 पक्षी - तोता, मैना, मुर्गा × ब्राह्मण रात को सेठ के घर आया × मैना - ये कौन है जो सेठ से नहीं डरता × तोता - जो माता का पति होता है, वही अपना पिता × मैना सहन नहीं करती (पिता) × वज्रा ने उसे मार दिया × एक दिन साधु आए × मुर्गे को देखकर बोले - जो इसका मस्तक खाएगा, वह राजा होगा × ब्राह्मण ने पेड़ की पीछे से सुन लिया × वज्रा को मारने को कहा × वज्रा - इसे मत मारो, अन्य मुर्गे ले आओ × उसने इसे ही मारने का आग्रह किया × वज्रा ने मारा, मांस पकाने तक ब्राह्मण नहाने गया × वज्रा का पुत्र स्कूल से आया, भूख से रोने लगा × वज्रा ने मस्तक का भाग उसे दिया × ब्राह्मण को शेष मांस दिया × मस्तक का भाग माँगा × वज्रा - बालक को दिया × वह गुस्सा हुआ × अब इस पुत्र का मस्तक खाऊँ तो राजा बनूँ, ऐसा सोचकर आग्रह से वज्रा को उसे मारने तैयार किया × दासी बालक को लेकर भाग गई × अन्य नगर में गए × राजा पुत्र बिना मरने से अश्व ने इसे राजा बनाया ×

काष्ठ सेठ घर आए × घर को सूना देखकर पूछा × वज्रा झूठ बोली × तोते ने पिंजरे से छोड़ने की शर्त पर सर्व वृत्तांत कहा × तोते को छोड़ा × काष्ठ को वैराग्य हुआ × दीक्षा ली × वज्रा - ब्राह्मण उसी नगर में पहुँचे जहाँ बालक राजा था, मुनि भी × मुनि वज्रा के घर भिक्षा के लिए गए × उसने सोना छुपाकर चोराया फिर चोरी का कलंक दिया × राजा के पास ले गए × धात माता ने पहचाना, राजा को कहा × वज्रा - ब्राह्मण को देश निकाल दिया × पिता को पुनः संसार में आने की विनंती की × पिता मुनि ने उपदेश से श्रावक बनाया × चौमासा पूर्ण हुआ × मुनि विहार करने लगे × वज्रा ने पिता मुनि की निंदा के लिए एक दासी को बोला × वह गर्भवती दासी मुनि के पीछे चलने लगी और बोली - मुझे छोड़कर कहाँ चले ? × मुनि वचन हीलना न हो इसलिए बोले - यदि मुझसे गर्भ हो तो बालक योनि से बाहर आए, यदि मुझसे न हो तो पेट चीरकर बाहर आए × पेट चीरकर गर्भ बाहर आया × दासी मर गई × धर्म का जयकार हुआ × सेठ को दीक्षा

Date :

लेने और प्रवचन निंदा रोकने की पारिणामिकी बुद्धि।

3. कुमार दृष्टांत अगो योग संग्रह में कहेंगे।

4. देवी-पुष्पभद्र x पुष्पसेन-पुष्पवती x दो संतान-पुष्पचूल, पुष्पचूला x दोनों का विवाह किया x भोग भोगते हैं x रानी ने निर्वेद से दीक्षा ली x देवलोक में देव बनी x देव ने सोचा- यदि ये ऐसे ही रहेंगे तो नरक में जाएँगे x अतः नरक स्वप्न में पुष्पचूला को नरक दिखाई x वह डरी x सुव्रत साध्वी को पूछा, वो नहीं जानते x अर्णिकापुत्र आचार्य ने सूत्र कहा x पुष्पचूला ने पूछा-क्या आपने भी स्वप्न देखा x आ.-हमारे आगम में ऐसा बताया है x पुनः स्वप्न में देवलोक देखा x आ. ने कहा देवलोक का स्वरूप x पु. ने पूछा - देवलोक में कैसे जाते हैं? नरक में कैसे नहीं जाते x उसे धर्म कहा x उसने दीक्षा ली।

5. उदितोदय राजा - पुरिमताल x उदितोदय x श्रीकांता देवी x दोनों श्रावक x अंतःपुर में एक पारिव्राजिका आई x देवी ने उसे जीता x दासी ने असभ्य वचनों से अपमानित कर निकाल दिया x वह गुस्सा हुई x वाणारसी में धर्मरुचि राजा x फलक पर श्रीकांता का रूप बनाकर उसे दिखाया x उसने आसक्त होकर दूत भेजा x उदितोदय ने दूत का अपमान कर निकाल दिया x धर्मरुचि ने पुरिमताल को घेरा x उदितोदय ने सोचा- इतने लोगों को मारने से क्या? x उपवास किया x वैश्रमण देव आया x धर्मरुचि को देव वाणारसी में डाल दिया।

6. नंदिषेण मुनि - श्रेणिक का पुत्र नंदिषेण x उनका एक शिष्य दीक्षा छोड़ने की इच्छा वाला था x उन्होंने सोचा- अ पधारे तो यह स्थिर हो x भ. राजगृही पधारे x श्रेणिक और अन्य सभी आए x नंदिषेण का अंतःपुर आभूषण पहने बिना भी अन्य सर्व स्त्रियों में श्रेष्ठ था x शिष्य ने उन्हें देखकर सोचा - यदि मेरे गुरु ने ऐसा अंतःपुर छोड़ा तो मंदपुण्य ऐसे मैंने क्या छोड़ा x सोचकर निर्वेद हुआ और आत्मोचना लेकर स्थिर हुआ।

7. धनदत्त - धनदत्त सुलसा के पिता x यदि मरी हुई सुलसा का मांस नहीं खाएँगे तो मर जाएँगे अतः मांस खाया।

8. श्रावक ** - एक श्रावक पत्नी की सखी पर मूर्च्छित हुआ x पत्नी सखी का वेश पहनकर अंधेरे में आई x दूसरे दिन उसने व्रतभंग का पश्चात्ताप किया तब पत्नी ने बात की।

Date :

9. अमात्य — वाघनु के पिता ने वृहस्पत्त को बचाने के लिए लाख के घर में सुरंग बनवाई और उसे बचाया।

अथवा अन्य मत —

एक राजा x उसकी रानी मर गई x वह पागल हुआ x वियोग के दुःख में शरीर चिंता नहीं करता x मंत्री ने समझाने पर बोला - रानी के शरीर चिंता न करने तक मैं शरीर चिंता नहीं करूँगा x मंत्री - रानी स्वर्ग गई, यहाँ से उसे सब भेजो x माया से एक को भेजा x उसने आकर कहा रानी शरीर चिंता करती है x फिर राजा करता है x ऐसा रोज चला x रानी को भेजने के बहाने कंदोरे वि. मूल्यवान् वस्तु चोराने लगी x एक ने सोचा - मैं भी लूँ x राजा के पास गया x राजा ने पूछा - कहाँ से ? x स्वर्ग से x रानी देखी x उसने ही भेजा है कंदोरा वि. लेने x राजा ने उसे दिलाया किंतु कम था अतः बोला मैं कल जाऊँगा x राजा ने कहा - कल और दिला देंगे x मंत्री को उसे देने का आदेश किया x मंत्रियों ने सोचा - यह तो काम बिगड़ गया x एक मंत्री - मैं ठीक करूँगा x मंत्री सब राजा के पास लाया और कहा - ये कैसे जाएगा x राजा - दूसरे कैसे गए ? x मंत्री - सर्व अग्नि में जलकर गए x राजा - इसे भी ऐसे ही भेजो x मंत्री ने तैयारी की x वह पुरुष खिन्न हुआ x तभी एक धूर्त वहाँ उस पुरुष की हँसी करने बोला - तू रानी को कहना, और कुछ काम हो तो कहे x पुरुष - राजन् ! इतनी बात कहने में मैं समर्थ नहीं हूँ, इसे ही भेजो x राजा ने स्वीकारा x वह पुरुष गया x धूर्त को जलाने की तैयारी हुई x मंत्री ने धूर्त को डाँटकर छोड़ दिया x एक मृतक जला दिया।

10. क्षपक — एक तपस्वी क्षुल्लक के साथ भिक्षा गए x मेंढक मरा x प्रतिक्रमण में क्षुल्लक के याद कराने पर मारने दौड़े x खंभे से टकराकर मरकर दृष्टिविष सर्प बने x जातिस्मरण था x जीव न मरे इसलिए रात्रि में चरकर अचित्त वस्तु खाते हैं x एकदा राजपुत्र सर्पदंश से मर गया x राजा ने घोषणा की कि जो साँप को मारेगा उसे राजा दीनार देगा x एकदा पुरुषों ने यहाँ उनके चलने की रेखाएँ देखकर जाना कि यहाँ सर्प है x बिल के पास धूआँ किया x जो-जो साँप बाहर निकले उनके सिर काट दिए x क्षपक सर्प 'कोई मर न जाए' इसलिए उल्टा निकलता है x जैसे-जैसे निकलता है वैसे-वैसे टुकड़े किए x फिर राजा के पास ले गए x राजा को नागदेवता ने प्रतिबोध दिया और पुत्र का वरदान दिया x वही तपस्वी राजकुमार बने x नागदत्त नाम रखा x सर्प को देखकर जातिस्मरण हुआ x दीक्षा ली x 'गुस्सा नहीं करना' ऐसा अभिग्रह लिया x उनके गच्छ में 4 तपस्वी थे - 1 मास, 2 मास, 3 मास, 4 मास x एक रात को देवी ने आकर इस नए साधु को वंदन किया x वापस जाती देवी का हाथ एक तपस्वी ने पकड़ा — तपस्वी को वंदन नहीं करती, रोज

Date :

खाने वाले को वंदन करती है x देवी- भाव तपवाले को मैं वंदन करती हूँ, द्रव्य वाले को नहीं x दूसरे दिन अंत-प्रांत भिक्षा लेने निकले, आए x एक तपस्वीने कफ पात्र में थूंका x नूतन साधु- मिच्छामि दुक्कडं, मैंने आपको कुंडी नहीं दी x शेष ने भी कफ थूंका x वह वापरने बैठे तब चारों बोलने लगे x मुनि ने सोचा- अहो! मैं 'सुखालु' सोचते हुए केवलज्ञान हुआ x देवों ने महिमा की x चारों को पश्चात्ताप से केवलज्ञान हुआ x 5 सिद्ध हुए।

11. अमात्यपुत्र = वरधनु - ब्रह्मदत्त को छुड़ाया, बचाया, भागे वि. उन-उन प्रयोजनों में परिणामिकी बुद्धि।

अथवा अन्य मत - एक मंत्री पुत्र कार्पटिक वेषधारी राजकुमार के साथ घूमता है x वहाँ नैमित्तिक मिला x तीनों मंदिर में रहे x एक सियालनी रोती है x कुमार ने पूछा क्यों रो रही है? x नै. - नदी के किनारे पुराना कलेवर है, कमर में 100 सिक्के हैं, तू रे सिक्के, मेरा कलेवर क्योंकि बंधे हुए कलेवर को खाने में समर्थ नहीं हूँ x कुमार अकेला गया x वैसा ही हुआ x पुन: रोती है x नै - अब वह वैसे ही रो रही है x मंत्री पुत्र ने सोचा - कुमार ने सिक्के लोभ से लिए हैं या शूरवीरता से? देखूँ x दूसरे दिन मंत्रीपुत्र - तुम जाओ, मुझे पेट में शूल है x कुमार- तुझे छोड़कर जाना उचित नहीं किंतु मुझे कोई पहचाने नहीं इसलिए थोड़ा आगे चले x कुलपुत्र के घर गए, इलाज किया x पूरा खर्च कुमार ने दिया x मंत्रीपुत्र समझ गया कि लोभ नहीं, शूरवीरता से सिक्के लिए थे x दोनों राजा-मंत्री बने।

12. चाणक्य - गोल्ल देश, चणकगाँव x चणक ब्राह्मण श्रावक x उसके घर मुनि रुके x दाढ़ सहित पुत्र जन्म हुआ x मुनि ने कहा - राजा होगा x 'दुर्गति में न जाए' इसलिए दाँत घिस दिए x मुनि- पर्दे के पीछे राजा होगा x 14 विद्या पढ़ी x ब्राह्मणकुल से पत्नी लाए x एकदा पत्नी भाई के घर गई x उसकी अन्य बहनें धनाढ्य कुल में थी x वे सब अलंकृत थी x स्वजन उनके साथ ही बोलते, इसके साथ कोई नहीं x दु:खी होकर घर आई x आग्रह करने पर चाणक्य को कहा x चाणक्य ने सोचा - नंद पाटलीपुत्र में देता है x कार्तिक पूनम के दिन चाणक्य प्रथम आसन पर जाकर बैठा x वह आसन नंद राजा का था x दासी के दूसरे आसन पर बैठने को कहने पर उसने दूसरे आसन पर कमंडल, तीसरे पर दंड, चौथे पर माला, 5वें पर जनोई रखी x धृष्ट कहकर निकाल दिया x नंद को परिवार सहित मारने की प्रतिज्ञा की x योग्य पुरुष ढूँढता है क्योंकि सुना था कि मैं पर्दे पीछे राजा होऊँगा x नंद के मोरों को पालने वाले पुरुषों के गाँव में परिव्राजक बन पहुँचा x उनके मुखिया की पत्नी को चंद्र पीने का दोहद हुआ x उन्होंने उपाय पूछा x 'मुझे पुत्र दोगे' की शर्त पर कपड़े का मंडप बनवाकर पूर्णिमा के दिन दूध की थाली में चंद्र पिलाया, ऊपर से पुरुष पर्दा ढाँकते जाता

Date :

है x पुत्र हुआ, चंद्रगुप्त नाम रखा x चाणक्य सुवर्णरिस ढूँढता है x यह बालक अन्य बालकों के साथ राजनीति खेलता है x चाणक्य देखता है x वह राजा, अन्य मंत्री, जो जिसके योग्य है वह उसे देता है x चाणक्य - मुझे भी कुछ दो x चंद्र. - तुम्हें गाय दी x चा. मुझे कोई मारेगा नहीं ना ? x चंद्र. - पृथ्वी वीरभोग्या है, यहाँ वीरों का ही काम है x चा. - चल मैं तुझे राजा बनाऊँ x दोनों निकले, कुछ लोग झगड़े हुए x पाटलीपुत्र को घेरा x नंद ने हरा दिया x भागे नंद राजा के पुरुष पीछे पड़े x चंद्र. को पद्मसरोवर में छुपाया x स्वयं धोबी बना x एक वल्लीक किशोर घोड़े पर सैनिक ने पूछा - चंद्र. कहाँ है ? x चा. - पद्मसरोवर में x उसने घोड़ा चाणक्य को सौंपा, तलवार छोड़ी, अंदर उतरने गया तभी चा. ने तलवार से टुकड़े कर दिए x फिर भागे x चंद्र. को पूछा - जब मैंने कहा सरोवर में तब तूने क्या सोचा ? x चंद्र. - रहस्य तो पूज्य जाने, कुछ लाभ ही होगा x चा. ने सोचा - यह कभी मेरे विरुद्ध नहीं सोचेगा x चंद्र. को भूख लगी x चा. उसे छोड़कर भक्त लेने गया x गाँव में जाने से डरा - कोई पहचाने नहीं x एक ब्राह्मण बाहर आ रहा था x पूछा - भोजन कहाँ मिलेगा ? x उसने कहा - वहाँ पर, अभी ही मैं दही-चावल खाकर आया x चा. ने पेड़ फाड़कर दही-चावल निकालकर उसे दिए x

एकदा एक गाँव में रात को भिक्षा के लिए चा. घूमता है x एक घर में वृद्धा ने बालक को गर्म खीर दी x बीच में हाथ डालने से हाथ जलने से रोने लगा x वृद्धा - तू भी चाणक्य जैसा मूर्ख है, पहले आस-पास लेना चाहिए फिर बीच में हाथ डालना चाहिए x चा. समझा x हिमवंत पर्वत पर गए x पर्वत राजा के साथ मित्रता की x 'राज्य को आधा-आधा बाँट लेंगे' नक्की कर आस-पास के देश जीतते-जीतते पाटलीपुत्र के पास आने लगे x बीच में एक नगर जीतता नहीं है x चा. त्रिदंडी वेष बनाकर गया x वहाँ इंद्रपादुका दिखी x कपट से निकलवाकर नगर जीता x पाटलीपुत्र को घेरा x नंद धर्मद्वार मांगता है (अर्थात् हार कबूलता है) x चा. - एक रथ में जितना आए, उतना ले जा x नंद 2 पत्नी और। कन्या लेकर निकला x कन्या की नजर चंद्र. पर पड़ी x नंद ने उसे चंद्र. के पास भेजा x चंद्र. के रथ पर चढ़ती हुई उसके रथ के चक्र के 9 आरे टूट गए x चंद्र. उसे रोकता है x चा. - चंद्र. ! उसे रोक मत, तेरा वंश 9 पीढ़ी तक चलेगा x

राजमहल में गए x वहाँ एक विषकन्या थी x पर्वत राजा ने उसे ली x विवाह के फेरे में ही जहर चढ़ने लगा x पर्वत राजा ने बचाने को कहा x चंद्र. बचाने के उपाय करने गया किंतु चा. ने रोका x पर्वत मरा x दोनों राज्य चंद्रगुप्त के हुए x

नंदराजा के आदमी चोरी करते हैं x चा. चोर पकड़ने वाले को ढूँढता है x एकदा बाहर निकला x नलदाम नामक व्यक्ति के पुत्र को मकोड़ा काटा x नलदाम ने मकोड़ों का दर ही साफ कर दिया x चा. ने उसे बुलाकर आरक्षक बनाया x उसने सभी चोरों

Date :

को विश्वास में लिया x एक बार भोजन देकर कुटुंब सहित मार डाला x जब चा. त्रिदंडी था तब एक गाँव में किसी ने भिक्षा नहीं दीथी x उस गाँव वालों को कहा-बांस के झाड़ के आसपास आम्रवृक्ष की बाड़ बनाओ x गाँववालों ने सोचा- इसमें कुछ भूत हुई है अतः ना उत्तरा किया x चा. ने गुस्से होकर गाँव जला दिया x कोश भरने के लिए पारिणामिकी बुद्धि लगाई -

सोने की थाली भरी x जूआ खेला, जो जिते उसकी यह, मैं जीतूं तो मुझे एक दीनार देना x बहुत दिन चला फिर अन्य उपाय किया x नगर प्रधानों को भोजन दिया x मद्यपान कराया x फिर चाणक्य नाचा और बोला - मेरे पास दो भगवा वस्त्र, सुवर्ण कमंडल, त्रिदंड और आधीन राजा है x, इसलिए मेरे लिए होलक बजाओ x अन्य वणिक् - मत्त हाथी का तुरंत जन्मा बच्चा 1000 यो. चले तब हर कदम पर लाख सोनामुहर रखूँ इसलिए होलक बजाओ x अन्य - एक आढक तिल से उत्पन्न तिल के हर दाने पर लाख सोनामुहर रखूँ... x अन्य - वर्षाकाल में पानी से भरपूर शीघ्रवेगवाली, पर्वत से बहती नदी के पानी को रोकने के लिए एक दिन में बने मक्खन से मैं पाल बांधूँ इतना गोकुल मेरे पास है x अन्य - मेरे पास दो रत्न है शालिप्रसूति - अलग अलग धान्य के बीज को उत्पन्न करने वाला, गर्दभिका शालिरत्न - करे हुए धान्य भी उगते हैं x अन्य - एक ही दिन में उत्पन्न घोड़े के बाल से मैं पूरा आकाश ढाँक दूं... x अन्य - मेरी वैराग्य वाली बुद्धि है, पत्नी अनुकूल है, ऋण नहीं है, 1000 रु. है... x

ऐसे जानकर चाणक्य ने दो रत्न मँगाए, एक-एक दिन के गाएँ-घोड़े-मक्खन मँगाए, धन मँगाया।

13. स्थूलिभद्र - पिता मरने पर राजा ने कहा - मंत्री बन x स्थू. - सोचूँगा x अशोकवन गया x भोग की व्याकुलता सोचकर दीक्षित हुआ x राजा ने पुरुष भेजे कि कपड़े से गणिका घर न जाए x मरे हुए कुत्ते की गंध ग्रहण न की तो जाना विरक्त है।

14. सुंदरीनंद - आसिक x नंद वणिक्, सुंदरी पत्नी x क्षण भी पत्नी को न छोड़ने से लोक में 'सुंदरीनंद' नाम पड़ा x उसके भाई ने दीक्षा ली थी x 'अत्यंत आसक्ति से नरक न जाए' अतः भाई मुनि प्रतिबोध करने आए x गोचरी कोरी x पात्रा देकर साथ में उद्यान ले गए x लोग हँसते हैं - सुंदरीनंद प्रव्रजित हुआ x उद्यान में देशना किंतु नहीं भाना x मुनि वैक्रिय लब्धि वाले थे x मुनि ने मेरु पर्वत विकुर्वा किंतु पत्नी के वियोग से नंद ने मना किया x मुनि सुंदरी को वहाँ लाए x फिर एक वानर युगल दिखाकर पूछा - कौन सुंदर है? x नंद - मेरु और सरसू की उपमा है x फिर बिघाथर युगल दिखाकर पूछा - कौन सुंदर है? x नंद - तुल्य है x फिर एक

देवयुगल दिखाकर पूछा x नंद-इसके सामने तो सुंदरी बंदर लगती है x मुनि-धर्म करने से ऐसी मिलेगी x वह बाद में प्रव्रजित हुआ x। मुनि की पारिणामिकी बुद्धि।

15. वज्रस्वामी- माता को न मानना, पाटलिपुत्र में वैक्रिय रूप विकुर्वना, पुरी में प्रवचन निंदा न हो ये सब पारिणामिकी बुद्धि।

16. लात मारना- राजा को तरुण मंत्री वृद्धों के लिए भड़काते हैं x परीक्षा के लिए राजा ने पूछा- जो राजा के सिर पर मारे, उसे क्या सजा करना? x तरुण- तिल जितने टुकड़े करना x वृद्ध- रानी सिवाय कोई नहीं मार सकता अतः उसका सत्कार करना चाहिए।

17. आँवला- एक व्यक्ति ने राजसभा में आँवला रखा x सभी सोचने लगे- अकाल में कहाँ से लाया x एक व्यक्ति ने जाना कि अकाल होने से और बहुत खट्टा होने से

18. मणि- एक सर्प वृक्ष पर पक्षियों के अंडे खाता था x एक दिन वृक्ष पर सर्प को गृद्ध ने मारा x मणि वृक्ष पर गिर गया जिससे नीचे रहे कुएँ का पानी लाल दिखता था x बाहर निकालने पर पुनः स्वाभाविक हो जाता था x एक पुत्र ने वृद्ध को कहा x उसने विचारकर वृक्ष पर से मणि लिया।

19. सर्प- चंडकौशिक ने प्रभु को देखकर जो सोचा, वह पारिणामिकी बुद्धि।

20. गेंडा- एक श्रावक पुत्र यौवन से उन्मत्त धर्म नहीं करता x मरकर गेंडा बना x पीठ के दोनों ओर पंख की जगह चमड़ी लटकती है x जंगल में लोगों को मार डालता है x एक दिन साधु उस पथ से निकले x तेज से मारने में समर्थ न हुआ x सोचा- इन्हें कहीं देखा है x जाति स्मरण हुआ, अनशन किया, देवलोक गए x।

21. स्तूप- वैशाली में मुनिसुव्रत स्वामी का स्तूप x कूलवालक मुनि ने तोड़ा x गणिका-मुनि दोनों की पारिणामिकी बुद्धि।

अब. ५१. की बुद्धि पूर्ण, प्रति द्वारगा. ९३८ पूर्ण। 12. अभिप्राय सिद्ध कहे गए। (देखें प्रतिद्वार गा. ९२७ pg. 73)। 13. तप सिद्ध-
गा.९५२ * जो बाह्य-अभ्यंतर तप से थके नहीं।
* दृढ़प्रहारी- एक ब्राह्मण ने अकार्य किया x उसे वहाँ से निकाल दिया x चोरपल्ली पहुँचा x

Date :

सेनापति ने पुत्र रूप में रखा x दयारहित होने से दृढ़प्रहारी नाम रखा x एकदा सेना के साथ एक गाँव गया x वहाँ एक गरीब ने पुत्र के लिए वस्तुएँ माँगकर खीर बनाई x खीर उसे देकर नहाने गया तभी चोर आए x एक चोर खीर लेकर दौड़ने लगा x बच्चे रोते हुए पिता के पास गए x पिता गुस्से से चोर के पीछे गए x पत्नी के रोकने पर भी वह गाँव के मध्य में गया जहाँ चोर का सेनापति था x घोर युद्ध हुआ x 'मेरे सैनिक को मार रहा है' ऐसा सोचकर सेनापति ने तलवार से मार डाला x पत्नी – हे निर्दय! ये क्या किया? x उसे भी काट दिया x उसका गर्भ भी 2 टुकड़े होकर तड़पने लगा x यह देख उसे दया आई x गरीब जानकर और ज्यादा निर्वेद हुआ x साधु को देखकर उपाय पूछा x धर्म कहा x दीक्षा ली x घोर तप किया x लोगों ने हीलना की तो भी सहन किया x केवलज्ञान पाकर सिद्ध हुए x।

अव. 14. कर्मक्षय सिद्ध –

गा 953 ★ दीर्घ स्थिति वाले कर्म को अल्पस्थिति वाला कर, अल्पस्थिति वाले को खपाकर सिद्धत्व उत्पन्न होता है।

→ निश्चय नय से सिद्ध को ही सिद्धत्व उत्पन्न होता है।

→ व्यवहार से असिद्ध को सिद्धत्व उत्पन्न होता है।

★ तात्त्विक रूप से तो सिद्धत्व उत्पन्न नहीं होता किंतु आवरण दूर होने पर प्रगट होता है।

अथवा सिद्धत्व भाव रूप होता है। इससे जो सिद्ध को दीपक की लौ की तरह अभाव रूप मानते हैं उनका खंडन किया।

अभाव रूप सिद्धत्व होने पर तो मोक्ष की प्राप्ति का प्रयास व्यर्थ होगा क्योंकि कोई भी सचेतन स्वयं के ~~वधच्छ~~ के लिए कंठ पर कुठार नहीं मारता।

निरन्वय विनाश भी युक्ति युक्त नहीं है क्योंकि सत् का सर्वथा विनाश नहीं होता। यहाँ दीपक की लौ का दृष्टांत असिद्ध है क्योंकि दीपक के पुद्गल भास्वर रूप छोड़कर तामस रूप कर लेते हैं।

गा. 954 वेदनीय को बहुत और आयुष्य को थोड़ा जानकर समुद्घात कर संपूर्ण कर्मक्षय करते हैं।

★ प्र. कभी आयुष्य ज्यादा और वेदनीय कम ऐसा क्यों नहीं होता?

उ. जैसे आयुष्य कर्म एक ही बार बँधता है, उसमें मात्र जीवपरिणाम का स्वभाव ही कारण है, वैसे आयुष्य कर्म अधिक नहीं होता, इसमें भी स्वभाव ही कारण है।

Date :

★ ४. बहुत स्थिति वाले वेदनीयादि का आयुष्य कर्म के साथ समीकरण के लिए समुद्घात होता है, यह अयुक्त है कृतनाशादि दोष की आपत्ति होने से।

५. कर्म का अनुभव २४. – प्रदेश से, रस से। प्रदेश से ~~सभी~~ पूरा कर्म भोगा जाता है अतः कृत-नाश नहीं होता। भस्मकव्याधि का दृष्टांत जानना।
विपाक से कुछ कर्म नहीं भोगा जाता। यदि विपाक से सभी कर्म अवश्य भोगना पड़े तो मोक्ष का अभाव होगा क्योंकि असंख्य भव के बांधे कर्म एक भव में नहीं भोगे जाते, विपाक का अनुभव भी स्व-स्वभव में होने वाला है।

★ सभी सयोगी केवली समुद्घात से पहले अंतर्मुहूर्त आयोजिकाकरण ~~रूप~~ नामक उदीरणाविशेष करते हैं।
आयोजिकाकरण की व्युत्पत्ति –
① आ-मर्यादया केवलिदृष्ट्या योजनं-व्यापारणं शुभयोगानां, तस्याः करणं।
② तथाभव्यत्वेन आवर्जितस्य-मोक्षाभिमुखीकृतस्य करणं-शुभयोगव्यापारणं आवर्जित-करणम्।
③ आवश्यकेन- अवश्यंभावेन करणं आवश्यककरणं। समुद्घात कुछ ही करते हैं, आवश्यककरण तो सभी केवली करते हैं।
④ आवर्जः- मोक्षं प्रति अभिमुखीकर्तव्यः, अतत्तद्भावविवक्षायां च्विप्रत्यये तस्य करणं आवर्जीकरणम्।

अब. समुद्घात का स्वरूप –
गा.९५५ दंड, कपाट, मंथान, अंतर, संहरण, शरीरस्थ, भाषायोग निरोध, शैलेशी, सिद्धि।
★ समुद्घात में पहले समय दंड, द्वितीय कपाट, तृतीय मंथान, चतुर्थ निष्कुट पूरते हैं। ५ समय में इसी क्रम को विपरीत रीति से संकोचते हैं।
★ ~~दंड समय से पहले~~ १. असाता वेदनीय २-६. पहले सिवाय ५ संस्थान ७-११. पहले सिवाय ५ संहनन १२-१५. अप्रशस्त वर्णादि चतुष्क १६. उपघात १७. अप्रशस्त विहायोगति १८. अपर्याप्त १९. अस्थिर २०. अशुभ २१. दुर्भग २२. दुःस्वर २३. अनादेय २४. अयश २५. नीचगोत्र।
१. सातावेदनीय २-३. देव-मनुष्य गति ४-५. देव-मनुष्यानुपूर्वी ६. पंचेंद्रियजाति ७-११. ५ शरीर १२-१४. ३ अंगोपांग १५-१६. पहला संस्थान-संघयण १७-२०. प्रशस्तवर्णादि चतुष्क २१. अगुरुलघु २२. पराघात २३. उच्छ्वास २४. प्रशस्त विहायोगति २५. त्रस २६. बादर २७. पर्याप्त २८. प्रत्येक २९. आतप ३०. उद्योत ३१. स्थिर ३२. शुभ ३३. सुभग ३४. सुस्वर ३५. आदेय ३६. यश ३७. निर्माण ३८. तीर्थंकर ३९. उच्चगोत्र।

Date :

दंड समय के पूर्व वेदनीय-नाम-गोत्र की पल्योपम के असंख्य वें भाग जितनी स्थिति रहती है। उसके असंख्य भाग कर दंड समय में एक भाग सिवाय सभी भागों का घात करते हैं। रस के अनंत भाग करते हैं। 25 अशुभ प्रकृतियों के एक भाग सिवाय सभी भागों का घात करते हैं। 99 शुभ प्रकृतियों के एक भाग सिवाय सभी भागों को अशुभ प्रकृति में डालकर उनका घात करते हैं।

द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ में पुनः यही Process करते हैं।

चौथे समय के बाद वेदनीयादि 3 कर्म की स्थिति आयुष्य के संख्यात गुण हो जाती है। 5वें समय में भी यही Process। इस प्रकार 5 समय में 1 समय के कंडक की उदीरणा करते हैं।

6ठें समय से अंतर्मुहूर्त के कंडक की उदीरणा करते हैं। इस प्रकार सयोगी अवस्था के चरम समय तक जानना।

★ योग व्यापार - मात्र काय योग ही व्यापृत करते हैं, मन-वचन नहीं।
1-8 समय - काय योग। 2-6-7 - औ. कार्मण मिश्र। 3-4-5 - कार्मणकाय योग।

★ समुद्घात के बाद कारण होने से तीनों योग का व्यापार करते हैं - अनुत्तर देव के प्रश्न पर मनोयोग, आमंत्रणादि में सत्य-असत्यामृषा वाग्योग, फलक देने वि. में औ. काय योग।

★ समुद्घात अंतर्मुहूर्त आयु शेष होने पर करते हैं। अन्य मत - जघन्य से अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट से 6 मास शेष होने पर करते हैं। यह मत बराबर नहीं क्योंकि श्यामाचार्य ने प्रज्ञापना में पीठ-फलकादि का प्रत्यर्पण ही बताया है। यदि समुद्घात के बाद 6 मास आयु शेष हो तो केवली को चौमासे में पीठ-फलक ग्रहण का अवसर भी आता, किंतु वह कहा नहीं।

★ योग निरोध - जघन्य मनोयोग वाले पर्याप्त मात्र संज्ञी पंचेंद्रिय जीव के प्रथम समय के मनोद्रव्य के व्यापार से असंख्यगुण हीन मनोव्यापार को हर समय निरोध करते हुए केवली अंतर्मुहूर्त में संपूर्ण मनोयोग का निरोध करते हैं।
जघन्य वचनयोग वाले बेइंद्रिय पर्याप्त मात्र जीव के प्रथम समय के वचनव्यापार से असंख्यगुण हीन वचनव्यापार का हर समय निरोध करते हुए केवली अंतर्मुहूर्त में संपूर्ण वचनयोग का निरोध करते हैं।

Date :

प्रथम समय के उत्पन्न अपर्याप्त सूक्ष्म निगोद के जीव के जघन्य काययोग के से असंख्यगुण हीन काययोग को हर समय निरोध करते और देह के तीसरे भाग को छोड़ते केवली असंख्य समय में काययोग का निरोध करते हैं। (यह संक्षेप से हुआ।)

★ विस्तार से योगनिरोध → बादर काय योग से बादर ~~वचन~~ मन योग का अंतर्मुहूर्त में निरोध। बादर काय योग से बादर वचन योग का अंतर्मुहूर्त में निरोध।
अंतर्मुहूर्त रुककर, अंतर्मुहूर्त में श्वास का निरोध।
अंतर्मुहूर्त रहकर, सूक्ष्म काय योग से बादर काय योग का निरोध (अन्य मत - बादर काय योग से ही बादर काय योग का निरोध जैसे- Carpenter खंभे पर रहा हुआ उसी खंभे को कारता है)। [तत्त्व अतिशयज्ञानी जाने]
बादर काय योग का निरोध करता जीव पूर्वस्पर्द्धकों के नीचे अपूर्व स्पर्द्धकों की रचना करता है। (योग स्पर्द्धक का स्वरूप कर्मप्रकृति या पंचसंग्रह से जानना)। इसी भव में जीव ने पर्याप्ति पूरी करते हुए काय व्यापार के लिए जो स्पर्द्धक बनाए थे, वे पूर्वस्पर्द्धक। जो यहाँ करते हैं वे सूक्ष्म स्पर्द्धक होते हैं तथा अनादि संसार में कभी किए न होने से अपूर्व कहलाते हैं। पूर्वस्पर्द्धकों के नीचे प्रथम वर्गणा के वीर्य-अविभाग परिच्छेदों के असंख्य भागों को खींचते हैं, एक असंख्य भाग को छोड़ते हैं, जीवप्रदेश के भी एक असंख्य भाग को खींचते हैं - यह काययोग निरोध के प्रथम समय का व्यापार है।
दूसरे समय में पहले समय में खींचे हुए जीवप्रदेश से असंख्यगुण हीन जीवप्रदेशों को खींचते हैं, वीर्य अविभागपरिच्छेद को भी असंख्यगुण हीन खींचते हैं - दूसरे समय का व्यापार।
इस प्रकार सपूर्वस्पर्द्धक को अंतर्मुहूर्त के चरम समय तक करते हैं। पूर्वस्पर्द्धकों के असंख्य भाग जितने अपूर्वस्पर्द्धक करते हैं।
तुरंत ही अंतर्मुहूर्त तक कृष्टिकरण करते हैं। कृष्टि यानि एकोत्तर वृद्धि को छोड़कर अनंतगुण हानि से एक-एक वर्गणा की स्थापना द्वारा योग का अल्प अल्पकरना। इसमें पूर्व और अपूर्व स्पर्द्धकों की वर्गणाओं के असंख्य अविभागपरिच्छेदों को और जीवप्रदेश के असंख्यातवें भाग को खींचते हैं, शेष सर्व को स्थापते हैं - प्रथम समय व्यापार।
इस प्रकार अंतर्मुहूर्त तक असंख्यगुण हीन-हीन करते हैं।
कृष्टिकरण के बाद एक समय में पूर्व-अपूर्व सभी स्पर्द्धकों का संपूर्ण नाश करते हैं।
अंतर्मुहूर्त तक कृष्टिगत योग रहते हैं, कुछ करते नहीं।
अंतर्मुहूर्त में सूक्ष्मकाय योग से सूक्ष्म वचन योग, फिर मनोयोग निरोध, फिर अंतर्मुहूर्त आराम। फिर अंतर्मुहूर्त में सूक्ष्म मनोयोग निरोध। अंतर्मुहूर्त आराम। अंतर्मुहूर्त में सूक्ष्मकाय योग निरोध। सूक्ष्म काय योग का निरोध करते हुए सूक्ष्मक्रिय- अप्रतिपाति ध्यान शुरू करते हैं। यहाँ से देह के 1/3 भाग से संकुचित हो जाते हैं।

Date :

सूक्ष्मकाययोग का निरोध करते हुए पहले समय किट्टीयों के असंख्य भागों का नाश करते हैं, एक सिवाय। ऐसे ही हर समय करते हैं, सयोगी अवस्था के चरम समय तक।

इस चरमसमय में सभी कर्मों की स्थिति अयोगी अवस्था के समान स्थिति वाली हो जाती है। जिन कर्मों का उदय अयोगी अवस्था में नहीं होता, उनकी स्थिति समय न्यून रखते हैं।

इस चरम समय में 1. सूक्ष्मक्रिय-अप्रतिपाति ध्यान 2. सभी आकर्ष 3. सातावेदनीय का बंध 4. नामगोत्र की उदीरणा 5. योग 6. शुक्ललेश्या 7. स्थिति और रस घात, ये 7 चीज़ें एक साथ व्यवच्छेद होती हैं।

★ फिर शैलेशी - मेरु जैसी निष्कंप स्थिति को प्राप्त करते हैं। फिर अवोपग्राही कर्म खपाने व्युपरतक्रिय-अप्रतिपाती ध्यान करते हैं।

कर्मों को खपाकर जितने आकाश प्रदेश में यहाँ अवगाढ़ थे, उतने ही प्रदेश में ऊपर एक ही समय में पहुँचते हैं। उस समय में साकारोपयुक्त होते हैं क्योंकि सभी लब्धियाँ साकारोपयोग में ही प्रगट होती हैं।

अव. समुद्घात से विशिष्ट कर्म क्षय का उदाहरण -

गा.958 जैसे गिली साड़ी फैलाने पर जल्दी सूख जाती है, वैसे कर्म की लघुता होने पर जिन समुद्घात करते हैं।

★ कर्म - आयुष्य कर्म।

अव. कर्ममुक्त जीव की गति के कारण -

गा.959 तुंबडा, एरंडफल, अग्नि, धूम, धनुष से छूटा बाण, इनकी गति जैसे होती है वैसे सिद्धों की गति भी पूर्वप्रयोग से होती है।

★ असंगत्व होने से तुंबड़े की तरह गति - मिट्टी से लेपा तुंबडा, लेप उखड़ने पर ऊपर आता है।

★ बंधछेद से एरंडफल की तरह।

★ स्वभाव से अग्नि का धूम की तरह।

★ पूर्वप्रयोग से धनुष से छूटे बाण की तरह।

गा.958 कहाँ सिद्ध अटके हैं? कहाँ प्रतिष्ठित हैं? कहाँ शरीर छोड़कर कहाँ जाकर सिद्ध होते हैं।

Date :

गा. ९५९ अलोक पर सिद्ध ~~रुकते~~। लोकाग्र पर प्रतिष्ठित हैं। यहाँ शरीर छोड़कर वहाँ जाकर सिद्ध हुए।

★ यहाँ स्खलन अलोक में धर्मास्तिकायादि का अभाव होने से आनन्तर्यवृत्ति ही जानना। (स्पष्टता टीप्पणक में) लेष्टु की तरह संबंध होने पर विघात नहीं होता, अमूर्तत्व से।

★ 'यहाँ' - 2½ द्वीप-समुद्र।

टीप्पणक → आनन्तर्यवृत्ति -

लेष्टु का दीवाल से स्खलन संबंध होने पर होता है। किंतु यहाँ सिद्धात्मा और अलोकाकाश में ऐसे संबंध से स्खलना नहीं होती। ~~किंतु~~ यहाँ स्खलना का अर्थ मात्र आनन्तर्यवृत्ति ही लेना।

संबंध से स्खलना न होने का कारण - ऐसा संबंध घटता ही नहीं है। यदि संबंध मानो तो ~~स्व~~ अलोकाकाश प्रदेश के साथ जीवप्रदेश का संबंध सर्वात्मना होता है या देशात्मना? यदि सर्वात्मना मानो तो लोकाकाश और अलोकाकाश प्रदेश एक होने की आपत्ति होगी। यदि देशात्मना मानो तो प्रदेश के भी प्रदेश मानने की आपत्ति। अतः दोनों पक्षों में संबंध न ~~घटने से~~ घटने से 'संबंध होने पर स्खलना होती है' यह बात असिद्ध हुई।

आनन्तर्यवृत्ति- यहाँ सिद्धात्मा ~~और~~ की स्खलना का अर्थ मात्र अलोकाकाश के साथ आनन्तर्यवृत्ति लेना। अन्तररहितं-अनन्तरं, तस्य भावः आनन्तर्यं, तेन वृत्तिः आनन्तर्यवृत्तिः। सिद्धात्मा का अलोकाकाश के साथ अंतररहित रूप से रहना ही स्खलना है।

[मलयगीरि म. ने संबंध न होने का कारण 'अमूर्त' कहा है।]

मलयगीरि टीका

अव. शिष्य पूछता है 'लोकाग्र कहाँ है?' । इसका जवाब -

गा. ९६० ईषत्प्राग्भार, सीता नामक सिद्धि-सिद्धभूमि से १ यो. ऊपर लोकांत है। सर्वार्थसिद्ध विमान से १२ यो. ऊपर सिद्धि शिला है।

★ अन्य मत - सर्वार्थसिद्ध विमान से १२ यो. ऊपर सिद्धि यानि सिद्धों का क्षेत्र अर्थात् लोकांत है। तत्त्वं केवलिगम्यं।

अव. ईषत्प्राग्भार का स्वरूप -

गा. ९६१ निर्मल दकरज के वर्ण वाली, तुषार - गोक्षीर - हार समान वर्ण वाली और उत्तान छत्र के संस्थान वाली वह पृथ्वी जिनवरों द्वारा कही गई।

★ दकरज - पानी की बूँद। गोक्षीर - गाय का दूध। हार - मोती की माला।

Date :

अव. इस पृथ्वी की परिधि –

गा.962 1 करोड़ ~~पं~~. 42 लाख 30 हजार 249 यो. ।

★ यह पृथ्वी लंबाई ~~चौड़ाई~~ से 45 लाख यो. प्रमाण वाली है।

★ परिधि का गणित – 'विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिरयो होई' ।

$$परिधि = \sqrt{विष्कंभ^2 \times 10}$$

गिनने पर 14230249 यो. ।

अव. पृथ्वी की ~~चौड़ाई~~ मोटाई-जाड़ाई –

गा.963 बहुमध्य देशभाग में 8 यो., चरमांत पर अंगुल का असंख्यातवां भाग।

अव. जाड़ाई कम होने का माप –

गा.964 प्रत्येक योजन में अंगुलपृथक्त्व की परिहानि होती है। उसके अंत में मक्खी की पांख से भी पतली पृथ्वी होती है।

★ मध्य के 8 यो. सिवाय यह हानि जानना। मध्य के 8 यो. में हानि नहीं होता।

~~टिप्पणक~~ हरिभद्रीय टीका → हानि प्रथम से ही समान रूप में होती है। 8 यो. में भी हानि होती है।

टिप्पणक → यहाँ अंगुल पृथक्त्व का प्रमाप –

∵ 2250000 यो. में ⟶ 8 यो. कम हुए

∴ 1 यो. में ⟶ $\frac{8}{2250000}$ यो. कम होंगे

⟹ 3 ↓ अंगुल ।

→ प्रज्ञापना के द्वितीय स्थान पद में मध्य के 8 यो. में हानि का निषेध है। ~~अतः इस मत से~~

मलयगिरीय टीका गा.965 ईषत्प्राग्भार पृथ्वी के ऊपर योजन का जो उपरितन कोस है, उस कोस के छट्ठे भाग में सिद्धों की अवगाहना कही है।

गा.966 कोस का 6th भाग $333\frac{1}{3}$ धनुष है। इसी भाग में सिद्धों की अवगाहना है।

गा.967 खड़े हुए, अर्द्धविनतादि अथवा सोए हुए अथवा बैठे हुए, जो जिस स्थिति में काल करते हैं, वे उसी प्रकार वहां सिद्ध रूप में उत्पन्न होते हैं।

Date :

गा 968 जीव भवांतर में इहभव से भिन्नाकार वाला कर्म के वश से होता है। वे कर्म सिद्ध को है नहीं इसलिए मोक्ष में वे तदाकार (पूर्वभव के आकार वाले) ही होते हैं।

गा 969 इह भव को छोड़ते हुए जीव का चरम समय में जो संस्थान होता है, वही प्रदेश से घन संस्थान वहाँ इनका होता है।

गा 970 दीर्घ या ह्रस्व, चरमभव में जो संस्थान होता है, उससे ३ त्रिभाग ही सिद्धों की अवगाहना कही है।

★ प्र. योग निरोध काल में प्रयत्न पूर्वक शुषिर पूरने से त्रिभाग हीन अवगाहना हो जाती है। तो प्रयत्न विशेष से पूरी आत्मा प्रदेश में क्यों नहीं रहती?

उ. ① ~~तथा~~ तथाविध सामर्थ्य का अभाव होने से।
② योगनिरोध काल में भी जीव सकर्मक होने से।
③ जीव स्वभाव से।

प्र. तो सिद्ध कर्म रहित होने से प्रयत्नपूर्वक प्रदेश का संहार क्यों नहीं करते?
उ. सिद्धों का प्रयत्न का अभाव होता है।

प्र. अप्रयत्न वाले की गति कैसे होती है?
उ. गति के कारण 'असंगत्वादि' पहले कह चुके हैं।

भव. सिद्धों की अवगाहना –

गा. 971 $333\frac{1}{3}$ धनुष, यह सिद्धों की उत्कृष्ट अवगाहना कही गई।

★ प्र. मरुदेवी माता की 525 धनुष काया थी तो उत्कृष्ट अवगाहना उपर्युक्त कैसे?

उ. ① उनकी काया नाभि कुलकर से कुछ न्यून थी, ऐसी परंपरा है। अतः वे 500 धनुष प्रमाण ही थी।
② 'कुलगरेहिं समं' ऐसा जो कुलकर और कुलकर पत्नी का अतिदेश है, वह कुछ न्यूनाधिक होने पर भी आगम में ऐसे अतिदेश दिखने से बाधक नहीं है।
② अथवा वे हाथी पर बैठी हुई सिद्ध हुई अतः बैठी होने से संकुचित शरीर वाली थी।

गा. 972 $3\frac{2}{3}$ हाथ सिद्धों की जघन्य अवगाहना कही गई।

Date :

★ यह गाथा जघन्य और अजघन्यत्व का निषेध करने वाली है। मध्यम अवगाहना 2 हाथ से ऊपर और 500 ध. से नीचे सबकी संभव है।

गा. 973 1 हाथ 8 अंगुल, सिद्धों की जघन्य अवगाहना है।

★ प्र. प्रज्ञप्ति में तो 7 हाथ की जघन्य से सिद्धि कही है?

उ. वह तीर्थंकरों में है। सामान्य केवली 2 हाथ के भी हो सकती हैं। कूर्मपुत्रादि 2 हाथ वाले भी सिद्ध ~~हुए~~ हुए हैं।

टीप्पणक → यहाँ अन्य मत - 7 हाथ वाले ही मयूरबंधादि से संवृत्त होकर बैठाए हुए या यंत्र में पीड़ाते हुए संकुचित होकर 2 हाथ प्रमाण हुए ही सिद्ध होते हैं, स्वरूप से ही 2 हाथ वाले सिद्ध नहीं होते।

मलयगिरीय टीका ★ अथवा बहुलता की अपेक्षा से 500 ध. और 7 हाथ कहे। जघन्य अंगुलपृथक्त्वों से न्यून और उत्कृष्ट धनुष पृथक्त्वों से अधिक भी हो सकता है। सूत्र में आश्चर्यादि सभी नहीं कहे हैं, अनिबद्ध भी कुछ हो सकता है।

गा. 974 सिद्ध अंतिम भव से त्रिभाग न्यून अवगाहना वाले ~~और~~ होते हैं। जरा-मरण से मुक्त सिद्धों को अनित्थंत्थ संस्थान होता है।

★ योग निरोध में शुषिर पूरने से संस्थान अनियताकार हो जाता है।

*(देखें टीप्पणक P.T.O.)

अत. ये सिद्ध एक ही देश में रहे हैं या अलग-अलग देश में -

गा. 975 जहाँ एक सिद्ध हैं वहाँ भव के क्षय से मुक्त ऐसे अनंत सिद्ध हैं। सभी एक-दूसरे में अवगाढ और लोकांत को स्पर्शे हुए हैं।

★ भवक्षय से मुक्त - इस विशेषण से भव में अवतरण की शक्ति वाले सिद्धों का व्यवच्छेद किया।

गा. 976 एक सिद्ध ~~के~~ सर्व प्रदेशों से अनंत सिद्धों को स्पर्शते हैं। वे अनंत सिद्ध भी देश-प्रदेशों से असंख्य गुण सिद्धों को स्पृष्ट हैं।

★ देश प्रदेश यानि 1, 2, 3, 4 ... असंख्य प्रदेश की हानि और वृद्धि से प्रत्येक अवगाहना में अनंत-अनंत सिद्ध हैं।

Date :

अव. सिद्धों का लक्षण –

गा.977 शरीर रहित, जीव घन (शुषिर रहित), दर्शन-ज्ञान में उपयुक्त होते हैं तु–यह सिद्धों का सामान्य-विशेष लक्षण है।

* तु शब्द – निरुपम सुख।

टीप्पणक * [अनुसंधान Pg. 109]

प्र. गा.969 में तो कहा था कि सिद्धों का पूर्वभव जैसा ही संस्थान होता है। यहाँ कहा अनियताकार होता है। यह विरोध कैसे नहीं है।

उ. अभिप्राय न जानने से यह विरोध लगता है किंतु विरोध नहीं है। अमूर्त होने से आकाश का स्वतः आकार न होने पर भी चोरसमूहादि से अवच्छिन्न आकाश का परोपाधि से चोरस आकार वि. कहा जाता है। वैसे ही सिद्धों को पूर्व के औदारिक शरीर से अवच्छिन्न जीवप्रदेश की अपेक्षा से परोपाधि से संस्थान कहा जाता है। किंतु अमूर्त होने से और संस्थान मूर्तवस्तु का धर्म होने से सिद्धों का स्वतः कोई संस्थान नहीं होता।

मलयगिरीय टीका अव. केवलज्ञान-दर्शन की संपूर्ण विषयता –

गा.978 केवलज्ञान से उपयुक्त सिद्ध सभी पदार्थों, गुण, पर्याय जानते हैं। अनंत केवलदृष्टियों से सर्वतः देखते हैं।

* केवलज्ञान से उपयुक्त – अंतःकरण (मन) से नहीं जानते क्योंकि मन का अभाव होता है। अतः उसके व्यवच्छेद के लिए ये विशेषण।
* सहवर्ती गुण, क्रमवर्ती पर्याय।
* अनंत – सिद्ध अनंत होने से केवलदर्शन भी अनंत।
* यहाँ पहले ज्ञान का ग्रहण ज्ञानोपयोग में जीव सिद्ध होता है, यह बताने के लिए।

अव. प्र. ये युगपद् जानते और देखते हैं या अयुगपद्? उ.–

गा.979 ज्ञान-दर्शन में से किसी एक में सभी केवली उपयुक्त होते हैं। दो उपयोग युगपद् नहीं होते।

अव. सिद्धों का सुख –

गा.980 मनुष्यों को वह सुख नहीं है, सभी देवों को भी नहीं जो सुख अव्याबाधा को प्राप्त सिद्धों को है।

Date :

~~गा 981~~ ~~तीनों काल में देवों के समूह के सुख का~~

गा 981 सभी काल के समयों से गुणा किया हुआ, अनंतगुण, ~~अनंत वर्ग के भी वर्गों~~ ~~ऐसे~~ और तीनों काल में होने वाला (समस्त) ऐसा देवों के समूह का सुख अनंत वर्ग के भी वर्गों द्वारा मुक्तिसुख को प्राप्त नहीं करता।

★ तीनों काल में सभी देवों को जितना सुख होता है, उस सुख को संपूर्ण काल के अनंत समय से गुणा करें।
इतने सुख को प्रत्येक आकाश प्रदेश में रखते हुए पूरे लोकालोक को पूर दे अर्थात् उस सुख को पूरे लोकालोक के प्रदेशों से गुणा करें।
फिर उसके वर्गों का भी अनंत बार वर्ग करें।...

गा 982 काल के सभी समयों गुणा की हुई सिद्ध के सुख की राशि, यदि हो, तो वह अनंत वर्गमूलों द्वारा भाग करने पर भी सर्वाकाश में नहीं माती है।
(स्पष्टता टीप्पणक और हरिभद्रीय टीका में)

हरिभद्रीय टीका → मूल में 'यदि हो' इस पद से कल्पनामात्र है, ऐसा स्पष्ट कहा है।

→ सभी काल के समयों से गुणा हुआ सुख अनंत वर्ग से Divide करने पर सम ही हो जाता है।
भावार्थ यह है - यहाँ विशिष्ट ~~आल्स~~ आह्लाद रूप सुख लेना। जहाँ से शिष्ट पुरुष सुख साध्य प्रवृत्ति करते हैं, उस आह्लाद को एक-एक गुण वृद्धि से वहाँ तक विशिष्ट करते हैं, जहाँ तक वह निरतिशय बन जाए। यह चरम आह्लाद सिद्धों को होता है। उससे पूर्व और प्रथम आह्लाद के बीच वाले बीच के सभी आह्लाद पूरे आकाशप्रदेशादि से भी अधिक है।

टीप्पणक → ~~यहाँ सर्वकाल के समय से गुणा करने से~~ सिद्ध का सादि-अपर्यवसित काल लेना।
सर्वकाल के समयों से गुणा करने से सिद्ध को, अनंतकाल तक प्रतिसमय होने वाला सुख को एकत्रित करने का तात्पर्य है।

→ 'सम हो जाता है' - यह सुख ~~अनंत वर्गों से Divide करने पर~~ सर्वकाल से गुणाकार करने से जितना अधिक हुआ था, वह पूरा अनंत वर्गों से Divide करने पर समान हो जाता है अर्थात् सिद्धत्व के प्रथम समय मात्र में होने वाला सुख

Date :

जितना होता है। इतना सुख भी पूरे आकाश में माता नहीं है, संपूर्ण सुख की बात तो दूर - यह बताने के लिए सुख को इकट्ठा कर Divide करने की कल्पना की।

→ 'आकाशप्रदेशादि से भी अधिक है' - सिद्ध सुख के केवली की प्रज्ञा से जितने टुकड़े होते हैं, उतने टुकड़े आकाशप्रदेश और उनकी पर्यायों (आदि) से भी अधिक है। इस कल्पना की विवक्षा से ऐसा कहा है।

→ 'अन्यथा नियत देशावस्थिति: तेषां कथमिति सूरयोऽभिदधाति' - अन्यथा यदि ऐसी कल्पना की विवक्षा बिना ही मुख्यवृत्त्या ऐसा कहते तो कोस के 6th भाग रूप नियत देश में उस सुख की अवस्थिति आचार्य कैसे कहते। अर्थात् यदि मुख्यवृत्ति से ही सिद्ध का सुख पूरे आकाश में न माए तो धर्मी बिना धर्म का अभाव होने से सिद्ध भी पूरे आकाश में नहीं माते, ऐसा कहना शक्य था अतः सूरि कोस के 6th भाग में ही सिद्ध की अवस्थिति कैसे कहते। इसलिए यह कल्पना है।

→ 'तथा चैतत्संवाद्यार्षवेदेऽप्युक्तं' - यह मैंने स्वबुद्धि से नहीं कहा। किंतु आर्ष = गौतमादिमहर्षि संबंधी, वेद = विद्यन्ते जीवादय: पदार्था: येन अर्थात् आगम, एतत्संवादि - मेरी व्याख्या के साथ संवादि ऐसे आर्ष वेद में यह कहा गया है।

मलयगिरीय टीका अव. इस सुख की निरूपमता -

गा.983 एक म्लेच्छ जंगल में रहता है x एक राजा अश्व द्वारा अपहृत वहाँ आया x उसने सत्कार किया x राजा ने उसे नगर बुलाया x उपकारी मानकर बहुत संमान दिया x राजा की तरह ही वह रहता है x थोड़े समय बाद पुनः जंगल आया x वहाँ गाँववाले पूछते हैं - नगर कैसा था? x वह जानता हुआ भी उपमा नहीं कर सका।

गा.984 इस प्रकार सिद्धों का सुख अनुपम है क्योंकि उसकी कोई उपमा नहीं है। तो भी कुछ विशेष से उसका यह सादृश्य सुनो -

गा.985 जैसे कोई पुरुष सभी इंद्रियों के विषय से तृप्त, सर्व अबाधा की निवृत्ति से जो सुख अनुभवता है। मुक्तात्मा उससे भी अनंतगुण सुख प्रशांत ऐसे अंतरात्मा से अनुभवता है।

गा.986 इस प्रकार सभी काल से तृप्त, अतुल निर्वाण को प्राप्त ऐसे सिद्ध शाश्वत, अव्याबाध

Date :

सुख को प्राप्त सुखी रहते हैं।

★ सर्वकालतृप्त - स्वभाव से स्थित होने से।

★ 9. 'सुख को प्राप्त' कहने से 'सुखी' अनर्थक है।

उ. इससे दुःखाभाव रूप मुक्ति सुख के निरास पूर्वक वास्तव सुख का प्रतिपादन किया।

अव. सिद्ध के पर्याय वाची -

गा.987 सिद्ध, बुद्ध, पारगत, परंपरागत, कर्म कवच छोड़ने वाले, अजर, अमर, असंग।

★ सिद्ध - कृतकृत्य होने से।
बुद्ध - केवलज्ञान से संपूर्ण विश्व जानने से।
पारगत - संसार समुद्र के पार पहुँचने से।
परंपरागत - सम्यक्त्वज्ञानचारित्र की प्रतिपत्ति, उसके उपाय की परंपरा से मुक्त।
अजर - वय का अभाव होने से।
अमर - आयुष्य का अभाव होने से।
असंग - क्लेश का अभाव होने से।

गा.988 सभी दुःख को लांघने वाले, जन्म-जरा-मरण-बंधन से मुक्त, सिद्ध अव्याबाध सुख को सदा अनुभवते हैं।

★ बंधन - कर्म।

अव. सिद्ध कहे गए। अब उनका नमस्कार -

गा.989-92 गा.923-6 की तरह same। मात्र अरिहंत की जगह सिद्ध जानना और 'पढमं' की जगह 'बीयं' तथा 'मंगलं' जानना।

~~अव.~~ ~~##~~ 'आचार्य'

आचर्यते कार्यार्थिभिः सेव्यते इति आचार्यः (ऋवर्णव्यञ्जनान्तात् ण्यण्)

अव. आचार्य के निक्षेप -

गा.993 नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य में तद्व्यतिरिक्त -
एकभविक - एक भव में होने वाले।
बद्धायु - आचार्य योग्य आयु जिसने बांधा हो।
नामगोत्राभिमुख - जो आचार्य प्रायोग्य नामगोत्रकर्म के उदय के अभिमुख हो।

Date :

अथवा

द्रव्याचार्य - २प्र. - मूलगुणनिर्मित - आचार्य के शरीर के योग्य द्रव्य।

उत्तरगुणनिर्मित - " " रूप परिणत वे ही द्रव्य।

अथवा

द्रव्याचार्य - अप्रधान आचार्य

अथवा

द्रव्य के लिए जो आचार पाले वह द्रव्याचार्य।

भावाचार्य - २प्र. 1.लौकिक - शिल्पशास्त्रादि के आचार्य। अन्य मत - ये भी द्रव्याचार्य हैं।

2.लोकोत्तर

अव. लोकोत्तर आचार्य -

गा.994 ५प्र. के आचार को आचरते तथा ~~प्रकाशित~~ प्रभावित करते और आचार को बताते हुए आचार्य कहे जाते हैं।

★ आचार = आङ् मर्यादा, चरणं चारः। कालनियमादि मर्यादा पूर्वक चरण का पालन करते। 'काले विणए बहुमाणे...' वि. मर्यादा।

★ ~~प्रकाशित~~ प्रभावित करते = अर्थ के व्याख्यान से ५ आचारों को प्रकाशित करते।

★ बताते = पडिलेहन वि. द्वार से आचार को दिखाते।

गा.995 ज्ञानादि आचार को आचरने से अथवा उन्हें कहने से मुमुक्षुओं द्वारा जिनकी सेवा की जाए वे भावाचार्य हैं। वे भावाचार में उपयुक्त होते हैं।

★ आचार पालन अनुपयोग से भी हो सकता है अतः end में भावाचार में उपयोग वाले, ऐसा विशेषण जोड़ा।

गा.996-9 गा.923-6 की तरह।

'उपाध्याय'

उपेत्य-समीपं आगत्य अधीयते साधवः सूत्रं अस्माद् इति उपाध्यायः।

अव. उपाध्याय के निक्षेप -

गा.1000 ४प्र.। नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य - तद्व्यतिरिक्त २प्र.

1. लौकिक - शिल्पादि शास्त्र के अध्यापक। 2.लोकोत्तर - निह्नव, वे अभिनिवेश से एक भी पदार्थ को अन्य प्रकार से प्ररूपते हुए मिथ्यादृष्टि होने से द्रव्योपाध्याय

Date :

अव. भावोपाध्याय -

गा.1001 गणधरादि द्वारा कहा हुआ जिनप्रणीत द्वादशांग रूप स्वाध्याय का उपदेश देने से उपाध्याय कहलाते हैं।

अव. 'उज्झा' शब्द की निरुक्ति -

गा.1002 उ यानि उपयोग, ज्झा से ध्यान का निर्देश। इससे उपयोग पूर्वक ध्यान करने से उज्झा होते हैं। यह भी उपाध्याय का पर्यायवाची है।

गा.1003 (उवज्झाओ-) उ यानि उपयोग, व पाप के परिवर्जन अर्थ में है। झ यानि ध्यान। ओ कर्म के अवष्वष्कण अर्थ में है।

गा.1004-7 गा. 923-6 की तरह।

'साधु'

अभिलषितं अर्थं साधयति इति साधुः।

अव. निक्षेप -

गा.1008-9 नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य- तद्व्यतिरिक्त 3प्र. -

1. लौकिक- शिष्टों के आचार का साधक - घट-पटादि बनाने वाला।
2. लोकोत्तर- निह्नव।
3. कुप्रावचनिक - कुप्रवचन की सामाचारी पालने में रत।

भाव - संयत यानि जिनाज्ञापूर्वक सभी सावद्य व्यापार से निवृत्त।

गा.1010 निर्वाण साधक योगों को साधने वाले और सभी जीवों में सम भावसाधु हैं।

टीप्पणक → प्र. निर्वाणसाधक योग को साधने वाले साधु कहे। उसमें सर्वजीव समता भी आ जाता है तो भी अलग क्यों कहा?

उ. सर्व जीव समता सभी निर्वाण साधक योगों में प्रधान है।

मलयगिरीय टीका अव. शिष्य गुरु को पूछता है -

गा.1011 आप साधु का तप, नियम या संयमगुण, क्या देखकर वंदन करते हो?

★ तप - अनशनादि। नियम- अभिग्रहादि। संयमगुण- आस्रवविरमणादि।

Date :

अव. गुरु का उत्तर -

गा.1012 विषयसुख से निवृत्त, विशुद्ध चारित्र और नियम से युक्त, तथ्य गुण के साधक और सहायकृत्य में उद्यत साधुओं को मैं वंदन करता हूँ।

* विषयसुख से निवृत्त = मनोज्ञ रूप देखने वि. से निवृत्त।

चारित्र = प्राणातिपात विरमणादि परिणाम।

तथ्यगुण = क्षान्त्यादि तात्त्विक गुण।

गा.1013 असहाय ऐसे मुझे संयम में सहाय करने वाले साधुओं को मैं नमस्कार करता हूँ।

गा.1014-7 गा.923-6 की तरह।

गा.1018 एसो पंचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं।

अव. F. वस्तु द्वार पूर्ण (देखें द्वार गा. 887 pg.34 तथा गा.901 pg.45)।

अव. G. आक्षेप द्वार - (पूर्वपक्ष रूप)

गा.1019 सूत्र 2 - संक्षेपवाला और विस्तारवाला। संक्षेप वाला सामायिक सूत्र है, विस्तार वाले 14 पूर्व हैं। नमो अरिहंताणं वि. नमस्कारसूत्र दोनों ही नहीं हैं क्योंकि

यदि संक्षेप हो तो 2 से ही नमस्कार होना चाहिए, निर्वाणप्राप्त सिद्ध को और संसारि जीवों में साधु को। अरिहंतादि का ग्रहण साधु में ही हो जाता। वे भी साधु तो होते ही हैं।

यदि विस्तार हो तो 24 जिन को अरिहंतनमस्कार, सिद्ध में अनंतर सिद्धों को और परंपर सिद्धों को, अनंतर सिद्धों में तीर्थंकर - अतीर्थंकर सिद्ध वि., परंपर सिद्ध में प्रथम - द्वितीय ... अनंत समय में सिद्ध।

अत: 5 नमस्कार दोनों पक्ष में नहीं हैं।

अव. G. आक्षेप द्वार पूर्ण। H. प्रसिद्धि द्वार (देखें द्वार गा. 887 pg.34) - (उत्तर पक्ष)

गा.1020 * अरिहंतादि अवश्य साधु होते हैं। किंतु साधु अवश्य अरिहंतादि नहीं होते। अत: एक पद व्यभिचार होने से उनकी तुल्य अभिधानता नहीं है।

साधु को नमस्कार करने से अरिहंतादि के नमस्कार का फल नहीं मिलता।

यहाँ अनुमान प्रयोग -

साधुमात्रनमस्कार: विशिष्टार्हदादिनमस्कार फलप्रापको न, सामान्येन प्रवृत्ते:, यथा मनुष्यत्वमात्रनमस्कार: जीवमात्रनमस्कारो वा।

Date :

★ तथा व्यक्ति की अपेक्षा विस्तार से नमस्कार करना अशक्य है।

अतः 5 प. का ही नमस्कार है।

★ नमस्कार के 5 हेतु हैं (गा. 903 Pg. 47)। इन हेतुओं के निमित्त से अर्थात् उपाधि के भेद से भी नमस्कार 5 प. का है।

टीप्पणक → गा. 1019 'नवि संखेवो न वित्थारो'। यहाँ मूल 'न संखेवो' पाठ है, इस पर टीप्पणक –
छन्दोविचिति नामक छंदशास्त्र में अंश का क्रम यह है कि प्रथम अंश 4 मात्रा वाला होना चाहिए। किंतु इस ष्लू. नमिऊण जिणवरिंदे वि. में 'नमिऊ'। किंतु यहाँ प्रथम अंश 'न संखे' 5 मात्रा का है। इसलिए यहाँ यह पाठ होना चाहिए 'नवि संखेवो', इससे प्रथम अंश 'नवि सं' 4 मात्रा का होगा।

प्र. यह अपि शब्द पूरणार्थ है?
उ. नहीं, यह अपि शब्द भी सार्थक है। इसकी सार्थकता वृत्तिकार हरिभद्रसूरि म. ही आगे व्यवहित संबंध कर बताएँगे 'न संक्षेपो नापि विस्तरो'।

प्र. यद्यपि आपने अतिविज्ञता से प्रथम अंश का संशोधन किया। परंतु यह गाथा शेष अंशों में भी लक्षण से अतीव संवादिनी नहीं दिखती। इसी प्रकार अन्य आर्षीय गाथाएँ भी लक्षणसंवाद को धारण नहीं करती। तो इस चर्चा से क्या?
उ. कहीं-कहीं आर्ष में जो लक्षणविसंवाद दिखता है, वह वर्तमान लक्षण ग्रंथों की अपेक्षा देखना। चिरंतन लक्षण ग्रंथों से सभी संवादी ही हैं। प्रस्तुत गाथा का प्रथमांश तो चिरंतन ग्रंथों से भी विसंवादी ~~था~~ है, अतः यह चर्चा युक्त है।

मलयगिरीय टीका अव. H. प्रसिद्धि द्वार पूर्ण। I. क्रम द्वार (देखें द्वार गा. 887 Pg. 34) –
गा. 1021 यह क्रम पूर्वानुपूर्वी नहीं है, पश्चानुपूर्वी भी नहीं है। पूर्वानुपूर्वी सिद्ध से शुरु होगी, दूसरी में साधु आदि में रहेंगे। (पूर्वपक्ष)

★ एकांत से कृतकृत्य होने से और अरिहंत के भी नमस्कार्य होने से सिद्ध

Date :

प्रधान है।

~~गा.1022~~ अव. यह क्रम पूर्वानुपूर्वी है। कैसे ? –

गा.1022 सिद्ध अरिहंत के उपदेश से जाने जाते हैं इसलिए क्रम में अरिहंत प्रथम है। कोई भी पहले पर्षदा को प्रणाम कर राजा को प्रणाम नहीं करता।

★ प्रत्यक्षादि प्रमाणों से नहीं जाने जाते सिद्ध मात्र अरिहंत के उपदेश रूप आगम से ही जाने जाते हैं। अतः अरिहंत प्रधान है।

★ [पहले जो कृतकृत्य और अर्हत् के नमस्कार्य होने से सिद्ध को प्रधान कहा, उसका समाधान –]

कृतकृत्यत्व तो दोनों में अल्पकाल का अंतर होने से समान ही है। अरिहंत को नमस्कार करने से ही सिद्धत्व का योग होता है अतः अरिहंत सिद्धों को भी नमस्कार्य है।

★ प्र. यदि ऐसा है तो आचार्य प्रथम होना चाहिए क्योंकि अरिहंत को भी हम तो आचार्य के उपदेश से जानते हैं?

उ. यहाँ तुल्य ~~बाल~~ बल वाले अरिहंत और सिद्ध का विचार ही बराबर है क्योंकि दोनों परमनायक है। आचार्य तो पर्षदा समान है। कोई भी पहले पर्षदा को प्रणाम कर राजा को प्रणाम नहीं करता।

अव. I. क्रम द्वार पूर्ण। J.K. प्रयोजन-फल द्वार (देखें द्वार गा. 887 Pg.34) –

गा.1023 यहाँ कर्मक्षय और ~~प्र~~ मंगल का आगम ही प्रयोजन है। फल 2प्र. इहलौकिक, पारलौकिक। इसमें दृष्टांत –

★ करण काल में होने वाला प्रयोजन। कालांतर में होने वाला फल।

★ नमस्कार करण काल में ही कर्मक्षय होता क्योंकि अनंत कर्म पुद्गल दूर हुए बिना नकार की भी प्राप्ति नहीं होती।

गा.1024 इहलोक में अर्थ-काम, आरोग्य, अभिरति, निष्पत्ति। परलोक में सिद्धि, स्वर्ग-सुकुल प्राप्ति आदि।

★ इहलोक में अभिरति, परलोक में अर्थादि की निष्पत्ति। अथवा

इहलोक में अर्थादि की अभिरति की निष्पत्ति।

Date :

★ यहाँ सिद्धि वि. क्रम प्रधान फल की अपेक्षा से है और उपाय कहने में तत्पर है। विरले ही एक भव में सिद्धि प्राप्त करते हैं तथा एक भव में सिद्ध न होने वाले स्वर्ग-सुकुल बिना अन्य अवस्था प्राप्त नहीं करते।

गा. 1025 इहलोक में 1. त्रिदंडी 2. देव का सांनिध्य 3. बीजोरे का वन, परलोक में 4. चंडपिंगल और 5. हुंडिक यक्ष के दृष्टांत जानना।

1. त्रिदंडी – एक श्रावक का पुत्र धर्म नहीं पामता x वह श्रावक मर गया x पुत्र की परिव्राजक से मित्रता हुई x एकदा परि. – एक अनाथ - अखंड मृतक ला, जिससे मैं तुझे सेठ बनाऊँ x वह लाया x परि. पुत्र और मृतक को श्मशान ले गया x श्रावक ने पुत्र को कहा था कि तुझे डर लगे तब तू नवकार बोलना x परि. ने पुत्र को मृतक के सामने खड़ा रखा और मृतक के हाथ में तलवार दी x परि. ने विद्या बोली x मृतक खड़ा हुआ x पुत्र डरकर नवकार गिनने लगा x भूत नीचे गिरा x परि. पुनः विद्या बोला x पुनः मृतक उठकर नीचे गिरा x त्रिदंडी ने पूछा – तू कोई मंत्र जानता है x पुत्र-नहीं x पुनः ऐसा ही हुआ x व्यंतर ने गुस्सा होकर परि. के 2 टुकड़े कर दिए x उसका शरीर सोने का हो गया x x (अर्थ प्राप्ति)

2. देव का सांनिध्य – एक श्राविका x पति मिथ्यादृष्टि x अन्य पत्नी ढूँढता है किंतु सौतन बनने के डर से कोई नहीं मिलती x वह सोचता है - कैसे मारूँ ? x एकदा काला साँप घड़े में छुपाकर लाया x घर में रखा x जिमने आया x कहा - इस घड़े में से पुष्प ला x वह गई x अंधकार होने से नवकार गिना x देवी ने सर्प की जगह पुष्पमाला की x वह लाकर दी x पति - ये तो अन्य पुष्प हैं x पत्नी - उसी घड़े से लाई हूँ x वह स्वयं जाकर देखता है x वही गंध रहती है, सर्प नहीं x वह पैर में पड़ा, माफी माँगी, वृत्तांत कहा, गृहस्वामिनी बनाया x x (काम प्राप्ति)

3. बीजोरे का वन – नदी के किनारे एक नगर x शरीर चिंता के लिए निकले खरकर्मी ने नदी में बहता बीजोरा देखा x राजा को दिया x राजा ने रसोईए को भेजा x खाया x मनुष्य पर राजा खुश हुआ और भोग दिए x नदी के किनारे-किनारे पुरुष भेजे x वनखंड देखा x 'जो फल लेता है, वह मरता है' राजा को कहा x राजा ने गोलक खींचने के क्रम से बारी बांधी x जिसकी बारी होती, वह वन में जाकर फल तोड़कर बाहर फेंकता और मर जाता x बाहर वाले फल अन्य पुरुष ले जाते है x एक श्रावक की बारी आई x श्रावक ने सोचा - यह कोई साधुता की विराधना करने वाला हो सकता है x निसीहि बोलकर नवकार बोलते हुए वन में गया x वाणव्यंतर ने सोचा - यह कहीं सुना है ! x बोध पामा x

Date :

व्यंतर बोला - मैं रोज फल नगर में ही ला दूँगा x राजा को कहने पर राजा ने श्रावक का सन्मान किया x व्यंतर रोज श्रावक के सिर के पास फल रखता है। इस प्रकार वह मृत्यु से बच गया xx (आरोग्य प्राप्ति - क्योंकि जीवन से ज्यादा कौन सा आरोग्य होता है)

4. चंडपिंगल - वसंतपुर x जितशत्रु x उसकी गणिका श्राविका थी x वह चंडपिंगल के साथ रहती है x एकदा उसने राजा के घर चोरी की x रानी का हार लाया x डरकर छुपा दिया x एकदा गणिकाओं के महोत्सव में सबसे अच्छी दिखने वह रानी का हार पहन कर गई x रानी की दासी ने हार पहचान लिया x राजा को कहा x राजा ने चंडपिंगल को शूली पर चढ़ाया x गणिका ने सोचा - मेरे कारण मरेगा अतः नवकार दिया और कहा तू निदान कर कि इस राजा का पुत्र बनूँ x उसने निदान किया x पटरानी का पुत्र बना x वह गणिका धात्री बनी x

गर्भ और मरण काल एक होने से गणिका एकदा बोली - चंडपिंगल मत रो x उसे जातिस्मरण हुआ x बोध पाया x राजा मरा तब वह राजा बना x बहुत काल बाद दोनों ने दीक्षा ली xx (ऐसे सुकुल प्राप्ति हुई)

5. डुंडिक यक्ष - मथुरा x जिनदत्त श्रावक x डुंडिक चोर, एकबार पकड़ा गया x शूली पर चढ़ाया x राजा ने कहा - मरे नहीं तब तक देखो अन्य कोई उसे सहाय न करे x जिनदत्त श्रावक वहाँ से निकल रहा था x चोर - हे श्रावक! तू अनुकंपा वाला है, पानी ला ना x श्रावक - नवकार गिन तब तक पानी लाऊँ, यदि नहीं बोला तो लाने पर भी पानी नहीं दूँगा x वह पानी के लिए नवकार बोला x जिनदत्त आया तब तक मर गया x यक्ष बना x श्रावक को पुत्रों ने पकड़ा x राजा - इसे भी शूली पर चढ़ा दो x यक्ष प्रतिघ से देखकर आया x पर्वत उठाकर नगर पर रखा और कहा - श्रावक को छोड़ो, नहीं तो सब चूर दूँगा x उसे छोड़ा xx नगर के पूर्व में यक्ष का मंदिर बनाया xx)

अब 'नमस्कार निर्युक्ति' पूर्ण (देखें द्वार गा. 887 Pg. 34) | अब सूत्र स्पर्शक निर्युक्ति कहते हैं (देखें Pg. 33) —

गा. 1026 नंदि, अनुयोगद्वार और विधिवत् उपोद्घात को जानकर तथा पंचमंगल करके सूत्र का आरंभ होता है।

* यहाँ नंदि वि. का उपन्यास विधि नियम बताने के लिए - नंदि वि. जानकर ही सूत्र का आरंभ होता है।

Date :

गा.1027 पंचनमस्कार करके सामायिक करना चाहिए। वह नमस्कार कहा गया। वह सामायिक का अंग है। अब शेष सूत्र मैं कहूँगा।

★ वह नमस्कार सूत्र सामायिक का अंग है इसलिए ही यहाँ कहा गया। नमस्कार की सामायिकांगता पहले कही जा चुकी है (देखें Pg. 33 पर अव.)

टीप्पणक → गा.1026 की अव. में कहा कि 'सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति की गाथा कहते हैं'। किंतु इस गाथा में कोई सूत्रावयव तो स्पर्शता नहीं है?

उ. 'प्रत्यासत्तियोगाद्' (हरिभद्रीय टीका) – इस गाथा से संबंध धराने के तुरंत बाद सूत्र-स्पर्शकनिर्युक्ति कही जाएगी। अतः सूत्र के अत्यंत प्रत्यासन्न होने से इस गाथा को सूत्रस्पर्शक निर्युक्ति कहते हैं।

मलयगिरीय टीका

सूत्र– करेमि भंते! सामाइयं सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि करंतंपि अन्नं न समणुजाणामि, तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि ~~अप्पाणं~~ अप्पाणं वोसिरामि।

(देखें Pg 33 पर अनुयोग द्वार)

★ यह सूत्र सूत्रानुगम में ही अहीनाक्षरादि गुण से युक्त बोलना चाहिए।

★ इस प्रकार सूत्र बोलने पर किसी साधुओं को कुछ अर्थाधिकार ज्ञात हो गए, कुछ नहीं। ज्ञात नहीं हुए अर्थ को ज्ञान के लिए व्याख्या की जाती है। व्याख्या का लक्षण–
संहिता च पदं चैव पदार्थः पदविग्रहः। चालना प्रत्यवस्थानं व्याख्या तन्त्रस्य षड्विधा॥

संहिता = अस्खलित पद का उच्चारण या संधि बिना परोच्चार (पर सन्निकर्ष)
(–टीप्पणक)

पद – 5प्र. नामिक नैपातिक औपसर्गिक आख्यातिक मिश्र अथवा 2प्र. स्याद्यन्त त्याद्यंत
यहाँ सभी प्र. के पद हैं।

करोमि भयान्त! सामायिकं सर्वं सावद्यं योगं प्रत्याख्यामि यावज्जीवया त्रिविधं त्रिविधेन मनसा वाचा कायेन न करोमि न कारयामि कुर्वन्तमपि अन्यं न समनुजाने, तस्य! भयान्त प्रतिक्रमामि निन्दामि गर्हे आत्मानमुत्सृजामि।

पदार्थ– 4प्र. 1. कारकविषयक– द्र. पचति इति पाचकः

Date :

2. समास विषयक - eg. राज्ञः पुरुषः राजपुरुषः।

3. तद्धित विषयक - eg. वसुदेवस्य अपत्यं वासुदेवः।

4. निरुक्ति विषयक - eg. भ्रमति रौति च भ्रमरः।

यहाँ भी 'डुकृञ् करणे' धातु मि प्रत्ययान्त को 'कृञ्तनादेरुः' से उकार और गुण करने पर करोमि पद बनता है। इसका अर्थ स्वीकार है अर्थात् मैं स्वीकार करता हूँ। इस प्रकार प्रकृति-प्रत्यय का विभाग पूरा कहना।

पदविग्रह → भयस्य अन्तः भयान्तः, इसका संबोधन - भयान्त!।

→ सह अवद्येन यस्य येन वा स सावद्यः, योगः तं।

→ प्रत्याख्यामि - प्रति प्रतिषेध अर्थ में, आ - अभिमुख अर्थ में, ख्या - कहने अर्थ में, 'मैं ऐसा नहीं करूँगा' ऐसा सामने जाकर कहना।

अथवा

पच्चक्खामि का 'प्रत्याचक्षे' पर्याय भी होता है = प्रतिषेध का आदर पूर्वक कथन करना।

→ यावज्जीवया = ~~यावत् मम जीवनपरिमाणं तावत्~~। यावत् ~~ab~~ शब्द परिमाण, मर्यादा और अवधारण अर्थ में -

परिमाण अर्थ - यावत् मम जीवनपरिमाणं तावत्।

मर्यादा - मरणं मर्यादीकृत्य आरात्।

अवधारण - यावत् जीवनमेव तावत् प्रत्याख्यामि, तस्मादूत् परतः न।

जीवनं जीवा भाव अर्थ में जानना।

अथवा

प्रत्याख्यान क्रिया में बहुव्रीहि - यावज्जीवो यस्यां सा यावज्जीवा तया।

→ त्रिविधं - 3प्र. हो जिसमें। यह प्रत्याख्येय होने से कर्म है। मन-वचन-काय के व्यापार रूप यहाँ योग लेना। अर्थात् 3प्र. के योग का पच्चक्खाण।

→ त्रिविधेन - करण में तृतीया।

'मन् ~~मनु~~ ज्ञाने' मन्यते अनेन मनः औणादिक अस् प्रत्यय। 4प्र. नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य तद्व्यतिरिक्त तद्योग्यपुद्गलमय, भावमन जीवः मन्ता।

वचनं उच्यते अनेन इति वाक् - 4प्र. नाम स्थापना सुगम। द्रव्य व्यतिरिक्त - शब्द परिणाम योग्य पुद्गल जो जीव द्वारा ग्रहण किए गए। भाव - वे ही पुद्गल शब्द परिणाम को प्राप्त।

चीयते अनेन वा कायः 'चित्युपसमाधानावसथदेहे कश्चादिः' (मलयगिरीयव्याकरण)

'निवासचितिशरीरोपसमाधानेष्वादेश्च कः' (पा. 3-3-41) (हरि. टीका)

Date :

(' चित्तिदेहाऽऽवासोपसमाधाने कश्चाऽऽदेः 5-3-79 सिद्धहेम)

4प्र. - द्रव्य व्यतिरिक्त - नहीं ग्रहण किए हुए शरीर योग्य पुद्गल या छोड़े हुए पुद्गल।

भाव - शरीर रूप परिणत पुद्गल।

इन 3प्र. के करण से 3प्र. के सावद्य योग को मैं करूँगा नहीं, कराऊँगा नहीं और करते हुए अन्य को अनुमति नहीं दूँगा। (ऐसा अर्थ है)

सावद्य योग (तस्य) से मैं पीछे हटता हूँ, उसकी निंदा करता हूँ, गर्हा करता हूँ। अतीत में सावद्य योग करने वाली आत्मा को मैं वोसिराता हूँ।

आत्मसाक्षिकी निंदा, परसाक्षिकी गर्हा।

→ व्युत्सृजामि - वि = विविध या विशेष अर्थ में, उत् = भृशार्थ, सृजामि = त्यजामि। विशेष से भृशं बार-बार छोड़ता हूँ।

अव. ★ ऐसे पदार्थ-पदविग्रह कहे गए। चालना-प्रत्यवस्थान कहना चाहिए। यहाँ पहले सूत्रस्पर्शकनिर्युक्ति कहते हैं क्योंकि उसका यहाँ स्थान है।

गा.1028 अस्खलितादि गुणों से युक्त सूत्र बोलने पर और संहितादि में से 4 व्याख्या ~~करने~~ हो जाने पर सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्ति का विस्तार अर्थ यह होता है। *↑

गा.1029 1.करण 2.भय 3.अंत 4.सामायिक 5.सर्व 6.अवद्य 7.योग 8.प्रत्याख्यान 9.
(द्वारगा.) यावज्जीव 10.त्रिविधेन, इतने शब्दों की सूत्रस्पर्शकनिर्युक्ति होती है।

★ यह सूत्रस्पर्शक निर्युक्ति सूत्रालापक निक्षेप द्वार पूर्वक होती है (देखें Pg. 33)।

अव. अतः 1.करण' शब्द के निक्षेप -

भा.152 नामस्थापना द्रव्य क्षेत्र काल तथा भाव, यह करण का निक्षेप 6प्र. का होता है।
(भूतिद्वारगा.)

अव. नाम-स्थापना प्रसिद्ध हैं। द्रव्य करण -

भा.153 ज्ञ-भव्यशरीर से व्यतिरिक्त द्रव्यकरण 2प्र.- संज्ञा और नोसंज्ञा। संज्ञा - कटकरणादि। नोसंज्ञा - विस्रसा और प्रयोग।

★ द्रव्यकरण - आगम से - ज्ञाता + अनुपयुक्त।
नोआगम से - ज्ञशरीर, भव्य शरीर सुगम।
व्यतिरिक्त 2प्र. - संज्ञा और नोसंज्ञा।

★ संज्ञाकरण - कटकरणादि अर्थात् कट करने की लोह मय पाइल्लकादि Machine

Date :

आदिशब्द से पेलुकरणादि। पेलु यानि रुई की पूणी। रुई की पूणी बनाने वाली शलाका-शल्यक अंगरूआदि Machine भी संज्ञाद्रव्यकरण।
संज्ञा से विशिष्ट द्रव्य का करण = संज्ञाकरण।

प्र. 'संज्ञा' शब्द 'नाम' शब्द का पर्यायवाची है। अतः यह नामकरण ही है, दोनों में कोई अंतर नहीं।

उ. नामकरण यानि उभय स्वरूप 'करण' नाम अथवा करण के व्युत्पत्ति अर्थ से विकल वस्तु का 'करण' नाम रखना।
संज्ञाकरण तो व्युत्पत्ति अर्थ से युक्त है।

प्र. संज्ञाकरण यदि व्युत्पत्ति अर्थ युक्त है तो वह भाव निक्षेप में क्यों नहीं, द्रव्यकरण क्यों है?

उ. इन संज्ञाकरण से कट-पूणी वि. द्रव्य बनते हैं अतः द्रव्यकरण कहा।

(यह पूरी चर्चा टीप्पणक में विस्तार से द्रष्टव्य है)

टीप्पणक गा.१०२४-१ —

प्र. यदि संहितादि ५ व्याख्या दिखाकर सूत्रस्पर्शकनिर्युक्ति का अवसर है तो सूत्रस्पर्शक-निर्युक्ति में चालना और प्रत्यवस्थान ही कहेंगे। अतः 'करणे भये... गा. १०२५' से पद-पदार्थ-पदविग्रह कहना अतिरिक्त होगा।
यदि ऐसा कहो कि पद-पदार्थ-विग्रह वि. सूत्रस्पर्शक निर्युक्ति में कहे जाते हैं तो निर्युक्ति के पहले ही टीकाकार ने उनका स्वरूप कहा वह निष्फल होगा।

उ. यद्यपि इस सूत्रस्पर्शकनिर्युक्ति में सभी व्याख्या के अंग कहेंगे तो भी ऐसा कोई नियम नहीं है। कहीं सूत्रस्पर्शक निर्युक्ति में चालना-प्रत्यवस्थान ही कहेंगे तो कहीं पदार्थादि में से कोई एक ही कहेंगे। अतः यह सैद्धान्तिकी मर्यादा है कि सभी व्याख्याकारों द्वारा ५ व्याख्या करने के बाद ही सूत्र-स्पर्शक निर्युक्ति की व्याख्या करना चाहिए। कहीं पदार्थादि का जो पुनः कथन होगा, उससे टीकाकार का कथन ही स्पष्ट होगा, अतः दोष नहीं है।

मलधारीय टीका अव. भा. १५४ नोसंज्ञा द्रव्यकरण २प्र. प्रयोग, विस्रसा। विस्रसा करण २प्र. - सादि, अनादि — अनादि विस्रसा करण परप्रत्यय के योग से धर्मादि का। सादि चाक्षुष अभ्रादि का, अचाक्षुष अणु वि. का।

★ धर्म-अधर्म-आकाशास्तिकाय का अनादि काल से एक-दूसरे में संयुक्त रहना ही

Date :

अनादि विस्रसा करण है।

प्र. करण शब्द तो अपूर्व वस्तु के प्रादुर्भाव अर्थ में है। अतः अनादि और करण शब्द परस्पर विरुद्ध है।

उ. करण शब्द हमेशा इसी अर्थ में नहीं होता परंतु पूर्वाचार्य के उपदेश से परस्पर में संयुक्त रहने अर्थ में भी है।

अथवा

'परप्रत्ययप्रयोगाद्' – सहकारि पर वस्तु के योग से धर्मादि की विस्रसा से जो योग्यता वही योग्यता करण है।

प्र. इसमें भी अनादित्ता तो विरुद्ध ही है।

उ. वस्तु अनंत शक्ति युक्त और द्रव्य-पर्याय उभय रूप होने से द्रव्यास्तिक नय से अनादि कहने में विरोध नहीं है।

अथवा

धर्मादि का परस्पर संयुक्त रहना अनादि विस्रसा करण और पर प्रत्यय से उस-उस पर्याय में परिणत होने रूप जो विशिष्ट पर्याय, वे सादि करण।

इस प्रकार अरूपी द्रव्य में सादि- अनादि विस्रसा करण कहा।

★ रूपी द्रव्य में सादि करण ही होता है। वह २प्र.– चाक्षुष - बादल, इंद्रधनुष वि.।
अचाक्षुष- अणु द्वयणुकादि।

'कृतिः करणं' उस उस रूप में होना ही करण कहा जाता है। अतः बादल वि. में भी करणता है।

अत. चाक्षुष - अचाक्षुष भेद को ही विशेष से कहते हैं –

भा. 155 चाक्षुष यानि इंद्रधनुषादि रूप संघात-भेद - उभय रूप प्रत्यक्ष करण। द्वयणुकादि का करण छद्मस्थादि को अप्रत्यक्ष अचाक्षुष करण है।

अब. विस्रसा करण कहा गया। प्रयोग करण –

भा. 156 प्रयोग करण २प्र.– जीव प्रायोगिक, अजीव प्रयोगिक। अजीव प्रायोगिक कुसुंभरागादि।
जीव प्रयोग करण २प्र.– मूलगुण और उत्तरगुण करण।

Date :

भा.157 जीवप्रयोग से निर्जीवपदार्थों का रंग वि. या चित्र वि. बनाना, यह सब निर्जीव पदार्थ में से बनने से अजीवकरण।

भा.158 जीवप्रयोगकरण 2प्र. मूलप्रयोगकरण और उत्तरप्रयोगकरण। ~~5 शरीरों~~ औदारिकादि
159 5 शरीरों का सामान्य से संघातकरण मूलप्रयोगकरण। मूलप्रयोग से निष्पन्न शरीर से जो बने वह इतर = उत्तरप्रयोगकरण। यह प्रथम 3 शरीर का ही होता है।

★ भावार्थ - 5 शरीरों का करण मूलप्रयोगकरण। अंगोपांग वि. का करण उत्तरप्रयोगकरण। उत्तरप्रयोगकरण औदारिक-वैक्रिय-आहारक शरीर का ही होता है, तैजस-कार्मण शरीर का नहीं क्योंकि तैजस-कार्मण शरीर के अंगोपांग नहीं होते। 5 शरीर में भी प्रथम समय का संघात ही मूलकरण कहा जाता है।

~~प्र.~~

टीप्पणक → प्र. तैजस-कार्मण में तो प्रथमसमय का संघात नहीं घटता है तो उनका मूलकरण कैसे?

उ. प्रवाह की अपेक्षा दोनों अनादि हैं। किंतु यहाँ व्यक्ति की अपेक्षा से कहा गया है। मनुष्यादिभव में उत्पन्नमात्र जीव तद्योग्यपुद्गलों का जो ग्रहण करता है, वह तद्भव की अपेक्षा तैजस-कार्मण का प्रथम संघातकरण है। पूर्वभव के शरीर को छोड़कर नए भव के शरीर को ग्रहण करते जीव का एक समयवाला पुद्गल ग्रहण रूप संघात यहाँ नहीं लेना।

मलयगिरीय
टीका अव. औदारिकादि के 8 अंग हैं, अंगुली वि. उपांग हैं, शेष अंगोपांग हैं। ये सभी मूलकरण हैं—
भा.160 मस्तक, छाती, पेट, पीठ, दो हाथ और 2 पैर, ये 8 अंग हैं।
भा.161 केशादि का उपरचन औदारिक-वैक्रिय उत्तरकरण है। औदारिक में विशेष नष्टकर्णादि का संस्थापन उत्तरकरण है।

★ केशादि में आदि शब्द से नख-दन्त वि.।
उपरचन यानि रचना करना और संस्कार करना।
यहाँ यथासंभव योजना करना - वैक्रिय शरीर में केशादि की रचना होती है, संस्कार नहीं। (दीपिका)

★ नष्ट कर्णादि का पुनः संस्थापन औदारिक में ही होता है क्योंकि वैक्रियादि में कर्णादि के नाश का संभव ही नहीं है अथवा सर्वथा नाश होने से संस्थापन का अभाव है।

★ केशादि उपरचन रूप उत्तरकरण आहारक में नहीं होता क्योंकि प्रयोजन का अभाव है।

Date :

अथ. अथवा जीवप्रयोगकरण अन्य रीति से उप. का होता है - संघात, परिशाट, उभय। तीनों की 5 शरीर में योजना -

भा. 162 प्रथम 3 शरीरों को संघात, परिशाट, उभय तीनों करण होते हैं। तैजस-कार्मण को परिशाट और उभय होता है, संघात नहीं।

अथ. औदारिक शरीर में संघातादि का कालमान -

भा. 163 औदारिक में संघात 1 समय, परिशाट 1 समय। उभय का जघन्य काल 3 समय न्यून क्षुल्लकभव।

भा. 164 उत्कृष्ट से उभय 1 समय न्यून 3 प. । औदारिक में अंतरकाल - विरह इतना होता है - ।

★ संघात 1 समय का ही होता है। यहाँ अपूप दृष्टांत है - घी से भरी हुई और तपी हुई कड़ेली में पुड़ला डालने पर प्रथम समय में ही वह एकांत से घी के पुद्गलों का ग्रहण ही करता है, छोड़ता नहीं है। द्वितीयादि समयों में ग्रहण-त्याग दोनों होते हैं। ऐसे ही जीव उत्पत्ति के प्रथम समय में औ. शरीर प्रायोग्य पुद्गलों का ग्रहण ही करता है।

★ सर्व परिशाट करण भी 1 समय ही होता है।

★ जघन्य काल उभय का 3 समय न्यून क्षुल्लकभव →

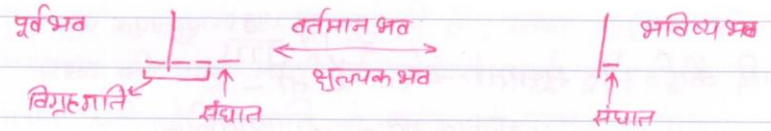

जीव 3 समय की विग्रह गति से उत्पन्न हो तो 2 समय क्षुल्लक भव के खाली जाएँगे। ये 2 समय + 1 समय संघात का, 3 समय न्यून क्षुल्लक भव तक उभय करण चलेगा।

★ यह क्षुल्लक भव 1 श्वासोच्छ्वास का 17 वां भाग होता है। (स्पष्टता टिप्पणक में)

★ संघात-परिशाट उभय का उत्कृष्टकाल 1 समय न्यून 3 प. → जीव इस भव से परभव में विग्रह बिना उत्पन्न होकर प्रथम समय सर्वसंघात करता है, फिर उप. आयु

भोगता है। अतः सर्वसंघात के 1 समय को छोड़कर शेषकाल उपकरण ?

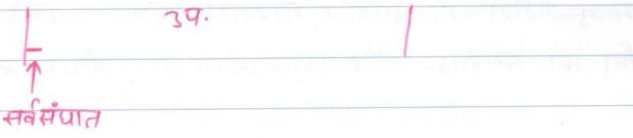

५. जैसे संघात के समय से न्यून 3प. माना वैसे परिशाट का ~~last~~ समय भी न्यून करना चाहिए - ~~अर्था~~

अर्थात् 2 समय न्यून 3प. होना चाहिए ?

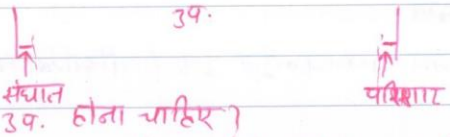

६. निश्चय नय से परिशाट परभव के प्रथम समय होता है, इहभव के ~~last~~ समय नहीं अतः 1 समय न्यून ही माना। (स्पष्टता टीप्पणक में)

टीप्पणक → क्षुल्लक भव 1 श्वास का 17वां भाग होता है →

यहाँ क्षुल्लकभव श्वास का जो 17वां भाग कहा गया, वह स्थूल से कहा है। सूक्ष्म दृष्टि से तो यह क्षुल्लकभव 17वें भाग से कुछ न्यून होता है।

1 मुहूर्त = 65536 क्षुल्लक भव

1 " = 3773 श्वासोच्छ्वास

$\therefore$ 1 श्वासोच्छ्वास = $\frac{65536}{3773}$ क्षुल्लक भव

= $17\frac{1395}{3773}$ क्षुल्लक भव।

यदि कोई और सूक्ष्मता चाहता है तो -

1 क्षुल्लक भव = 256 आवलिका

अतः $\frac{1395}{3773} \times 256 = 94\uparrow$ आवलिका

1 श्वासोच्छ्वास = 17 क्षुल्लकभव $94\uparrow$ आवलिका।

क्षुल्लकभव, श्वासोच्छ्वास और आवलिका की उपर्युक्त संख्या वृद्ध संप्रदाय से कही है। उनके पाठ -

पन्नट्ठिसहस्साइं पंचेव सया हवंति छत्तीसा। खुड्डागभवग्गहणा एगमुहुत्तंमि एवइया॥

तिन्नि ~~सय~~ सहस्सा सत्त य सयाणि तेवत्तरिं च ऊसासा।

एस मुहुत्तो भणिओ सव्वेहिं अणंतनाणीहिं॥

Date :

दो य सया छप्पन्ना आवलिआणं तु खुड्डभवमाणं। जियरागदोसमोहेहिं जिणवरेहिं विणिद्दिट्ठं।

→ प्र. संघात के समय की तरह चरम समय में होनेवाले परिशाट का समय भी निकाल कर यह काल द्विसमयोन उप. क्यों नहीं होता? (व्यवहार मत)

उ. यहाँ आचार्य निश्चय मत का आलंबन लेकर कहते हैं- मनुष्यादि इहभव के चरम समय में संघात-परिशाट उभय होते हैं। केवल परिशाट परभव के प्रथम समय में होता है। ~~अतः यह~~ निश्चय नय निर्जीर्यमाण को निर्जीर्ण मानता है। अतः जिस समय में समस्त आयुदलिक की निर्जीर्यमाणता रूप लक्षण वाला सर्वपरिशाट होता है, वह परभव का प्रथम समय होगा। अतः इहभव के आयुष्य में से उसे नहीं निकालना।

प्र. 'जइ परपढमे' गाथा (हरिभद्रीय टीका) - यदि ऐसा मानोगे तो जब कोई जीव ऋजुगति से उत्पन्न होगा तब उसी समय में नए भव के शरीर पुद्गलों का सर्वसंघात भी होगा। अतः एक ही समय में सर्वसंघात और सर्वपरिशाट एक साथ होंगे।

उ. ऐसा होने दो। क्या तकलीफ है?

प्र. एक ही समय में दोनों मानने से दो भव की आयु का एक साथ अनुभव होने की आपत्ति होगी।

उ. 'जम्हा विगच्छमाणं' गाथा (हरिभद्रीय टीका) - निश्चय नय जाते हुए को गया हुआ और आते हुए को आया हुआ मानता है। अतः ऋजुगति के समय में पूर्वभव की आयु जाती हुई होने से गई हुई ही है, उसका अनुभव नहीं है। उसी समय में परभव की आयु आती हुई होने से आई हुई ही है, परभवायु का उदय-अनुभव होने से ऋजुगति के समय को परभव का माना। अतः परभवायु का ही उदय है।

(अब आचार्य पूर्वपक्ष को ऐसा न मानने पर आपत्ति बताते हैं-) 'चुइसमये' गाथा- च्युति के समय में अर्थात् ऋजुगति के समय में सर्वपरिशाट होने से जीव का इहभव नहीं होता क्योंकि इहभव संबंधी देह छोड़ दिया है। यदि आप परभव भी नहीं मानोगे तो यह जीव कौन से भव का होगा?

प्र. 'णणु जह विग्गहे' गाथा- जैसे वक्रगति में पारभविक देह के अभाव में भी आप जीव को परभव का कहते हो वैसे ही यहाँ इहभव के देहाभाव में भी इहभव कहो।

Date :

उ. यदि ऐसा ही है तो च्युतिसमय में इहभवशरीरत्याग होने पर परभव ~~क~~शरीर का अभाव विग्रहगति ओं के समान ही है। अतः वहाँ च्युतिसमय यानि ऋजुगति में परभव ही मान लो।

पू. मैं तो विग्रह गति में ही परभव मानता हूँ। यह ऋजुगति है।

उ. ऋजुगति में नहीं मानोगे तो यह जीव किस भव का होगा क्योंकि इहभव का शरीर छूट जाने से इहभव तो है नहीं। अतः परभव ही मानना पड़ेगा।
[इस प्रकार निश्चयनय के मत वाले ने परभव के प्रथम समय में सर्वसंघात और सर्व परिशाट सिद्ध किया]

* ~~Summary - Actual में सर्वसंघात हमेशा भव के पहले समय होता है तथा सर्वपरिशाट परभव के प्रथम समय होता है, यह व्यवहार निश्चय दोनों मतों को सम्मत है। अब वक्रग~~
~~अब वक्रगति में तो~~

* Summary - Actual में सर्वसंघात हमेशा जन्म के पहले समय होता है तथा सर्वपरिशाट मृत्यु के समय होता है।
वक्र गति में विग्रह गति के पहले समय पूर्वभव का आयुष्य तथा अन्य समयों में परभव का आयुष्य उदय में होता है। अतः eg. 3 समय की विग्रति में -

दिक्कत ऋजुगति में है क्योंकि वहाँ मृत्यु और जन्म का समय एक ही हो जाता है। अतः व्यवहार और निश्चय, दो मत हो जाते हैं।

निश्चय नय - ~~नि~~यह नय ऋजुगति के समय को परभव का प्रथम समय तथा उसी समय में सर्वसंघात-परिशाट दोनों मानता है। (उपर्युक्त टिप्पणक की चर्चा)
व्यवहार नय - यह नय ऋजुगति के समय को पूर्वभव का last समय मानता है, तथा भेदप्रधान नय होने से दो क्रिया एक ही समय में नहीं मानने से दोनों क्रिया अलग समय में मानता है।

(व्यवहारनय का मत स्पष्ट लिखा नहीं है, अतः यह स्वमति से संभवित लगता है)

Date :

मलयगिरीय टीका अव. भा.165

संघातादि का काल कहा गया। अब संघातादि का जघन्य और उत्कृष्ट अंतर– सर्वसंघात और सर्वपरिशाट का जघन्य अंतर क्रमशः 3समयन्यून क्षुल्लकभव और क्षुल्लक भव है। उत्कृष्ट अंतर क्रमशः पूर्वकोटी+1समय+33सा. और पूर्वकोटी+33सा. है।

★ सर्व संघात का जघन्य अंतर –

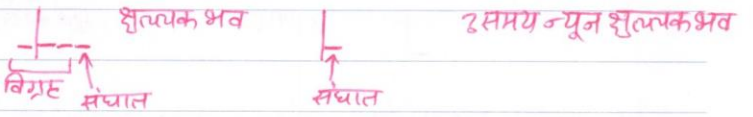

★ सर्व परिशाट का जघन्य अंतर –

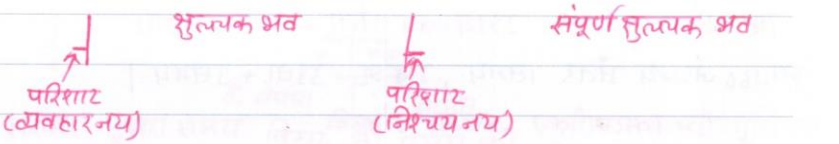

★ सर्व संघात का उत्कृष्ट अंतर –

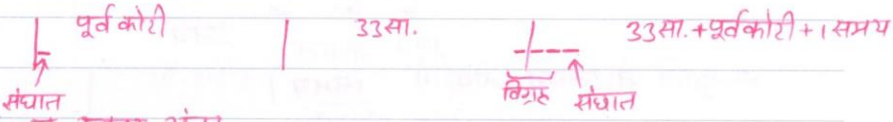

★ सर्व परिशाट का उत्कृष्ट अंतर –

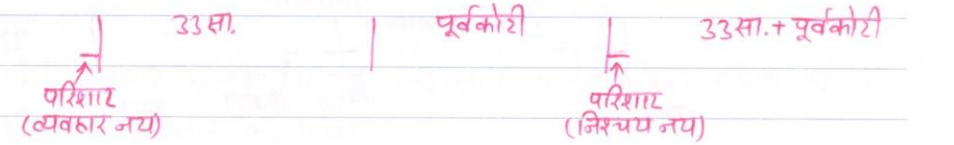

★ मूलगाथा का पद– तिसमयहीणं खुड्डं होइ भवं सव्वबंधसाडाणं। इसकी व्याख्या वस्तुतः ~~त्रि~~ तीन समय और समय से हीन ऐसा क्षुल्लकभव क्रमशः सर्वबंध-शाट का जघन्य अंतर। क्योंकि– (त्रि और समय पद अलग करना)

कोई एक नय (निश्चय या व्यवहार) से देखने पर सर्व शाट का अंतर समयन्यून क्षुल्लक भव होगा।

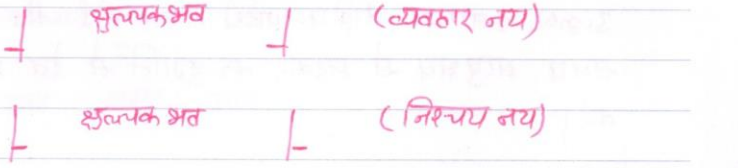

उक्कोस पुव्वकोडी समओ उअही अतित्तीसं। इसकी व्याख्या वस्तुतः सर्व बंध का उत्कृष्ट अंतर काल पूर्वकोटी+समय+33 उदधि। सर्व शाट का उत्कृष्ट अंतर निकालने 'समयो उअही' पद का समास लेना तथा 'समयेन हीना~~ः~~ उदधयः समयोदधयः'

Date :

इस प्रकार मध्यमपद लोपी समास करना। अर्थात् सर्वशाट का उत्कृष्ट अंतर होगा पूर्वकोटी + समय न्यून 33 सा.। यह अंतर भी कोई एक नय की अपेक्षा घटेगा –

(टीप्पणक द्रष्टव्य है)

अब. संघात-परिशाट उभय का अंतर –

भा.166 जघन्य अंतर 1समय, उत्कृष्ट 33सा. + 3समय।

★ उभयकरण का जघन्य अंतर –

ऋजुगति से उत्पन्न जीव में 1समय।

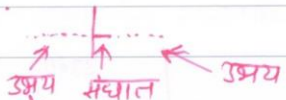

★ उभयकरण का उत्कृष्ट अंतर –

अब. औदारिक संघातादि करण कहे गए। अब वैक्रिय संघातादि का काल –

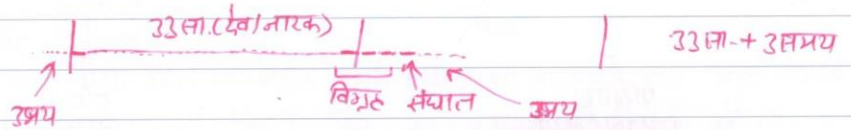

भा.167 वैक्रियसंघात का जघन्य 1समय, उत्कृष्ट 2समय काल। शाट 1समय का ही होता है।

★ वैक्रिय संघात का काल –

जघन्य 1समय – वैक्रिय लब्धिवाले औ. शरीरी के वैक्रियशरीर विकुर्वणा की शुरुआत में या देव-नारक की उत्पत्ति के प्रथम समय।

उत्कृष्ट 2समय – वैक्रिय लब्धि वाला कोई जीव 1समय वैक्रिय संघात कर उसी समय आयुक्षय से मरकर ऋजुगति से देव में उत्पन्न होता हुआ वै. संघात करे।

अब. संघात-परिशाट उभयकरण का काल –

भा.168 उभय का काल जघन्य 1समय, उत्कृष्ट 33सा. – 1समय।

★ जघन्य – कोई वैक्रिय लब्धि वाला विकुर्वणा के प्रारंभ में वै. संघात, दूसरे समय में

Date :

उभय करण कर मरे तब।

* उत्कृष्ट – अनुत्तर या अप्रतिष्ठान में 33 सा. की आयु में से संघात का 1 समय न्यून करना।

अब. संघातादि का अंतर –

भा. 169 वैक्रिय संघात - उभय और परिशाट का जघन्य अंतर क्रमश: 1 समय और अंतर्मुहूर्त। उत्कृष्ट वृक्षकालिक।

* संघात और उभय का जघन्य अंतर 1 समय। परिशाट का अंतर्मुहूर्त।

संघात का अंतर –

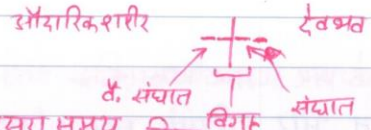

वै. संघात कर मरकर दूसरा समय विग्रह में पसार कर तृतीय समय (उत्पत्ति का समय) संघात करे।

अथवा

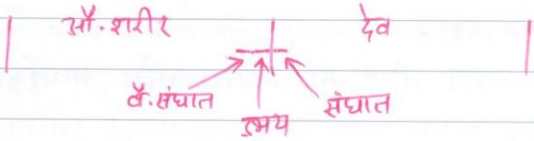

औ. शरीरी 2 समय उत्तरवैक्रिय कर ऋजुगति से देव बनकर संघात करे तब उभयकरण के 1 समय का अंतर।

उभय का अंतर –

वैक्रिय लब्धि वाले औ. शरीरी वैक्रिय शरीर बनाकर वै. शरीर की स्थिति काल तक उभय करण करे, मरकर ऋजुगति से देव बनकर पहले समय संघात और दूसरे समय से उभय करण करे तब संघात के 1 समय का अंतर।

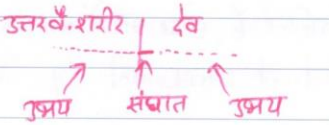

परिशाट का अंतर –

कोई वै. लब्धि वाला औदारिक शरीर उत्तरवैक्रिय शरीर बनाए, फिर कार्य पूर्ण होने पर इसका परिशाट करे। अंतर्मुहूर्त बाद पुन: उत्तरवैक्रिय शरीर बनाए और अंतर्मुहूर्त में ही परिशाट करे। तब दो अंतर्मुहूर्त मिलकर एक अंतर्मुहूर्त जितना

Date :

जघन्य अंतर होगा।

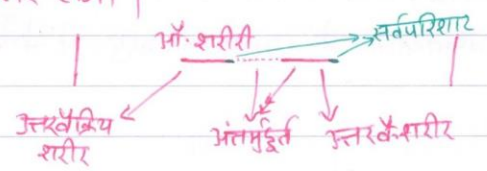

★ संघातादि तीनों का उत्कृष्ट अंतर - वृक्षकालिक। वृक्षकालेन निर्वृत्तं वृक्षकालिकं। अनंत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी प्रमाण।
कोई जीव वै.शरीर के संघातादि कर वनस्पतिकाय में अनंत काल रहकर पुनः वैक्रिय संघातादि करे, तब उत्कृष्ट अंतर।

अव. वैक्रिय संघातादि कहे गए। अब आहारक -

भा.170 आहारक में संघात और परिशाट 1 समय का होता है। उभय करण जघन्य और उत्कृष्ट से अंतर्मुहूर्त का होता है।

अव. संघातादि का अंतर -

भा.171 संघात-शाट-उभय तीनों का जघन्य अंतर अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरावर्त में कुछ कम।

★ उत्कृष्ट काल - वनस्पतिकाय की अपेक्षा।

अव. आहारक संघातादि कहे गए। अब तैजस-कार्मण -

भा.172 तैजस-कार्मण की संतान अनादि होने से संघात नहीं है। कुछ भव्यों को शैलेशी अवस्था के चरम समय में शाट होता है।

★ यह शाट 1 समय ~~कह~~ का ही होता है।

भा.173 उभय करण अनादि-अपर्यवसित है, कुछ भव्यों का अनादि-सांत है। अनादि होने से और अत्यंत अवियोग होने से अंतर नहीं है।

अव. जीव प्रयोग से निवर्तित करण अन्य ~~प्रका~~ रीति से 4 प्र. का है। वह कहते हैं -
(देखें भा.158-9 Pg.126, भा.162 की अव. Pg 127)

भा.174 संघात, शाटन, उभय तथा उभय रहित। जीव प्रयोग में क्रमशः पट, शंख, शकट और स्थूणा उदाहरण हैं।

Date :

★ संघात = जीव संघात का प्रयोग करे eg. तंतु का संघात पट।
शाटन = जीव शाट " " " eg. शंख (विशिष्टाकार करने के लिए मात्र शाट)
उभय – eg. शकट में कहीं छीलने से शाट, कहीं खील वि. ठोंकने से संघात।
उभय रहित eg. स्थूणा यानि खंभा, उसे तिर्च्छा करो सीधा करो किंतु संघात या शाट नहीं होता।

★ प्र. भा. 157 में कहे अनुसार निर्जीव पदार्थों का जीवप्रयोग से करण करना अजीवकरण है। अतः उपर्युक्त प्रभेद अजीवकरण होना चाहिए।
उ. यहाँ व्युत्पत्तिमात्र का भेद है – जीवप्रयोगेण करणं जीवप्रयोगकरणं (स्पष्टता टीप्पणक में)

टीप्पणक → पहले कुसुंभादौ - अजीवे करणं इति अजीवकरणं सप्तमी तत्पुरुष किया था। यहाँ जीवप्रयोगात्करणं इति पंचमी तत्पुरुष लिया।

मलयगिरीय टीका अव. द्रव्यकरण कहा गया। अब क्षेत्रकरण – (देखें भा. 152 Pg. 123)
गा. 1030 क्षेत्र का करण नहीं होता क्योंकि ~~वह~~ आकाश अकृत्रिम भाव (पदार्थ) है। तो भी व्यंजनपर्यायापन्न क्षेत्र के इक्षुकरणादि होते हैं।
★ क्षेत्र का करण अर्थात् क्रियमाणता नहीं होती क्योंकि वह अकृत्रिम पदार्थ है। ~~तथा~~ अकृत्रिम पदार्थ अर्थात् अकृतक है, किसी का कार्य नहीं है। अकृतक सत् पदार्थ नित्य होने से उसमें करणत्व की अनुपपत्ति है।

★ प्र. यदि ऐसा है तो निर्युक्तिकार ने क्यों निक्षेपगाथा में लिया?
उ. क्योंकि जब व्यंजनपर्याय को प्राप्त आकाश की विवक्षा करेंगे, तब इक्षुकरणादि होते हैं।
व्यंजन = क्षेत्र का व्यंजक होने से पुद्गल।
व्यंजन के योग से होने वाली पर्याय को प्राप्त क्षेत्र अर्थात् घटादि पुद्गल के संयोग से क्षेत्र की जो तदवगाह्यमानता रूप पर्याय होती है, उन पर्यायों ~~को प्राप्त~~ वाला क्षेत्र।
इस क्षेत्र उन पर्यायों की करण होने से क्षेत्र का भी करण होता है, पर्याय-पर्यायवान् के कथंचित् अभेद से।

इक्षुकरणादि – लोक में कहा जाता है. मैंने गन्ने का खेत किया, चावल का खेत

Date :

क्रिया इत्यादि।

अव. कालकरण –

गा.1031 काल में भी करण नहीं होता तो भी व्यंजन के प्रमाण से होता है। बव-बालवादि करणों से अनेक प्रकार का व्यवहार होता है।

★ काल वर्तनादि रूप है। वर्तनादि स्वयमेव होती है, उसे कोई करता नहीं है। अतः उसमें करणता नहीं होती।
तो भी व्यंजन यानि द्रव्य के उपचार से करण होता है। अथवा व्यवहार नय से समयादि काल की अपेक्षा करण होता है। ~~(स्पष्टता टीप्पणक में)~~
(टीप्पणक ~~में~~ द्रष्टव्य है)

★ बव-बालवादि करण निकालने की विधि।

अव. भावकरण – (देखें गा.152 Pg. 123)

गा.1032 भाव करण 2 प्र. जीव - अजीव। उसमें अजीवकरण तो वर्णादि तथा जीवकरण 2 प्र. श्रुतकरण, नोश्रुतकरण।

★ अजीवभावकरण = परप्रयोग बिना बादल वि. का अन्य वर्णादि को प्राप्त करना।

प्र. विस्रसा विषयक अजीव द्रव्य करण में ऐसा ही कहा था है। दोनों में अंतर क्या?
उ. यहाँ भाव का अधिकार होने से पर्याय की प्रधानता है, वहाँ द्रव्य की प्रधानता थी।

अव. जीव भाव करण –

★ गा.1033 श्रुत 2 प्र. बद्ध, अबद्ध। बद्ध तो द्वादशांग कहा गया। अबद्ध उससे विपरीत। बद्ध श्रुत 2 प्र. निशीथ, अनिशीथ।

★ यहाँ लोकोत्तर कहा गया। लौकिक बद्ध श्रुत भारतादि।

★ निशीथ - एकांत में पढ़ने से।

अव. निशीथ - अनिशीथ का स्वरूप –

गा.1034 ~~जिसमें~~ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य का प्रतिपादक तथा जिसमें और से भी बोला जाए, वह निशीथ नहीं है। निशीथ यानि प्रच्छन्न। eg. निशीथ अध्ययन।

Date :

गा.1035 | अग्रायणीय पूर्व में पाठ है- जहाँ एक द्वीपायन वहाँ सौ, जहाँ सौ वहाँ एक भोजन करते हैं या घात किए जाते हैं।

* यह पाठ ~~आज~~ अप्रसिद्ध (गुप्त) अर्थ वाला होने से निशीथ है।

हरिभद्रीय टीका → गा.1034 में 'भूआपरिणतविगए सद्दकरणं' पद का अर्थ एक ही किया है- जिस सूत्र में उत्पाद-ध्रौव्य-व्यय का शब्दकरण यानि कथन हो, वह निशीथ नहीं है।

मलयगिरीय टीका गा.1036 इस प्रकार बद्ध श्रुत जानना। अबद्ध श्रुत 500 आदेश रूप ~~लोक्त~~ है, जैसे- मरुदेवी अत्यंत-स्थावर सिद्ध हुई।

* उपर्युक्त गा.1034 में लोकोत्तर बद्ध श्रुत कहा। लौकिक तो आरण्यकादि जानना।

* अबद्ध श्रुत 500 आदेश (प्रवाद) रूप है। ~~अर्थात् ये 500 आदेश~~ ये 500 आदेशों का अंग-उपांग में पाठ नहीं है, मात्र गुरु परंपरा से चल रहे हैं।

eg. मरुदेवी माता अकेली, अत्यंतस्थावर यानि अनादि वनस्पति से निकलकर सिद्ध हुई।

लौकिक अनिबद्ध श्रुत - अर्हिक प्रत्यादिकादि।

* यहाँ वृद्ध संप्रदाय - आर्हत प्रवचन में 500 आदेश अनिबद्ध हैं।

1. मरुदेवी अत्यंतस्थावरा सिद्ध हुई।
2. स्वयंभूरमण समुद्र में मछली और कमल के पत्तों के वलयाकार सिवाय सभी आकार होते हैं।
3. विष्णुमुनि ने लाख यो. से अधिक का शरीर विकुर्वा।
4. करट- उत्कटर (मासी से उत्पन्न भाई थे- टीप्पणक) पूर्व अवस्था में अध्यापक ब्राह्मण थे x कुणाला नगरी में नाले के पास वर्षाकाल में रहे x देव नगर में वर्षा नहीं करता x लोग उनकी हीलना करते हैं x मुनि - क्यों हीलना करते हो? x लोग- आपके कारण वर्षा नहीं होती x दोनों क्रमशः बोले - ~~अ~~

वरिस देवा! कुणालाए, दस दिवसाणि पंच च, मुट्ठिमेत्ताहिं धाराहिं, जहा रत्तिं तहा दिवा।

बोलकर वहाँ से निकल गए x कुणाला नगरी 15 दिन में लोगों के साथ पानी में डूब गई x तीसरे साल में दोनों मुनि काल कर सातवीं पृथ्वी के काल नरकावास में 22 सा. वाले नारक बने x कुणाला के नाश के बाद 13वें साल में महावीर स्वामी को केवलज्ञान हुआ।

Date :

इस प्रकार 500 आदेश हैं। ये लोकोत्तर कहे।

लौकिक में आद्धिक 32, प्रत्याद्धिक 32, 16 करण हैं। (आद्धिक प्रत्याद्धिक धनुर्धर की मुद्रा विशेष हैं, करण नर्तकी वि. की ~~तथा धनुर्धर की भी~~ मुद्रा विशेष हैं - टीप्पणक)

लोक प्रवाद में 5 स्थान हैं -

1. आलीढ - सीधा पैर आगे रखना, उल्टा पैर पीछे रखना, दोनों में 5 पैर जितना अंतर।
2. प्रत्यालीढ - उल्टा पैर आगे, सीधा पैर पीछे, दोनों में 5 पैर जितना अंतर।
3. वैशाख - एडी को अंदर समश्रेणि करना, पैर के अग्र भाग को बाहर समश्रेणि में करना। (?)
4. मंडल - दोनों पैर सीधे और उल्टे हाथ की ओर फैला कर दोनों जांघ का अंतर 4 पैर जितना करना।
5. समपाद - दोनों पैर समान निरंतर रखना।
6. शयनकरण।

(ये सभी धनुर्धर की मुद्रा विशेष हैं - टीप्पणक)

अव. श्रुतकरण कहा। नोश्रुतकरण — (देखें गा.1032)

गा.1037 नोश्रुतकरण 2प्र. गुणकरण, पुंजनाकरण। गुणकरण 2प्र. तपकरण, संयमकरण।)

★ संयम - आश्रवविरमणादि।

गा.1038 पुंजनकरण 3प्र. मन, वचन, काया विषयक। मन में सत्यादि करण। इनके स्वस्थान में 4-4-7 भेद हैं।

अव. सामायिक अध्ययन का जिसमें अवतार है, वह कहते हैं -

गा.1039 भावश्रुतशब्दकरण में अधिकार जानना। नोश्रुतकरण और गुण-पुंजन करण में यथासंभव अधिकार है।

★ ~~भव~~ भावश्रुत शब्दकरण अर्थात् अनिशीथ श्रुत में श्रुतसामायिक का अवतार। अंत में यथासंभव कहने से भावश्रुत सामायिक का उपयोग ही है। शब्दकरण भी यहाँ भावश्रुत ही विवक्षित है, द्रव्यश्रुत नहीं। क्योंकि द्रव्यश्रुत का सामायिक में अनवतार है। (स्पष्टता टीप्पणक में)

गुण करण में चारित्रसामायिक का अवतार। पुंजनकरण में मन-वचन के सत्य-असत्यामृषा रूप 2 करण में श्रुत-चारित्र सामायिक का अवतार। काय पुंजन में औदारिक

Date :

काय योग में श्रुत सा. का अवतार। समिति-गुप्ति पालन में चारित्र सा.।

टीप्पणक → भावश्रुतशब्द करण यानि भावश्रुत और शब्द रूप करण। भावश्रुत अन्तर्जल्पाकार श्रुतोपयोग, शब्द यहाँ अनुपयोग वाले जीव के 'करेमि भंते!' वि. नहीं लेना किंतु 'तच्छब्द विशिष्ट: श्रुतभाव एव' - उस सामायिक के संबंधी शब्द से विशिष्ट श्रुत रूप लेना।

भावार्थ यह हुआ कि श्रुतसामायिक का अवतार अन्तर्जल्पाकार रूप भावश्रुत और बाह्य उच्चारण रूप शब्द होने पर होता है।

→ 'मन-वचन के सत्य-असत्यामृषा रूप दो करण में दोनों सामायिक का अवतार' - यहाँ श्रुतसा. में सम्यक्त्व सा. का और चारित्र सा. में देशविरति सा. का अन्तर्भाव मन में निश्चित कर इस प्रकार कहा है। अन्यथा यदि अन्तर्भाव अभिप्रेत नहीं होता तो चारों सा. का अवतार कहते अथवा दो सा. का अवतार नहीं होता ऐसा कहते।

→ 'काय योग में...'

प्र. हाथ वि. से भंगादि का वर्तन होता है। उसकी सहाय से अन्तर्जल्प और बाह्य उच्चार होने से काय योग में श्रुतसा. का अवतार हो किंतु चारित्र तो निश्चय से सावद्ययोग की निवृत्ति रूप परिणाम है। उसका कैसे काययोग में अवतार होगा?

उ. काया की सहाय से होने वाले प्रत्युपेक्षणादि रूप व्यावहारिक चारित्र की अपेक्षा अवतार होगा।

(प्रति द्वार भा.गा. 152 पूर्ण देखें Pg.123)

मलयगिरीय टीका अव. सामायिक करण को ही 7 अनुयोग द्वार से कहते हैं -

गा.1050 (प्रतिद्वारगा.) I. कृताकृत II किसके द्वारा किया गया? III केषु द्रव्येषु IV कस कारक कब होता है (कदा) V किस नय से (केन) VI करण कितने प्रकार का है? VII कथं?।

अव. I. कृताकृत — II. केन —

भा.175 उत्पन्नानुत्पन्न रूप कृताकृत द्वार नमस्कार निर्युक्ति की तरह जानना। केन द्वार- अर्थ से जिनेश्वरों ने, सूत्र से गणधरों द्वारा सामायिक की गई।

★ नमस्कार निर्युक्ति का उत्पाद द्वार देखें Pg 34 गा. 888-9।

Date :

★ सामायिक अर्थ से जिनेश्वरों ने तथा सूत्र से गणधरों ने की - यह व्यवहार नय का मत है। निश्चय नय से तो व्यक्ति की अपेक्षा जो जिस सामायिक का स्वामी है, वह उसके द्वारा ही की गई।
व्यक्ति की अपेक्षा यहाँ तीर्थंकर-गणधर का उपन्यास प्रधान व्यक्ति होने से किया है।
[अन्यथा - यदि मात्र व्यवहार से ही कहना था तो वह तो उपोद्घात निर्युक्ति के निर्गम द्वार में तीर्थंकर-गणधर को कहा होने से पुनरुक्त दोष होता।]
(देखें भा.1 गा.143 की अव. Pg. 167)

अव. III. केषु द्रव्येषु -
भा.176 नैगम नय इष्ट द्रव्यों में सामायिक कहता है। अशेष नय सर्वद्रव्यों में कहते हैं, सर्व पर्यायों में नहीं।

★ नैगम नय के मत में मनोज्ञ परिणाम में कारण होने से इष्ट द्रव्यों अर्थात् मनोज्ञ शयनासनादि में ही सामायिक होती है।

★ शेष नय कहते हैं - परिणाम विशेष से किसी को कुछ मनोज्ञ होता है, वही अन्य को अमनोज्ञ। इस प्रकार व्यभिचार होने से सर्वद्रव्यों में सामायिक होती है। जहाँ मनोज्ञ परिणाम हो वहाँ।

★ सर्व पर्यायों में सामायिक नहीं होती क्योंकि अवस्थान (रहने) का ही अभाव है। जो जिस आसन वि. में रहता है, वह सर्वपर्यायों में नहीं रहता, एकभाग में ही रहता है।

★ यह बात इसी प्रकार जानना। अन्यथा उपोद्घात निर्युक्ति के 'द्वा. केषु द्वार' के साथ पुनरुक्त दोष आएगा। (देखें Pg. 1 पर)

★ विशेषावश्यक भाष्य गा. 3387-8 -
प्र. उपोद्घात में 'केषु' कहा तो यहाँ पुनः क्यों पूछा?
उ. वहाँ 'केषु' द्वार में सामायिक के विषय कहे थे, यहाँ किनमें रहकर सामायिक प्राप्ति होती है, वह कहा।
अथवा
वहाँ सर्वद्रव्यों का सामायिक का विषय कहा था, यहाँ उन्हीं सर्वद्रव्यों को

Date :

सामायिक का हेतु कहा है।

प्र. सर्वद्रव्य ~~को~~ हेतु कैसे?
उ. जाति ~~से~~-मात्र वचन होने से।
जीव धर्मादि सभी द्रव्यों के एक भाग में अवश्य रहता है। उसे जाति से पूरे द्रव्य में कह दिया जाता है।
(eg. कोई विदेश गए व्यक्ति को पूछे 'कहाँ से आए?' तो वह कहेगा - भारत से। यहाँ भारत से पूरे भारत देश कहा जाता है किंतु वह तो उसके एक छोटे से भाग में रहता है।)

अव. IV. इसका कारक कब होता है -

भा. 177 नैगम उद्दिष्ट होने पर, संग्रह-व्यवहार उपस्थित होने पर, ऋजुसूत्र आक्रमण करते हुए और शब्द नय समाप्त होने पर उपयुक्त को सामायिक का कारक मानता है।

* नैगम उद्दिष्ट होने पर - गुरु द्वारा शिष्य नहीं पढ़ाने पर और क्रिया न करने पर भी मात्र सामायिक अध्ययन का उद्देश करने पर भी शिष्य को सा. का कर्ता मानता है, वन जाने के लिए तैयार प्रस्थककर्ता की तरह। क्योंकि उद्देश भी सा. का कारण है और कारण में कार्य का उपचार है।

* संग्रह-व्यवहार उपस्थित होने पर — उद्देश के बाद शिष्य जब वंदन कर पाठ के लिए उपस्थित हो तभी अधिक प्रत्यासन्न ~~कारण~~ कारण होने से संग्रह-व्यवहार उसे सा. का कारक मानते हैं।

* ऋजुसूत्र आक्रमण करते हुए — उद्देश के बाद वंदन कर उपस्थित शिष्य जब पाठ प्रारंभ करता है, तब कारक मानता है।
वृद्ध संप्रदाय - जब सामायिक अध्ययन समाप्त करता है किंतु उसमें उपयोगरहित है, प्रतिपद्यमान है तब असाधारणकारण होने से वह कर्ता है।

* शब्दादि तो समाप्त होने पर सा. में उपयुक्त को कर्ता मानते हैं, भले वो शब्द-क्रिया से रहित हो।

अव. V 'नयतः' द्वार — (देखें प्रतिद्वार गा. 1040 pg. 139)

Date :

भा.178 (द्वारगा.) 1. आलोचना 2. विनय 3. क्षेत्र 4. दिशाभिग्रह 5. काल 6. ऋद्धि 7. गुणसंपदा 8. अभिव्याहार है।

अव. 1. आलोचना नय—

भा.179 गृहस्थों में प्रव्रज्या के योग्य आलोचना। साधुओं में उपसंपदादि के समय सूत्र-अर्थ-तदुभय आलोचना।

★ कोई गृहस्थ प्रव्रज्या लेने आए या साधु उपसंपदा स्वीकारने आए, तब उसकी योग्यता की परीक्षा करना = आलोचना।

★ गृहस्थ की आलोचना- तू कौन है? तुझे निर्वेद कैसे हुआ? वि.। ऐसी पृच्छा के बाद उसके उत्तर से योग्यता की अवधारणा कर उसे दीक्षा देना चाहिए।

★ साधुओं की आलोचना 109. की सामाचारी में कही गई (भा. 2)।

प्र. सामायिक सूत्र तो अल्प है। उसके लिए कैसे उपसंपदा ले? अथवा सामायिक सूत्र न आने पर वह साधु कैसे होगा? प्रतिक्रमण कैसे करता होगा? प्रतिक्रमण बिना उसकी शुद्धि कैसे होगी?

उ. ग्लानादि के व्याघात से सूत्र भूल जाने वाले साधु सूत्रार्थ के लिए उपसंपदा लेते हैं। अथवा भविष्य में 5वें आरे के अंत में अतिमंद क्षयोपशम वाले जीवों के लिए यह सूत्र जानना।

सूत्रार्थ न होने पर भी चारित्र के परिणाम होने से वह साधु ही है। जितने सूत्र याद हो, उतने से प्रतिक्रमण करने पर भी शुद्ध होते ही हैं।

अव. 2.-4. विनय-क्षेत्र-दिशाभिग्रह—

भा.180 आलोचित होने पर विनीत को प्रशस्त क्षेत्र में तथा दो दिशा में अथवा ~~वसंती~~ जिस दिशा में विचरते हो, उसमें दिक्षा दे।

★ विनीत यानि- अनुरक्त, भक्तिमान्, नहीं छोड़ने वाला, अनुवर्तक, विशेषज्ञ, उद्यत, नहीं थकने वाला साधु इच्छित अर्थ को प्राप्त करता है। (विशेषावश्यक भाष्य गा. 3403)

Date :

★ प्रशस्तक्षेत्र – इक्षुवन, शालिवन, कमल वाले सरोवर के पास, कुसुमितवनखंड, गंभीर (वृक्षसमूह से ढँका हुआ) क्षेत्र, सानुनाद (echo वाला) क्षेत्र, जिस नदी में पानी सीधे हाथ की तरफ प्रदक्षिणा करता हो, देरासर।
अप्रशस्त – भग्न, जीर्ण, श्मशान, शून्य गृह, अमनोज्ञ गृह, क्षार-अंगार-कचरे वि. द्रव्य से दुष्ट गृह। (विशेषा. गा. 3404-5)

★ पूर्व – उत्तर या चरंती दिशा में गुरु मुख रखे।
चरंती यानि जिस दिशा तीर्थंकर-गणधर-केवली-14 पूर्वी यावत् युगप्रधान विचरते हों। (विशेषा. 3406)
ये दिशाएँ क्रमशः अधिक-अधिक शुभ हैं।

अव. 5.-7. काल-ऋक्ष-गुणसंपदा —

भा. 181 प्रतिकुष्ट दिन छोड़कर ~~मृगशीर्षादि~~ मृगशिर आदि नक्षत्रों में, प्रियधर्मादि गुणसंपदा होने पर दीक्षा दे।

★ प्रतिकुष्ट-प्रतिषिद्ध दिन → दोनों पक्ष की चौथ, छठ, आठम, नोम, बारस, चौदस, पूनम। (विशेषा. 3407)

★ नक्षत्र – मृगशिर, आर्द्रा, पुष्य, 3 पूर्व (पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभद्रा), मूल, आश्लेष, हस्त, चित्रा नक्षत्र में दीक्षा देना क्योंकि ये 10 नक्षत्र ज्ञान की वृद्धि करने वाले हैं। (विशेषा. 3408)
संध्यागत, रविगत, विड्डेर (वक्रग्रह से अधिष्ठित), सग्रह (क्रूर ग्रह से अधिष्ठित) विलंबित (सूर्य द्वारा जो अभी छूटा हो), राहुहत (जिसमें सूर्य-चंद्र ग्रहण हुआ हो), ग्रहभिन्न (जो ग्रह से भिन्न हो) इन 7 नक्षत्रों का वर्जन करें। (विशेषा. 3409)

★ प्रियधर्मादि – प्रियधर्म, दृढधर्म, संविग्न, अवद्यभीरु, अशठ, खंतो, दंतो, गुप्त, स्थिरव्रती, जितेंद्रिय, ~~ऋ~~ ऋजु। (विशेषा. 3410)

अव. 8. अभिव्याहार —

भा. 182 कालिकश्रुत का अभिव्याहार सूत्र-अर्थ-तदुभय से होता है। दृष्टिवाद में द्रव्य-गुण-पर्याय से होता है।

★ अभिव्याहार यानि गुरु-शिष्य का वचन-प्रतिवचन।

Date :

शिष्य - इच्छाकार से आप ~~यह~~ इस अंग-अध्ययन-उद्देश का मुझे उद्देश करो।
गुरु - मैं उद्देश करता हूँ। अर्थात् वाचना देता हूँ।
क्षमाश्रमणों के हाथ से - यह आप्तउपदेश की परंपरा बताने के लिए है।
सूत्र से, अर्थ से, उभय से - कालिक या उत्कालिक सूत्र में।
सूत्र से, अर्थ से, उभय से द्रव्यगुणपर्याय सहित - दृष्टिवाद में।
शिष्य - आपने इसका उद्देश किया, मैं अनुशासन इच्छता हूँ।

टीप्पणक → यहाँ पर प्रसंग से सभी श्रुत की अनुयोगद्वारादि में बताई और सामाचारी से आई हुई उद्देश-समुद्देश-अनुज्ञा विधि सामान्य से कहते हैं।
सामायिक अध्ययनादि श्रुत पढ़ने की इच्छा से शिष्य उपस्थित होने पर गुरु समवसरण स्थापना कर पूर्व या उत्तराभिमुख, शिष्य को उल्टे हाथ की ओर रखकर देववंदन करते हैं। फिर शिष्य को द्वादशावर्त वंदन कराते हैं। योगोत्क्षेप के लिए 25 श्वास का काउसग्ग, प्रगट लोगस्स। 3 नवकार, नंदि सूत्र।
शिष्य खमासमण देकर - इच्छाकारेण अमुगं सुयं उद्दिसह
गुरु - उद्दिसामि खमासमणाणं हत्थेणं सुत्तेणं अत्थेणं तदुभएणं
शिष्य - खमासमण - संदिसह किं भणामो?
गुरु - वंदित्ता पवेयह
शिष्य - इच्छं, खमासमण, इच्छाकारेण तुब्भेहिं अमुगं सुयमुद्दिट्ठं इच्छामि अणुसट्ठिं
गुरु - जोगं करेह
शिष्य - इच्छं, खमासमण, नवकार बोलते हुए गुरु की प्रदक्षिणा करे। } 3 बार
3 प्रदक्षिणा कर शिष्य गुरु के सामने खड़ा रहे। गुरु बैठ जाएँ। फिर अर्द्धविनत शरीर वाला शिष्य - तुब्भं पवेइयं संदिसह साहूणं पवेएमि
गुरु - पवेयह
शिष्य - इच्छं, खमासमण, नवकार, खमासमण, तुब्भं पवेइयं साहूणं पवेइयं संदिसह करेमि काउस्सग्गं
गुरु - करेह
शिष्य - खमासमण, अमुगस्स उद्दिसावणियं ~~क~~करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ... 27 श्वास का काउस्सग्ग, प्रगट लोगस्स।
इस प्रकार 7 वंदन (खमासमण) से श्रुत का उद्देश होता है। उद्देश करने का अर्थ - गुरु ऐसा कहते हैं कि अमुक श्रुत की मैं तुझे वाचना देता हूँ।
(यहाँ 3 प्रदक्षिणा का एक ही खमासमण जाति से गिना है)

समुद्देश में नंदिसूत्र वि. से रहित खमासमण की विधि है। विशेष शिष्य के प्रवेदन करने पर गुरु – थिरपरिचियं करेह। समुद्देश किए जाने पर शिष्य अमुक सूत्र को स्थिर और परिचित करने के लिए नियुक्त होता है।

अनुज्ञा में योगोत्क्षेप के काउसग्ग सिवाय नंदिसूत्र वि. पूरी विधि है। विशेष-शिष्य के प्रवेदन करने पर गुरु- सम्मं धारय अन्नेसिं च पवेयसु।

मलयगिरीय

टीका अव. 8. समभिव्याहार द्वार पूर्ण, द्वार गा. भा. 178 पूर्ण (देखें Pg.142)। V नयतः द्वार पूर्ण (देखें प्रतिद्वार गा. 1040 Pg. 139)। VI करण कितने प्रकार का—

भा. 183 आचार्य विषयक उद्देश, समुद्देश, वाचना, अनुज्ञा। शिष्य विषयक उद्दिश्यमानादि।

★ गुरु-शिष्य की सामायिक क्रिया का व्यापार = करण। वह 4 प्र. - उद्देश, समुद्देश, वाचना, अनुज्ञा। यह क्रम छंद भंग न हो इसलिए रखा है।
तत्त्वतः क्रम- उद्देश, वाचना, समुद्देश, अनुज्ञा।
ये गुरु विषयक है। शिष्य विषयक- उद्दिश्यमान, वाच्यमान, समुद्दिश्यमान, अनुज्ञायमान।

★ प्र. पहले नामादि अनेक प्र. का करण कह चुके हैं तो पुनः क्यों कहा?
उ. यहाँ गुरुशिष्य के दान-ग्रहण काल में 4 प्र. का करण है। पहले सामान्य से कहा था, यहाँ गुरुशिष्य की क्रियाविशेष से विशिष्ट कहते हैं। (भा. 152 Pg. 123)

अव. VII कथं द्वार (देखें द्वार गा. 1040 Pg. 139) —

गा. 1041-2 सामायिक का लाभ कैसे? उसके देशघाती और सर्वघाती स्पर्द्धक होते हैं। अनंत देशघाती स्पर्द्धक क्षय होने पर ~~क्षति~~ विशुद्ध्यमान परिणाम वाला जीव भाव से ककार प्राप्त करता है। शेष अक्षरों की प्राप्ति भी इसी क्रम से होती है। यह (सामायिक) भावकरण है।

★ सर्वघाती स्पर्द्धक सभी नष्ट होने पर तथा अनंत देशघाती स्पर्द्धक नष्ट होने पर प्रतिसमय अनंतगुण वृद्धि से विशुद्ध्यमान परिणाम वाला जीव 'करेमि भंते...' का 'क' प्राप्त करता है। इसी प्रकार प्रत्येक अक्षर का जानना।

★ प्र. पहले उपक्रम द्वार में कहा था कि क्षयोपशम से प्राप्त होती है। पुनः उपोद्घात में कथं द्वार में भी कहा। पुनः यहाँ कहने से पुनरुक्तता क्यों नहीं?
उ. तीनों जगह अपुनरुक्तता है। उपक्रम में क्षयोपशम से प्राप्ति कही। उपोद्घात में

(i) देखें चूर्ण Pg 150

Date :

क्षयोपशम की प्राप्ति के कारण कहे। यहाँ क्षयोपशम किन कर्मों का होता है, वह कहा। (देखें उपक्रम द्वार भाग 1 Pg 111 पर chart, वर्णन देखें Pg 116 पर नाम-शास्त्रीय-उपक्रम)

अव. VII कथं द्वार पूर्ण, प्रतिद्वार गा. 1040 पूर्ण (देखें Pg. 139)। मूल द्वार गा. 1029 का A. करण द्वार पूर्ण (देखें Pg. 123)। इससे सूत्र के 'करेमि' पद का व्याख्यान पूर्ण हुआ। (देखें सूत्र Pg. 121)

B. भय द्वार (मूल द्वार गा. 1029 Pg. 123) — C. अन्त द्वार—

भा. 184 भदन्त और भयांत, दो विकल्प (भंते के) होते हैं। भय शब्द की रचना (निक्षेप) 6 प्र. से है। क्रम से सभी भेद वर्णन किए जाने के बाद अंत शब्द के भी 6 भेद हैं।

(ii) ★ भंते शब्द के विकल्प –

1. भदन्त – भद् धातु कल्याण और सुख अर्थ में, औणादिक अन्त प्रत्यय, उदित: स्वरान्नोऽन्त: से न् का आगम, औणादिक प्रत्यय होने से न् का लोप। भदन्त = कल्याण, सुख।
2. भवान्त: – भवस्य अन्त: क्रियते येन, संसार का अंत करने वाले (स्वयं के संसार का या सेवा करने वाले जीव के संसार का अंत करने वाले आचार्य)
3. भयान्त – जिनसे भय का अंत हो, ऐसे गुरु।
4. भयान्तक – अन्तं करोति अन्तक:, भयस्य अन्तक:। भय का अंत करने वाले।

★ रचना = निक्षेप।

भय के 6 निक्षेप – नाम-स्थापना सुगम।

द्रव्य से भय द्रव्यभय। क्षेत्र से भय क्षेत्र भय। काल से भय कालभय।

भावभय 7 प्र. – 1. इहलोक – स्वजातीय का भय eg. मनुष्य को मनुष्य से भय।

2. परलोक – परजातीय से भय eg. मनुष्य को तिर्यंच से भय।
3. आदान – द्रव्य के नाश - चोरी वि. का भय।
4. आकस्मिक – बाह्यनिमित्त बिना हेतु बिना होने वाला भय।
5. अश्लोक – अपयश का भय।
6. आजीविका – आजीविका के उच्छेद का भय।
7. मरण – मृत्यु का भय।

★ अन्त – 6 प्र. नाम-स्थापना सुगम। घटादि का अंत - द्रव्यान्त। लोकादि का अंत क्षेत्रान्त। समयादि का अंत कालान्त। औदयिकादि भाव का अन्त भावान्त।

Date :

गा. 185 ऐसे सबका वर्णन होने पर यहाँ 7भय से मुक्त भवान्त या भयान्त का अधिकार है।

(i) ★ B.C. भय-अन्त द्वार पूर्ण (देखें मूल द्वार गा. 1029 Pg. 123) | इससे 'भंते' पद

(ii)↑ गुरु के आमंत्रण वाचक पद का व्याख्यान पूर्ण हुआ।

प्र. सामायिक की आदि में ही गुरु का आमंत्रण वचन क्यों किया?

उ. 1. गुरुकुलवास का महत्त्व बताने के लिए - गुणार्थी शिष्य को हमेशा गुरुकुलवास में रहना चाहिए। गुरुकुल में प्रतिक्षण ज्ञानादि गुण प्राप्त होते हैं।

'नाणस्स होइ भागी थिरयरओ दंसणे चरित्ते य। धन्ना आवकहाए गुरुकुलवासं न मुंचंति॥'

(विशेषा. 3459)

2. सर्वकाल प्रतिक्रमण गुरु के पास करना चाहिए - यह बताने के लिए।

कल्प अध्ययन में ऐसी सामाचारी कही है - यदि वसति छोटी हो तो कुछ साधु अन्यत्र जाएँ किंतु आचार्य के पास प्रतिक्रमण कर, पभाई काल लेकर, सूत्र-अर्थ पोरसी कर जाएँ। यदि बीच में श्वापदादि का भय हो तो अर्थपोरसी छोड़े, फिर सूत्रपोरसी, फिर कालग्रहण, ... (?) (टीप्पणक देखें

3. सभी कार्य गुरु को पूछकर करे क्योंकि सामायिक भी गुरु आमंत्रण बिना नहीं होती।

प्र. सभी कार्य गुरु को पूछकर क्यों करना?

उ. क्योंकि 1. कृत्य-अकृत्य गुरु जानते हैं।

2. शिष्य द्वारा विनय होता है।

3. भगवान् की आज्ञा की आराधना होती है।

★ ~~सामायिक शब्द के अर्थ -~~

टीप्पणक → कल्प अध्ययन में सामाचारी - यदि वसति लघु हो तो कुछ साधु अन्यत्र भी रहते हैं। किंतु गुरु के पास आकर प्रतिक्रमण कर, पभाई कालग्रहण के बाद सूत्र-अर्थ पोरसी कर अन्यत्र जाए। यदि रास्ते में भय हो तो अर्थपोरसी छोड़े (अर्थात् सूत्रपोरसी कर चले जाए)। यदि और भय हो सूत्रपोरसी, काल... यावत् चरम काउसग्ग, प्रथम काउसग्ग छोड़े। वहाँ तक रहे जहाँ तक सूर्य होने पर भी कारण से अन्य वसति में जाकर स्थापनाचार्य से प्रतिक्रमणादि करे।

(i)(ii) इस टिप्पणिक

Date :

मलयगिरीय टीका अव. ~~इस~~ D. सामायिक द्वार (देखें द्वार गा. 1029 Pg 123) —

★ सामायिक के शब्दार्थ –

1. समस्य आयः। सम = राग-द्वेषरहित, आय = गमन, यह सभी क्रिया का उपलक्षण है अर्थात् समाय = सम जीव की सभी क्रिया। स्वार्थ में इकण्।

2. समेषु आयः। सम = ज्ञान-दर्शन-चारित्र। इन गुणों में जाना। स्वार्थ में इकण्।

3. साम्नः आयः = सामायः। साम = सर्वजीवों में मैत्री, आय = प्राप्ति। " " "।

4. समं अयनं समायः। सम = सम्यक् गमन। स्वार्थ में इकण्।

5. सम्यक् आयः समायः। सम्यक् प्राप्ति। " " ।

6. समस्य भावः साम्यं, तस्य आयः साम्यायः। समता की प्राप्ति। " " ।

सामायिक शब्द की निरुक्ति –

गा.1043 साम, सम, सम्यग् और इक, ऐसे सामायिक(i) के एकार्थक हैं। नाम-स्थापना-द्रव्य-भाव में उसके निक्षेप हैं।

~~अव. साम सम सम्यक् 4 प्र. नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य साम = सम = सम्यक् →~~

अव. साम, सम, सम्यक्, इक 4 प्र. नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य निक्षेप –

गा.1044 साम = मधुर(ii) परिणाम वाला, सम = तुला (तराजू), सम्यक् = दूध-शक्कर का संयोग, इक = धागे में हार का प्रवेश। ये उदाहरण द्रव्य में जानना।

अव. भाव सामादि –

गा.1045 आत्मोपमा से परदुःख नहीं करना, रागद्वेष में मध्यस्थता, ज्ञानादि त्रिक, इसका आत्मा में प्रवेशना। भाव सामादि है।

★ भाव साम = आत्मा की तरह दूसरे को दुःख नहीं करना। भाव इक = भाव का साम का आत्मा (स्वयं) में प्रवेश।

सामन् + ~~इ~~इक = सामायिक, न् का आय आदेश निपात।

★ भाव सम = राग-द्वेष में मध्यस्थता। इक = भाव सम का आत्मा में प्रवेश

सम + इक = सामायिक, मय का आगम और स की दीर्घता निपात।

सामायिक = आत्मा में ~~इ~~ राग-द्वेष में मध्यस्थता आना।

सामायिक = आत्मा में दूसरों को दुःख न करने का परिणाम।

Date :

★ भाव सम्यक् = ज्ञान-दर्शन-चारित्र की एकता।
सामायिक = ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आत्मा में एकता होना।
सम्यक् + इक = सामायिक, यक् का आय आदेश और स की दीर्घता निपात।

टीप्पणक. (i) प्र. साम, सम वि. के अवयवों को सामायिक रूप पूरे शब्द का एकार्थक कैसे कहा?
उ. यहाँ पर्यायवाची शब्द रूप एकार्थता नहीं है किंतु एक सामायिक शब्द की निष्पत्ति के लिए चारों अवयवों का प्रयोग होता है, इसलिए एकार्थ कहा है।

(ii) यहाँ मधुर परिणाम सामान्य से शक्कर वि. का जानना। विशेष से तो किसी को कड़वा भी मधुर की तरह लगता है।

प्रत्ययगीरीय
टीका अव. सामायिक के पर्यायवाची शब्द –
नि. गा. 1046 समता सम्यक्त्व प्रशस्त शांति शिव हित शुभ अनिन्द्य अजुगुप्सनीय अगर्हित अनवद्य, ये भी एकार्थक हैं।

★ समता – राग द्वेष में मध्यस्थ होने से।
सम्यक्त्व – ज्ञानादि त्रिक का प्रयोजन होने से।
प्रशस्त – मोक्ष साधक होने से।
शांति – मिथ्यात्वादि दावानल बुझाने से।
शिव – उपद्रव न करने वाला होने से।
हित – परिणाम में सुख लाने वाला होने से। [शिव-हित की जगह सुविहित – हरिभद्रीय टीका]
शुभ – शुभ अध्यवसायात्मक होने से।
अजुगुप्सित – प्रशम रूप होने से।
अगर्हित – परम मुनियों से भी सेवित होने से।
अनवद्य – सावद्य योग का पच्चक्खाण होने से।

★ प्र. निरुक्ति द्वार में पर्यायवाची कहे तो यहाँ पुनः क्यों कहे (देखें pg. 19 पर)?
उ. 1. वहाँ एक ही अर्थ के पर्यायवाची कहे। यहाँ अन्य-अन्य वाक्यों से अर्थ का निरूपण किया है।
[अर्थात् सामायिक से समता आए इसलिए उसे समता कहते हैं, उससे सम्यक्त्व होता है इसलिए उसे सम्यक्त्व कहते हैं...)
2. असंमोह के लिए।

Date :

3. प्रतिशब्द अन्वर्थ के भेद से अनंत पर्याय होते हैं, यह बताने के लिए (हरिभद्रीय टीका)

अव. चालना कहते हैं — (देखें Pg 123 सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति की अव.)

गा.1047 ~~कारक~~ कारक कौन है? करता हुआ, कर्म कौन है? जो किया जाए, कारक-करण अन्य ~~है~~ है या अनन्य है? ऐसा आक्षेप (प्रश्न) जानना।

★ 'करोमि राजन्! घटं' ऐसा कहने पर कुलाल कर्ता, घट कर्म, दंडादि करण है। वैसे 'करेमि भंते! सामाइयं' कहने पर कर्ता, कर्म, करण कौन है?

यहाँ आत्मा ही कर्ता है, गुणरूप सामायिक कर्म है, उद्देशादि वचन ~~दंडादि~~ करण है।

★ कर्ता-करण-कर्म (चशब्द से) अन्य है या अनन्य? ~~1.~~ यदि अन्य है तो सामायिक वाले को भी सामायिक के फल मोक्ष का अभाव होगा, मिथ्यादृष्टि की तरह। यदि अनन्य है तो उसकी उत्पत्ति-विनाश से आत्मा की भी उत्पत्ति-विनाश होगा।

अव. प्रत्यवस्थान —

गा.1048 मेरे मत में आत्मा कारक है, सामायिक कर्म है, आत्मा ही करण है। परिणाम होने पर आत्मा सामायिक ही है, यह प्रसिद्धि (उत्तर) है।

★ आत्मा कर्ता है - स्वतंत्रता से प्रवृत्त होने से। सामायिक कर्म है। करण भी आत्मा ही है। तो भी उक्त दोषों का असंभव है।

★ परिणाम होने पर आत्मा सामायिक है —
परिणाम = पूर्वरूप के अपरित्याग पूर्वक उत्तररूप की आपत्ति।
ऐसा परिणाम होने पर आत्मा नित्यानित्यादि अनेकरूप होती है, यदि अनेकरूप न मानो तो आत्मा परिणामी नहीं होगी। यह अनेकरूपता द्रव्य-गुण-पर्याय ~~की~~ के भेदाभेद से होती है, अन्यथा यदि भेदाभेद न मानो तो सकल व्यवहार के उच्छेद की आपत्ति होगी।
भेदाभेद की सिद्धि —

(1) यदि गुण-गुणी का एकांत भेद मानो तो निश्चित गुण मात्र का ज्ञान होने पर नियत गुणी विषयक संशय नहीं होना चाहिए —

eg. कोई वृक्ष की डालियों के छिद्र में से मात्र सफेद रंग देखे तो उसे संशय होता

Date :

है कि यह ध्वजा है या बगुला है? यदि एकांत भेद मानो तो ऐसा संशय नहीं होना चाहिए, अन्य सब वस्तु का भी संशय होना चाहिए क्योंकि जैसे ध्वजा-बगुले से सफेद रंग का भेद है, वैसे सभी वस्तु से है। ~~अत~~ किंतु देखने वाले को कुछ नियत वस्तु का ही संशय होता है अतः यह सिद्ध है कि उस गुण का नियत गुणी के साथ अभेद भी होता है।

(2) यदि एकांत अभेद मानो तो गुण ग्रहण करने पर गुणी विषयक संशय होना ही नहीं चाहिए क्योंकि गुण ग्रहण होने पर गुणी भी ग्रहण हो ही गया। किंतु ऐसा नहीं होने से सिद्ध है कि गुण-गुणी का एकांत अभेद नहीं है।

ऐसे भेदाभेद होने से कर्ता-कर्म-करण में एकांत अन्यत्वानन्यत्व नहीं है।

~~अव. इसी बात को कहते हैं:-~~

अव. परिणाम पक्ष होने पर एकत्व और अनेकत्व दोनों में कर्त-कर्म-करण व्यवस्था घटाते हैं:-

गा.1049 एकत्व में eg. मुष्टिं करोति, अनेकत्व में घटादि करोति। यदि गुण का एकांत भेद मानो तो ~~गुण का~~ क्या किससे जुड़ा है?

★ एकत्व में - 'मुष्टिं करोति'
कर्ता - देवदत्त, कर्म - उसका हाथ, करण - उसका प्रयत्न।

★ अनेकत्व में - 'घटं करोति' कुलाल, घट, दंडादि।

★ यहाँ आत्मा - सामायिक में कथंचित् भेद है, एकत्व की तरह।
यदि एकांत भेद मानो तो गुण गुणी से जुड़ा न होने से आत्मा को ज्ञानादि गुणों का संवेदन नहीं होगा। अतः कथंचित् भेदाभेद है।

★ चालना-प्रत्यवस्थान कहे गए।

टीप्पणक → 9. चालना प्रत्यवस्थान में कर्तृ वि. का स्वरूप पूछते हुए पर (पूर्वपक्ष) को और जवाब ~~आपते~~ देते सूरि को, दोनों को पुनरुक्त दोष है क्योंकि ये सब 'आत्मा ही सामायिक है' वि. में आ चुका है (देखें भा.2 में गा. 790 Pg 82 पर)।

(iii) देखें चूर्णि Pg. 158

Date :

उ. यहाँ पुनरुक्तता नहीं है क्योंकि पूर्वपक्ष और आचार्य स्वरूपपृच्छा और स्वरूप कथन नहीं कर रहे हैं बल्कि वहाँ उपोद्घात में कहे स्वरूप का खंडन करने यहाँ पूर्वपक्ष चालना कर रहा है और आचार्य उसका उत्तर देने के लिए पुनः कह रहे हैं। ~~किंतु आचार्य स्वरूपकथन~~

प्रत्यगिरीय टीका अव. चालना प्रत्यवस्थान कहे। D. सामायिक द्वार पूर्ण। E. सर्व द्वार (देखें द्वार गा. 1029 Pg. 123) —

गा. 1050 (प्रतिद्वारगा.) सर्व शब्द के 7 निक्षेप — 1. नाम 2. स्थापना 3. द्रव्य 4. आदेश 5. निरवशेष 6. सर्वघना 7. भाव। स्रियते इति सर्वः (औणादिक व प्रत्यय)।

अव. 1.2. नाम-स्थापना सुगम। 3.4.5. द्रव्य-आदेश-निरवशेष सर्व →

भा. 186 द्रव्य में सर्व-असर्व के साथ द्रव्य-देश के 4 भांगे। आदेश में सर्वग्राम। निरवशेष में सर्व 29. का है —।

(iii) ★ द्रव्य सर्व → जब अंगुली वि. द्रव्य सभी अवयवों से पूर्ण विवक्षित की जाए तब सर्व कहे जाते हैं। उसका कोई देश जब सभी अवयवों से पूर्ण विवक्षित हो तब वह देश भी सर्व कहा जाता है।

अतः 4 भांगे —

	द्रव्य	देश	eg.
(a)	सर्व	सर्व	संपूर्ण उंगली, संपूर्ण पर्व
(b)	सर्व	असर्व	" " , देशोन पर्व
(c)	असर्व	सर्व	देशोन उंगली, संपूर्ण पर्व
(d)	असर्व	असर्व	" " , देशोन पर्व

★ आदेश यानि उपचार। उपचार बहुतर या प्रधान देश में भी किया जाता है eg. बहुत घी खा लेने पर, थोड़ा बचा होने पर ऐसा कहते हैं — सर्व घी खा लिया है (बहुतर); गाँव के प्रधान जाने पर कहते हैं सर्व ग्राम गया (प्रधान)।

★ निरवशेष सर्व 29. का है —

भा. 187 सर्वपरिशेष eg. सर्व देव अनिमेष हैं। तद्देशापरिशेष eg. सभी असुर काले हैं।

★ सर्वपरिशेष सर्व यानि ~~कोई~~ सर्व में व्यभिचार न हो eg. सभी देव अनिमेष आँख वाले होते हैं, इसमें कोई व्यभिचार नहीं है।

★ तद्देशापरि~~सर्व~~शेष यानि सर्व के कोई एक देश में व्यभिचार न हो eg. देवों की एक

Date :

निकाय असुर, वे सभी काले होते हैं।

अव. 6. सर्वधत्ता सर्व –

गा. 188 सर्वधत्ता 2प्र. जीव, अजीव। द्रव्य में सर्वघटादि आते हैं, सर्वधत्ता समस्त वस्तु में व्याप्य है।

★ 1. सर्वधत्ता = सर्व जीवाजीवादि वस्तु धत्तं-निहितं यस्यां विवक्षायां ⇒ जिस विवक्षा में जगत् की सभी वस्तु का ग्रहण कर लिया है।

2. सर्वं दधाति सर्वधं, तं आत्तं यस्यां विवक्षायां सा सर्वधात्ता ⇒ सभी वस्तु को धारण करने वाली विवक्षा।

प्र. धा धातु का हि आदेश होने से 'हितं' होता है, धत्त कैसे हुआ?

उ. 1. पृषोदरादि में होने से।

2. धत्त शब्द डित्थ की तरह व्युत्पत्ति बिना का यदृच्छा शब्द है।

सर्वधत्ता सर्व यानि जगत् की सभी वस्तु।

★ प्र. द्रव्य सर्व और सर्वधत्ता सर्व में क्या अंतर?

उ. द्रव्य सर्व में घटादि सभी द्रव्य आते हैं। यहाँ जीव-अजीव सभी द्रव्य हैं।

अव. 7. भाव सर्व –

गा. 189 भाव में उदय स्वरूप सभी औदयिक भाव हैं इसी प्रकार शेष भाव भी जानना। यहाँ क्षायोपशमिक भाव और निरवशेष सर्व से अधिकार है।

अव. E. सर्व द्वार पूर्ण (देखें द्वार गा. 1029 pg 123)। F. सावद्य द्वार –

गा. 1051 जो गर्हित कर्म है, वह अवद्य अथवा क्रोधादि 4 अवद्य हैं। उस अवद्य के साथ जो योग (व्यापार), उसका पच्चक्खाण होता है।

अव. F. सावद्य द्वार पूर्ण। G. योग द्वार –

गा. 1052 द्रव्य में मन-वचन-काया के योग्य द्रव्य। भाव में 2प्र. – सम्यक्त्वादि प्रशस्त योग, इतर विपरीत अप्रशस्त योग।

★ योग 2प्र. – द्रव्य और भाव।

Date :

★ जीव द्वारा गृहीत या अगृहीत या स्वव्यापार में अप्रवृत्त ऐसे गृहीत द्रव्य द्रव्ययोग।

अव. G. योगद्वार पूर्ण (देखें द्वार गा. 1029 Pg 123) | H. 'पच्चक्खामि' द्वार –
इसके 2 रूप हैं - प्रत्याख्यामि, प्रत्याचक्षे। अभिमुखं ख्यापनं सावद्ययोगस्य प्रत्याख्यानं
प्रतिषेधस्य आदरेण अभिधानं प्रत्याचक्षे।
प्रत्याख्यान के 6 निक्षेप - नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र अदित्सा भाव। नाम स्थापना सुगम।
द्रव्य, प्रत्याख्यान –

गा.1053 द्रव्य में निह्नवादि। क्षेत्र में देश के बाहर किए हुए। भिक्षादि न देने पर अदित्सा। भाव 2प्र. का – ।

★ भाव प्रत्याख्यान = सावद्य योग का प्रत्याख्यान।

गा.1054 श्रुत - नोश्रुत प्रत्याख्यान। श्रुत प्र. - 2प्र. पूर्व, अपूर्व। नोश्रुत प्र. - मूल और उत्तरगुण में।

★ श्रुत पूर्व श्रुत प्रत्याख्यान - प्रत्याख्यान नामक पूर्व।
अपूर्व " " - आतुरप्रत्याख्यानादि।

★ नोश्रुत प्रत्याख्यान = श्रुत प्रत्याख्यान से अन्य। वह 2प्र. मूलगुण, उत्तरगुण।
मूलगुण प्रत्याख्यान 2प्र. - देश, सर्व प्रत्याख्यान। देश प्र. श्रावकों को, सर्व प्र. साधुओं को।
यहाँ सर्व प्रत्याख्यान से अधिकार है।

★ प्रत्याख्यान में उदाहरण - राजपुत्री ने वर्ष तक मांस न खाने का प्र. पच्चक्खाण लिया x पारणे में बहुत जीवों का घात किया x साधु विचरते हुए आए x मांस नहीं व्होरा x राजपुत्री - आपका वर्ष अभी तक पूरा नहीं हुआ x साधु - हमें तो यावज्जीव का प्रत्याख्यान है x धर्मकथा की x राजपुत्री ने दीक्षा ली x x
पहले द्रव्य प्रत्याख्यान, फिर भाव प्रत्याख्यान।

अव. H. प्रत्याख्यान द्वार पूर्ण। I. यावज्जीवया द्वार –

गा.1055 यावत् शब्द अवधारण अर्थ में, जीवन भी प्राणधारण अर्थ में कहा गया। प्राणधारण तक पाप की निवृत्ति, ऐसा यहाँ अर्थ है।

★ प्राणधारण तक पाप की निवृत्ति करता हूँ। उसके बाद विधि भी नहीं, प्रतिषेध भी नहीं।

Date :

यदि परभव में सावद्य योग की विधि करें तो पाप की आशंसा रूपी दोष होगा। यदि प्रतिषेध करें तो देव वि. में उत्पन्न होने पर व्रतभंग होगा।

★ यहाँ जीव शब्द प्राणधारण रूप क्रिया अर्थ में लेना, 'जीवति इति जीव:' ऐसे कर्ता अर्थ में नहीं।

अव. 'जीवन' शब्द के 10 निक्षेप–

गा. 1056 1. नाम 2. स्थापना 3. द्रव्य 4. ओघ 5. भव 6. तद्भव 7. भोग 8. संयम 9. यश 10. कीर्ति।

अव. 1-2. नाम-स्थापना सुगम। 3. द्रव्य 4. ओघ 5. भव 6. तद्भव –

भा. 190 द्रव्य में सचित्तादि। ओघ में आयु सद्द्रव्यता। भव में नारकादि। तद्भव में उसी भव में पुन: उत्पत्ति।

(iv) ★ द्रव्य जीवन = सचित्त, अचित्त, मिश्र में से जिस द्रव्य के अधीन हो, वही उसका द्रव्य जीवन।

★ ओघ जीवन = आयुकर्म के पुद्गलों के साथ वर्तता ऐसा चारों गति में सामान्य जीवन।

★ भव जीवन = नारकादि सभी जीवों का आयुष्य।

★ तद्भव जीवन = स्वकायस्थिति अनुसार उसी भव में पुन: पुन: उत्पन्न होना।

अव. 7.-10. भोग संयम यश कीर्ति –

भा. 191 भोग में चक्री आदि। संयमजीवन साधु को। यश-कीर्ति भगवान् को। संयम-नर जीव से अधिकार है।

(v) ★ अन्य मत- यश-कीर्ति एक ही है, दसवां भेद असंयम जीवन अविरत जीवों के लिए)

★ J. त्रिविध द्वार–

त्रिविधं – कर्म में द्वितीया विभक्ति, योग शब्द का विशेषण (देखें सूत्र pg. 121)।

त्रिविधेन – करण में तृतीया विभक्ति, तीन करण सूत्र में ही बताते हैं- मन, वचन, काया। इस करण का कर्म योग है।

Date :

39. के योग भी सूत्र में ही बताते हैं – न करोमि, न कारयामि, कुर्वन्तं अपि अन्यं न समनुजानामि।

★ प्र. सूत्र में 'तिविहं तिविहेणं' उद्देश पहले कर्म का किया। विवरण में निर्देश पहले 'मणेणं वायाए....' करण का किया। ऐसा क्यों?

उ. योग करण के वश है, ऐसा बताने के लिए। करण होने पर ही योग होता है, करण न होने पर योग भी नहीं होता।

प्र. 'न करोमि...' वि. में 'अन्यं अपि' दो पद अतिरिक्त हैं, क्योंकि 'कुर्वन्तं न समनुजानामि' से ही अर्थ समझा जाता है।

उ. वह अनुक्त अर्थ के संग्रह के लिए है। अपि शब्द संभावन अर्थ में है, दोनों के मध्य में रहा वह शब्द यह संभावना करता है- करते हुए को अनुमति नहीं दूंगा, कराते हुए को, अन्य की अनुमोदना करते हुए को भी मैं अनुमति नहीं दूंगा। यह वर्तमान काल में हुआ। ऐसे ही भूत और भविष्य भी लेने – अतीत काल में करने वाले को, कराने वाले को, अनुमोदना करने वाले को, भविष्य में करने वाले को.... वि.।

क्रिया- क्रियावान् का एकांत अभेद नहीं है, यह बताने के लिए अन्य पद का ग्रहण किया।

अव. 'त्रिविधं त्रिविधेन' के भांगे-

गा.1057 ~~समिति गुप्ति गृहस्थ~~ 'तिविहं तिविहेणं' के समिति-गुप्ति से 147 भांगे होते हैं। इस प्रकार सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति का विस्तरार्थ पूर्ण हुआ।

★★ प्र. भांगे बनाने की रीत- 'तिन्नि तिया...' गाथा –

1	2	3	4	5	6	7	8	9	
3	3	3	2	2	2	1	1	1	'तिविहं'
3	2	1	3	2	1	3	2	1	'तिविहेणं'
1	3	3	3	9	9	3	9	9	

कुल 9 मूल भेद में 49 भांगे हुए –

1. मन- वचन- काया से न करेमि, न कारवेमि, न अनुजानामि। 1
2. न करेमि, न कारवेमि, न अनुजानामि * मन-वचन, मन-काया, वचन-काया। 3
3. न करेमि, न कारवेमि, न अनुजानामि * मन, वचन, काया। 3
4. मन-वचन-काया * न करेमि-कारवेमि, न करेमि-अनुजानामि, न कारवेमि-अनुजानामि। 3

Date :

5. न करेमि-कारवेमि * मन-वचन, मन-काया, वचनकाया।
न करेमि-अनुजानामि * " " " ।
न कारवेमि-अनुजानामि * " " " । } 9

6. न करेमि-कारवेमि * मन, वचन, काया।
न करेमि-अनुजानामि * " " " ।
न कारवेमि-अनुजानामि * " " " । } 9

7. मन-वचन-काया * न करेमि, न कारवेमि, न अनुजानामि। 3

8. न करेमि * मन-वचन, मन-काया, वचन-काया।
न कारवेमि * " " " ।
न अनुजानामि * " " " । } 9

9. न करेमि * मन, वचन, काया।
न कारवेमि * " " " ।
न अनुजानामि * " " " । } 9

इन 49 भांगों को 3 काल से गुणाकार करने पर 147 भांगे हुए। ये भांगे गृहस्थ के पच्चक्खाण के हैं।

प्र. सर्वसावद्य का अधिकार होने से ये गृहस्थ के कैसे?
उ. सामान्य से प्रत्याख्यान के हैं ~~+ सर्व-सावद्य भेद कहे हैं~~। (सर्वसावद्य हो या सावद्य हो, उससे भेदों में फर्क नहीं पड़ता)

प्र. पहला भांगा देशविरत को कैसे होगा, उसे अनुमति का पच्च. तो होता नहीं?
उ. स्वविषय के बाहर वह भी अनुमति का पच्च. कर सकता है वि. उपोद्घात निर्युक्ति में कह चुके हैं। (देखें भा. 2 में Pg. 91 पर)

प्र. मन से कैसे करण, करावण या अनुमति होगा?
उ. सावद्य योग का मनन करना करण है। 'यह ऐसा करे' ऐसा विचारना मन से करावण हुआ। 'इसने अच्छा किया' यह मन से अनुमति हुई।

★ अब साधु के प्रत्याख्यान के 27 भांगे—
न करेमि, न कारवेमि, न अनुजानामि × मन-वचन-काया × 3 काल = 27
(3 योग) (3 करण)

Date :

यह प्रत्याख्यान समिति-गुप्तियों से ही होता है।
अन्य मत – ये 8 प्रवचन माता 'करेमि भंते' में ग्रहण की है। 'करेमि भंते! सामाइयं' पद से 5 समिति और 'सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि' पद से 3 गुप्ति का ग्रहण किया है।
सामायिक ~~औ~~ और 14 पूर्वों का मूल होने से या सामायिक और 14 पूर्व इसमें ही समा जाने से ये 8 प्रवचन माता कही जाती है।

★ सूत्रस्पर्शिक निर्युक्ति ~~का~~ अधिकतर कही गई। अब थोड़ी ही बाकी होने से निर्युक्ति 'तुल्यादंड न्याय' से कहते हैं कि सूत्रस्पर्शिक-निर्युक्ति का विस्तरार्थ कहा गया।

-चूर्णि
→ (i) (Pg 146) – भंते शब्द का एक और विकल्प – भ्रांत 6 निक्षेप। नाम-स्थापना सुगम। द्रव्य भ्रांत – द्रव्य से भ्रष्ट हुआ या द्रव्य से भ्रमित हुआ। क्षेत्र – क्षेत्र से भ्रमित। काल – काल से भ्रमित। भावभ्रांत 2प्र. – (a) स्थानभ्रांत – ~~ईश्वरादि स्थान~~ ईश्वरादि पद से भ्रष्ट (b) गुणभ्रांत – 2प्र. – (a₁) – अप्रशस्त गुणभ्रांत = ज्ञानादि गुणों से भ्रांत (b₂) – प्रशस्त ऐसा गुणभ्रांत – अज्ञानादि दुर्गुणों से भ्रांत। यहाँ प्रशस्त गुण भ्रांत का अधिकार है।

→ (ii) (Pg 147) – प्र. भंते! कौन कहता है? उ. गौतम स्वामी भगवान् को कहते हैं; शेष स्वयं के गुरु को कहते हैं।
प्र. यदि गुरु परोक्ष हों (कालकर गए हों) तो किसका आमंत्रण करना?
उ. सेवा 2प्र. प्रत्यक्ष राजादि की, परोक्ष – अन्यत्र गए हुए की आज्ञा मानने रूप। अथवा जैसे विद्या साधता हुआ पूर्वाचार्यों को याद करता है, वैसे याद करना।
अन्य मत – स्वयं को ही भंते कहना।

→ (iii) (Pg 158) – मलयगिरि सूरिजी द्वारा लिखित द्रव्य सर्व की चतुर्भंगी यहाँ अन्य मत में है तथा द्रव्य सर्व में 4 भांगे अन्य प्रकार हैं किंतु स्पष्ट नहीं है। (Printing Mistake संभव है)

→ (iv) (Pg 155) – द्रव्य जीवन के प्र. – कोई कहे मेरा जीव पुत्र के अधीन है, यह सचित्त द्रव्य जीवन। ऐसे सोने वि. अचित्त और पट्टे सहित अश्वादि मिश्र जानना।
(v) (Pg 155) – यशकीर्ति जीवन – दृ. महावीर स्वामी की कीर्ति त्रिलोक में आज भी फैली हुई है।

इति श्री-आवश्यकसूत्रस्य भद्रबाहुस्वामिकृतनिर्युक्तौ मलयगिरीयविवरणं हारिभद्रीयावश्यके चूर्णौ मलधारिहेमचन्द्रसूरिकृतटीप्पणके च अर्थान्तरैः विशेषैश्च सह निर्युक्तिक्रमाङ्क-सप्तपञ्चाशदुत्तरसहस्रं (1057) यावद्धिन्दीभाषामयं लिखितं ।

समाप्तिवासरः का.सु. ७, वि.सं. 2074
स्थानम् - श्रीकैलाशनगरजैनसङ्घः, सूर्यपुरी नगरी (सुरत)